Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 के क्रियान्वयन में आने वाली चुनौतियाँ

अजय कुमार,
शोध छात्र–राजनीति विज्ञान विभाग,
तिलकधारी स्नातकोत्तर महाविद्यालय जौनपुर, उत्तर प्रदेश

सारांश :–

सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 के द्वारा भारत के नागरिको को केंद्र, राज्य और जिला और उप–जिला स्तर के साथ–साथ, जिला, खण्ड एवं ग्रामीण स्तर पर निकाय, पंचायती राज एवं शहरी स्थानीय संस्थानों, छावनी बोर्ड, जिला ग्रामीण विकास, एजेंसियों, बाहरी और ग्रामीण राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन और सहकारी निकाय जैसे केंन्द्रीय सहकारी बैंक और कृषि ग्रामीण विकास बैंक, आदि के लोक प्राधिकरणों से जानकारी प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है।

इस अधिनियम के लागू होने के बाद पिछले 18 वर्षों के दौरान इसमें कमियाँ आई हैं, जिसको नजरअंदाज नहीं किया जा सकता हैं। जैसे देखा जाए तो ''पर्याप्त रूप से वित्त पोषित प्रावधान को सही रूप से स्पष्ट नहीं किया गया हैं। इससे भी जरूरी यह है कि मानवाधिकार शासन की स्थापना के लिए प्रतिबद्ध शासन की मूल आवश्यकता वाले शब्द जीवन और स्वतंत्रता, भी अस्पष्ट है। उसी प्रकार देखा जाए तो प्रथम अपीलीय अधिकारियों की शक्तियों, भूमिकाओं और जिम्मेदारियों के बीच भी अस्पष्टता विद्यमान हैं।

अपीलो और शिकायतों के लिए अतिव्यापी आधारों के कारण भ्रम और बढ़ गया है। इसके अलावा, अवमानना के प्रावधान स्पष्ट रूप से अनुपस्थित हैं या उन्हें कम करके आंका गया हैं। सूचना आयोग द्वारा अपील पर निर्णय लेने के लिए समय–सीमा पर पूर्ण मौन निःसंदेह महत्वपूर्ण भ्रम है, जो प्रायः कानून के उद्देश्य को ही असफल कर देता है, उतना ही आवश्यक जितने अन्य, सूचना आयुक्तों की नियुक्ति भी कुछ मुद्दों पर वांछित होने के लिए बहुत कुछ छोड़ देती है। उन्हें या तो वरिष्ठ सेवानिवृत्त नौकरशाहों मे से उनकी राजनीतिक निष्ठा के लिए योग्यता के आधार पर चुनते हैं। 2019 में सूचना के अधिकार अधिनियम में पहला संशोधन करके केन्द्र और राज्य के मुख्य सूचना आयुक्तों और केन्द्र के सूचना आयुक्तों के वेतन, भत्ता और सेवा के अन्य नियमों और शर्तों को निर्धारित करने का अधिकार दिया है, जिसने आयोगों को कमजोर हैं और अपने कर्तव्यों के निर्वहन में उनकी तटस्थता पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते हैं।

सूचना के अधिकार की प्रभावी व्यवस्था होने के वास्तविक महत्व और आवश्यकता को जिला स्तर पर प्रशासन के ऊपर बताएं गए अनेकों कार्यों के निर्वहन के विषय में समझा जा सकता हैं। इस अत्याधुनिक स्तर पर कानून का केवल सुचारू और तत्पर शुरुआत ही जवाबदेही और पारदर्शिता के ऊँचे आदर्शों की सेवा कर सकता है, जो अधिनियम के अंतर्गत निहित हैं। आरटीआई के क्रियान्वयन की अन्य बाधाएँ निग्न है –

I. व्यवहार संबंधी मुद्दे वैसे तो विभिन्न राज्यों – वैसे तो विभिन्न राज्यों के जिला प्रशासन के अधीन सभी विभागों में आर.टी.आई. की व्यवस्था लागू कर दी गई है, लेकिन इसके भावनारूप कार्य नहीं किया जा रहा है। जिला स्तर के अधिकारियों द्वारा इसको अभी तक आत्मसांत नहीं किया

गया हैं। अभी इन सभी की अपारदर्शिता, मनमानी, गोपनीयता, धार्मिकता, कम जवाबदेही की भावना को छोड़ना होगा। वे अभी भी नागरिकों को उचित जानकारी देने और उन्हें सशक्त बनाने के लिए पारदर्शिता के आचरण को नहीं अपना पाएँ हैं। नई भूमिका का विरोध राज्य लोक सूचना अधिकारी की नियुक्ति के साथ ही शुरु हो जाता है, क्योंकि कई अनिच्छुक व्यक्तियों को उनकी सहमति के बिना इस कर्तव्य के निर्वहन के लिए नियुक्त किया जाता हैं। राज्य लोक सूचना अधिकारी इस भूमिका को एक अत्याधिक और अकृतज्ञ बोझ के रूप में, मानते हैं और उनमें से अधिकतर लोग अपनी भूमिका अनिच्छा से और मजबूरी से निभाते हैं तथा विकल्प से बाहर नहीं होते हैं क्योंकि उन्हें उन अतिरिक्त जिम्मेदारियों के लिए अतिरिक्त वित्तीय लाभ नहीं मिलता हैं।

II. क्षमता की कमी राज्य सूचना अधिकारियों या सहायक राज्य लोक सूचना अधिकारियों को इसके विभिन्न प्रक्रियाओं और कार्यविधि के बारे में पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए केवल साधारण ज्ञान या सामान्य प्रशासनिक अनुभव का प्रयोग करके कार्य को पूरा नहीं किया जा सकता हैं। देखा जाए तो इसके निष्क्रिय होने में अधिकारियों की प्रदर्शन योग्यता और अक्षमता में अधिकतर कमी पाते हैं। और अधिकारी प्रशिक्षण लेने के भी इच्छुक नहीं है।

III. प्रशासनिक मुझे कर्मचारियों की कमी ने आर.टी.आई. की प्रभावशीलता को भी प्रभावित किया है। कुछ राज्य लोक सूचना अधिकारी, उन आवेदनों की बारंबारता पर शोक प्रकट करते हैं। जो उन्हें लगता है कि कुछ आर.टी. आई. कार्यकर्ताओं ने उन्हें परेशान करने के लिए आवेदन किया हैं। इसके अलावा विभागों में अपेक्षाकृत कनिष्ठ अधिकारियों के निर्देशो के आधार पर अपनी भूमिका निभाना पड़ता है।

राज्य लोक सूचना अधिकारी को अपने वरिष्ठ अधिकारियों से भी पर्याप्त समर्थन नहीं मिल पाता है और ना ही सहायक राज्य जन सूचना अधिकारी और अन्य सहयोगियों से उनकी भूमिका के प्रदर्शन के लिए आवश्यक सहायता मिलती हैं। उन्हें प्रायः फोटोकॉपियर, फैक्स मशीन, अलग कार्यालय, सचिवालय सहायता, कम्प्यूटर इंटरनेट सुविधा इत्यादि सुविधाएँ भी नहीं प्रदान की जाती है।

जिला प्रशासन के विभिन्न विभागों में प्रथम अपीलीय अधिकारियों से अपने व कर्तयो को बोझ समझा जाता है। उनके विभाग के राज्य बन सूचना अधिकारियों के निर्णय के विरुद्ध सूचना प्राप्त करने वालों के द्वारा की गई है पहली अपील के लिए अपने विचार के आवेदन के लिए बहुत कम समय हैं।

प्रक्रियात्मक मुद्दे प्रथम अपीलीय प्राधिकारियों के निर्णयों के विरुद्ध सूचना चाहने वालों की द्वितीय अपील पर पर निर्णय लेने के लिए समय–सीमा की कमी प्रभावी सूचना के अधिकार व्यवस्था के पग में बहुत बड़ी बाधा साबित हुई है। उनके द्वारा अलग अलग और विरोधाभासी निर्णयो ने संशय को और अधिक बढ़ा दिया है। जिससे राज्य जन सूचना अधिकारी और सूचना प्राप्त करने वालों की भूमिकाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।

शुल्क जमा करने में संशय की स्थिति से बचने के लिए, प्रत्येक लोक प्राधिकरण में एक रसीद अग्रभाग होना चाहिए, जिसमें आवेदन शुल्क जमा किया जा सकें। कुछ राज्यों में निर्धारित बैंक ड्राफ्ट की अपेक्षा, पोस्टल ऑर्डर, चेक, गैर–न्यायिक टिकटों और बैंकर के डेविट और क्रेडिट कार्ड से भी भुगतान करने की अनुमति है।

सूचना के अधिकार अधिनियम को लागू करने के लिए विभिन्न मुद्दों पर ध्यान देने की आवश्यकता हैं। सुशासन की बदलती माँग, भ्रष्टाचार को समाप्त करने वाले पहल और जनता की सहभागिता बढ़ाने के साथ ही साथ नागरिकों और लोक प्राधिकारियों को इस अधिनियम के विषय में जागरुक करने के लिए जागरूकता अभियान की आवश्यकता है। क्योंकि केंद्रीय लोक सूचना अधिकारी अगर प्रशिक्षित नहीं है तो सूचना प्रदान करने में आवेदनकर्ता को दिए गए जवाब की गुणवत्ता प्रभावित होती हैं। इसके क्रियान्वयन को सफल बनाने के लिए नागरिकों को सहभागी बनाने पर बल दिया जाना चाहिए। नागरिकों की सहभागिता सुनिश्चित करने के लिए केवल आवधिक चुनाव करना ही पर्याप्त नहीं हैं बल्कि नागरिकों को निर्णय प्रक्रिया में शामिल करके ही उनका लगातार वैधानिक रूप प्रदान किया जा सकता हैं। जिसका सबसे बेहतर रास्ता है कि सरकार की कार्य प्रणालियों और उसके कार्य करने के तरीकों से जुड़ी हुई सभी जानकारियों को नागरिकों से निर्वाह रुप से साझा की जाएं।

जिससे नागरिक केवल जानकारी ही नहीं प्राप्त करेंगे बल्कि वे यह समझ सकेंगे कि सरकार ने जो भी निर्णय लिया है, उसका आधार क्या है? और साथ ही सरकार से सवाल, जवाब करने का भी अवसर प्रदान करेगा।

प्रशासनिक पारदर्शिता और उत्तरदायित्व में बाधाएँ–

शासन प्रणाली से जुड़े हुए लगभग सभी आँकड़े या रिकॉर्ड अत्यधिक महत्वपूर्ण होते हैं। नौकरशाही और सरकारी कार्यों की कार्यकुशलता रिकॉर्ड में रखी गई सूचनाओं की पहुँच पर आधारित होती हैं। इसके साथ ही सरकारी कार्यों में कानून को नियम और जवाबदेही के लिए उचित दस्तावेज रखना अनिवार्य हैं। इसलिए रिकार्ड सूचना के अधिकार का मूल आधार है। सूचना का अधिकार कानूनों के सफल क्रियान्वयन में रिकॉर्ड, प्रबंधन, भंडारण और संग्रह करने के लिए एक प्रभावपूर्ण व्यवस्था की महत्ता है। यद्यपि उचित रिकॉर्ड के अभाव में विधि के द्वारा निश्चित समय–सीमा के अन्दर आवेदकों को जवाब देने में कठिनाई होगी, जो इस अधिनियम को कमजोर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

सूचना का अधिकार अधिनियम की धारा 4(1) के तहत, एक लोक प्राधिकरण को ''सभी अभिलेखों को संग्रहित करने की आवश्यकता है, जो इस अधिनियम के अधीन सूचना का अधिकार प्रदान करता है। इसके तहत सभी अभिलेखों को उचित स्थान एवं विषय के अंदर कम्प्यूटरकृत करना होगा, संसाधनों की, उपलब्धता, कम्प्यूटरकृत और पूरे देश में विभिन्न प्रणालियों पर एक नेटवर्क से एकीकृत है। जिससे अभिलेखों तक पहुँचने में आसानी हो'' इसके साथ ही अभिलेखों का प्रबंधन भंडारण और मिलान ही नहीं बल्कि उसका वर्गीकरण और संग्रह के आधार पर भी होना चाहिए।

प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग ने सूचना का अधिकार कार्यान्वयन पर अपने प्रथम प्रतिवेदन सूचना का अधिकार : सुशासन की मास्टर कुंजी में बताया है कि कहीं न कहीं हमारी सूचना व्यवस्था की सबसे कम बोर कड़ी अभिलेख सुरक्षित रखने में नाकामी ही हैं। इसने देखा कि केन्द्रीय मंत्रालयों और विभागों में भी रिकॉर्ड की सुरक्षित करना भी एक समस्याग्रस्त क्षेत्र हैं। सरकार के अधीन कार्य करने वाली कई एजेंसिया और कार्यालयों में रिकॉर्ड रखने की प्रक्रिया पूर्ण रूप से गायब है।

और जहाँ पर है भी तो शायद ही कभी उनका पालन किया जाता है। अभिलेख सुरक्षा की प्रक्रियाओं को काफी समय से संशोधित नहीं किया गया हैं और सूची बनाना क्रमबद्ध करना और व्यवस्थित संचयन के कार्य विशेष रूप से अनुपस्थित हैं। इसके परिणामस्वरुप रिकॉर्ड के एकत्रित होने पर भी, जानकारी को सुगमतापूर्वक पुनः प्राप्ति भी कठिन और मुश्किल हो जाती हैं। इसके पूर्व ही दसवें वित्त आयोग ने भी इस

समस्या की देखते हुए अभिलेखों के संरक्षण के लिए राज्यों को विशेष अनुदान देने की सिफारिश की हैं। प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग के यह भी बताया कि कुछ लोक प्राधिकरणों के द्वारा अभिलेखों की सही तरीके से व्यवस्थित करने का विश्वसनीय कार्य किए है, लेकिन व्यापक स्तर पर देखा जाए तो ये परियोजनाएं कुछ ही स्थानों पर सीमित हो गई है। सूचनाओं को आसानी व सुगम रूप से प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि अभिलेखों के संग्रहण का उचित संयोजन किया जाए। अभिलेखों का क्रमबद्धीकरण, सूची और व्यवस्थित संग्रहण आवश्यक होना चाहिए। सभी आलेखों को बोधगम्य, तर्कसंगत और पुनः प्राप्त करने योग्य भागों में बदलने की जरूरत है इसके साथ रिकॉर्डों के डिजिटलीकरण करने लिए कुछ अनुदेश निर्मित करने की अत्यन्त आवश्यकता है। उचित रिकॉडे रखने के समन्वयन और परीक्षण के विभागों को लिए सरकारी पर्याप्त अधिकार, विशेषज्ञाता और जवाबदेही सुनिश्चित की जानी चाहिए।

RAAGS SAMYA द्वारा 2014 (Bhardwaj] 2014) के अध्ययन में बताया गया कि निश्चित समय पर सूचना प्रदान करने में विफल होने का सबसे बड़ा रोड़ा रिकॉर्ड प्रबन्धन की खराब स्थिति है जो लोक सूचना अधिकारी के द्वारा हमेशा झेलना पड़ता है। परमवीर सिंह बनाम पंजाब विश्वविद्यालय के मामले में (PRIA 2006) आयोग के अनुसार लोक प्राधिकरण को, अपने कार्यालयों के अंतर्गत प्रभावी रिकॉर्ड प्रबंधन प्रणाली धारा 4(1)() के तहत दिए गए सभी प्रावधानों के अनुरूप करने चाहिए, जिससे सूचनाओं की माँग होने पर तात्कालिक रूप से प्रदान की जा सके। इस करण के तहत आवेदक ने विश्वविद्यालय में किसी पद विशेष पर अभ्यर्थियों के चयन प्रक्रिया से संबंधित सूचना प्राप्त करने के लिए आवेदन किया था, लेकिन विश्वविद्यालय के लोक सूचना अधिकारी के द्वारा सही सूचना को पहचानने और सूचना के एकत्रीकरण, में लापरवाही के कारण उचित सूचना नहीं दिया गया। अन्ततः आवेदनकर्ता को भ्रामक सूचना दी गई। इस पर आयोग का सुझाव था कि विश्वविद्यालय को अपनी रिकॉर्ड प्रबंधन व्यवस्था को इस प्रकार व्यवस्थीकृत किया जाए जिससे नागरिकों को अविलम्ब जानकारी दी जा सकें।

इसलिए यह आवश्यक है कि आर. टी. आई. के उचित संचालन के लिए रिकॉर्ड प्रबंधन प्रणाली की समीक्षा और संशोधित की जाए। वर्तमान समय में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी में बहुत ही तीव्रता के साथ विकास हो रहा है, इसलिए जरूरी यह है कि रिकार्ड प्रबंधन दिशा–निर्देश इलेक्ट्रॉनिक रिकार्ड के प्रबंधन को सही करे। बिसके लिए निम्न चार चरणों पर ध्यान दिया जाना चाहिए –

- अभिलेख का निर्माण –
    - एक तार्कित, प्रलेखित व्यवस्था के अंदर इसकी नियुक्ति जो इस व्यवस्था को नियंत्रित करें तथा इसकी पुनः प्राप्ति की सुविधा देती हो।
    - निरंतर मूल्यांकन किया जाना, निपटारे अनुसूची में दर्ज किया गया और उचित निपटारे की कार्रवाई द्वारा नियत समय पर किया गया।
    - इसकी देखभाल और उपयोग, चाहे वह निर्माण अभिलेख कार्यालय, अभिलेख केन्द्र या अभिलेखीय भंडार में रखा जाए या इसका उपयोग इसके निर्माता या उत्तराधिकारी के कार्य में या किसी तीसरे पक्ष द्वारा किया जाए जैसे एक शोधार्थी या जनता के अन्य सदस्य के रुप में।

सूचना के अधिकार को सफल रुप से क्रियान्वित करने के लिए सरकार के द्वारा महत्वपूर्ण कदम उठाने की आवश्यकता हैं। इसीलिए कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग ने इन अनुदेशों के तहत लोक प्राधिकरणों

को भी यह निर्देश दिया है कि वे सूचना के त्वरित प्रकटीकरण को तीसरे पक्ष के द्वारा नियमित रुप से परीक्षण करवाएं।

सी.आई.सी. ने 2018 में (तिवारी और अन्सारी) 4 के माध्यम से प्रकटीकरण की पारदर्शिता परीक्षण करवाया जिससे यह ज्ञात होता है कि विभिन्न सरकारी विभागों ने कुछ महत्वपूर्ण सूचनाओं को अपनी वेबसाइटों पर पूर्ण रूप से प्रदर्शित नहीं की है। यह जानकारी निर्णय निर्माण प्रक्रिया, अधिकारियों की शक्तियों, कर्तव्यों, और जिम्मेदारियों का प्रत्यायोजन और उन्हें भुगतान किए गए मुआवजे की व्यवस्था से जुड़ी होती है।

इस समिति ने अपने प्रतिवेदन में सिफारिश की है कि इन उपकरणों की पारदर्शिता तैयारियों को निर्धारित करने के लिए लोक प्राधिकरणों का पूर्ण पारदर्शी परीक्षण ही एकमात्र हल हैं। इस प्रकार के परीक्षण के संचालन के लिए बड़ी तैयारी, प्रशिक्षित लेखा परीक्षकों, लेखा परीक्षा निरीक्षण के लिए एक संस्था और लेखा परीक्षा सिफारिशों के कार्यान्वयन के लिए निश्चित व्यवस्थाओं की आवश्यकता होती है। सूचनाओं के सक्रिय प्रकटीकरण को और अधिक मजबूत करने के लिए, जरूरी है कि कार्मिक व प्रशिक्षण विभाग और राज्य की नोडल एजेंसियों को, लोक प्राधिकरण की धारा 4 के सभी प्रावधानों के अनुपालन को निर्धारित करने के लिए लोक प्राधिकरणों की वेबसाइटों के मूल्यांकन के साथ आरंभ करना, जो अत्यन्त उपयोगी साबित हो सकता है। यह निर्धारित करेगा कि लोक प्राधिकरणों द्वारा वेबसाइटों पर विस्तृत रूप से सूचनाओं का प्रकटीकरण होता है और वेवसाईट की सावधानीपूर्वक डिजाइन और नियमित रूप से अपडेट की जाती है।

लोक सूचना अधिकारियों की गुणवता –

सूचना कि अधिकार अधिनियम के प्रभावी कार्यान्वयन, के लिए एक पूर्वापेक्षा लोक सूचना अधिकारियों की कार्यकुशलता है पी.आई.ओ. सूचना का भण्डार है आवेदनकर्ता को निश्चित समय में सूचना प्रदान करने का दायित्व सौंपा गया है और नागरिकों को आवश्यक मदत भी प्रदान की जाती है, जब भी सूचना ग्रहण करने वाले को आवश्यक जानकारी की जरूरत हो, उसे प्रदान की जाती हैं। हालांकि, कई अध्ययनों से यह पता चला है कि पी०आई. जो को निश्चित समयान्तराल में सूचना प्रदान करने के लिए चुनौती दी जाती हैं सी.पी. आई. ओ. को सूचना का अधिकार अधिनियम का उचित ज्ञान होना चाहिए और सूचना को प्रकट करने का सही दृष्टिकोंण होना चाहिए। सूचना का अधिकार कानून के प्रति सरकारी कर्मचारियों की मानसिकता को बदलने की जरूरत है, जिससे वे इसको भार ना समझे। लेकिन वर्तमान मामला कुछ और ही है, क्योंकि सी०पी०आई. ओ. के पद पर नियुक्त व्यक्ति के पास प्रायः सूचना का अधिकार आवेदन से निपटने के लिए आवश्यक ज्ञान की कमी होती है। पी.आई.ओ. के पास सूचना का अधिकार आवेदनों से समाधान के लिए कोई भी प्रशिक्षण नहीं है। जिसकी वजह से सूचना प्रदान करने में विलम्ब और जो सूचना प्रदान की जा रही है उसकी गुणवता में कमी होती हैं। जिससे सूचना प्राप्तकर्ता में असंतोष का प्रमुख कारण बनता है।

सी.पी.आई.ओ. कोई सांविधिक पद नहीं है, विभाग में अधिकारियों को लोक सूचना अधिकारी के दायित्वों के अलावा कई अन्य कर्तव्यों के निर्वहन की जिम्मेदारी दे दी जाती हैं, जिसके अंतर्गत किसी भी प्रकार का प्रोत्साहन भी नहीं दिया जाता है और सूचना प्रदान करने में किसी भी प्रकार का विलम्भ होता है तो दण्डात्मक कार्यवाई भी की जाती है।

सामान्यतः यह देखने को मिलता है कि अयोग्य व्यक्ति को सी. पी.आई.ओ. के रूप में नियुक्ति दे दी जाती है, जिसको आर.टी.आई. की जानकारी नहीं होती हैं। लोक सूचना अधिकारी एक प्रशिक्षण की कमी और सक्षम बुनियादी ढाँचे (कम्प्यूटर, स्कैनर, इंटरनेट, कनेक्टिविटी, फोटोकॉपी आदि) की कमी के कारण यह

स्थिति और बढ़ गई हैं। सूचना का अधिकार अधिनियम की गहन समझ पी.आई.ओ. और प्रथम अपीलीय अधिकारियों दोनों के लिए कर्तव्यों का प्रभावी ढंग से निर्वहन करने के लिए एक बुनियादी आवश्यकता है। सरकारी र्मचारियों के लिए सभी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में आर. टी. आई. पर मापांक शामिल किया जाना चाहिए क्योंकि उनमें से अधिकांश संभावित लोक सूचना अधिकारी या प्रथम अपीलीय अधिकारी हैं।

जन जागरुकता का अभाव–

आर.टी.आई. एक ऐसा यंत्र है जिसका प्रयोग सरकार की कार्यों और निष्क्रियता उजागर करने के लिए जनता द्वारा किया जाता है। इसके बारे में बात का अभाव होने पर नागरिकों में इस शक्तिशाली हथियार की प्रभावपूर्ण में अकड़न उत्पन्न होती हैं। विशेष रूप से वंचित समुदायों द्वारा इस समस्या के समाधान के लिए अधिनियम की धारा 26 में यह उल्लेख किया गया है कि सरकार जनता और विशेष रूप से वंचित समुदायों की समझ विकसित करने के लिए शैक्षिक कार्यक्रमों का विकास और आयोजन कर सकती हैं, कि अधिनियम के अंतर्गत दिए गए अधिकारों का प्रयोग किस प्रकार से किया जाए? अधिनियम के लागू होने के 18 वर्षों के बाद भी, जन जागरुकता बढ़ाने की आवश्यकता बनी हुई है। लोगों को जागरूक करने के लिए टेलीविजन, चैनलों, रेडियों प्रसारण, समाचार पत्रों इत्यादि मीडिया का अधिक कठोरतम रूप से पालन करने की जरूरत हैं। इसके साथ ही इंटरनेट और सोशल मीडिया का भी उपयोग किया जा सकता हैं। क्योंकि वर्तमान समय में युवा वर्ग से चाहे शहरी क्षेत्र से हो या ग्रामीण सभी की पहुँच है। इसको अत्यधिक व्यापक स्तर पर लोकप्रिय बनाने के लिए कहानियाँ, पर्चे, विज्ञापन, टेलीविजन धारावाहिक और सूचना के अधिकार से संबंधित कार्यक्रमों को निर्मित करने की आवश्यकता है। प्रचार के तरीकों में हिन्दी, अंग्रेजी और विभिन्ना क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग किया जाना चाहिए।

सूचना आयोगों के कार्यसंचालन में बाधाएँ– सूचना आयोगों का प्रभावशाली और कुशल कार्य संचलान आर. टी.आई. अधिनियम के सफल क्रियान्वयन के लिए अत्यन्त आवश्यक आवश्यक है। इस अधिनियम के अंतर्गत अर्द्ध–न्यायिक तंत्र कई परिचालन मामलों से भरा हुआ है, जिसमें से कई जनता से जुड़े हुए मुद्दें हैं–

(1) सूचना आयोगों की संरचना और सूचना आयुक्तों की नियुक्ति।
(2) आई.सी. द्वारा रिकॉर्ड रख–रखाव की स्थिति और आयोगों के कार्यसंचालन में पारदर्शिता।
(3) सूचना आयोग द्वारा अपीलों और शिकायतों का निपटारा।
(4) आयोग की इच्छा पर निर्भर होता है कि गलती करने वाले अधिकारियों पर शक्ति लगाने और आवेदकों को मुआवजा देना।
(5) शक्ति की वसूली सुनिश्चित करने और मुआवजे का भुगतान सुनिश्चित करने के लिए आयोगों की क्षमता।
(6) आयोगों की जवाब देही।

वित्तीय और ढांचागत सहायता के लिए सरकार पर निर्भरता–

यह अधिनियम सूचना आयोगों को स्वतंत्र प्राधिकरण के रूप में स्थापित करता है और साथ ही उनकी जिम्मेदारियों को भी परिभाषित करता हैं, लेकिन देखा जाए तो सूचना आयोग की निर्भरता धन और पदाधिकारियों के मामले में सरकार पर है। एक परिणाम के रूप में सूचना आयोग उतना ही प्रभावशाली है, जितना कि उपयुक्त सरकार द्वारा दिया जाने वाला समर्थन।

सूचना आयोग की रिक्तियाँ – पूरे देश में कई आयोगों में अत्यधिक संख्या में मामले और शिकायतें अनसुलझे हुए हैं, जिसके फलस्वरुप मामलों के समाधान में अधिक समय लग जाता है। जिसका मुख्य कारण सूचना आयोगों की नियुक्ति के लिए उचित समय पर कार्रवाई करने में केन्द्र और राज्य सरकारों की असफलता है।

सूचना आयुक्तों की पृष्ठभूमि आर. टी. आई. कानून के लागू होने के बाद से, सम्पूर्ण देश में सूचना आयोगों का नेतृत्व सेवानिवृत सिविल सेवकों द्वारा किया गया है, जिसमे से अधिकतर भारतीय प्रशासनिक सेवाओं के पूर्व सदस्य थे।

CRTI Assessment And Advocacy Group & Centre for Equity Studies 2014) मालूम होता है कि जिससेै वउलं ऐसा सरकार अन्य विशेषज्ञ उम्मीदवारों की अपेक्षा सिविल सेवा के अधिकारियो की अधिक योग्य मानती है। सूचना आयोग के कामकाज पर एक अध्ययन (Satark NagrikSangathon (SNS) - Centre (CES) 2019) में पाया गया आयुक्त, जिनको पृष्ठभूमि वित्त म्नपजलैजनकपमे है कि 58 प्रतिशत की जानकारी उपलब्ध थी, सेवानिवृत सरकारी अधिकारी थे। ठीक उसी प्रकार मुख्य सूचना आयुक्त जिनके लिए आंकडा प्राप्त किया गया था, उनमें से 83 प्रतिशत सेवानिवृत्त सरकारी कर्मचारी थे, जिनमे 64 प्रतिशत सेवानिवृत्त भारतीय प्रशासनिक सेवा अधिकारी शामिल थे। इसके साथ ही अगर देखा जाए ती आयोग की संरचना भी लैंगिक रूप से एकतरफा पाई गई हैं। 2005 में आर. टी. आई. अधिनियम10 के पारित होने के बाद से, सम्पूर्ण देश में सभी सूचना आयुक्तों में से केवल 10 प्रतिशत और मुख्य सूचना आयुक्त में से 7 प्रतिशत से कम महिलाएं है। उच्चतम न्यायालय के द्वारा समय–समय पर इस मामले में सुधार के निर्देश दिए जाने के बावजूद यह स्थिति अभी भी बनी हुई है। नमित शर्मा बनाम, भारत संघ में सुप्रीम कोर्ट ने निर्देश जारी किया कि सरकारों को सूचना आयोगों में नियुक्ति के लिए सिविल सेवकों के अलावा अन्य उम्मीदवारों की पहचान करने जरूरत है सूचना का अधिकार अधिनियम
के प्रभावशाली कार्यान्वयन के लिए सूचना आयोगों को बेहतर संतुलित निकायों की जरूरत हैं, जिनमें अधिक लिंग समानता हो और पूर्व सिविल सेवकों, कानूनी पेशेवरों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, शिक्षाविदों पत्रकारों और अन्य पेशेवरों सहित विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों और व्यवसायों का मिश्रण हो।

उच्च मामलों में लंबितर और विलंब – कई सूचना आयोगों में मामलों के निपटारे में बहुत अधिक विलंब हो रही हैं, प्रत्येक महीने लंबित मामलों की संख्या में बढ़ोतरी होती है। सूचना आयोगों में अपीलों और शिकायतों के निपटारे के अधिक संचय प्रभावी रूप से लोगों को उनके सूचना के मौलिक अधिकार से वंचित कर रहे हैं। जिसके फलस्वरूप नागरिको को अपनी शिकायतो की सुनवाई के लिए काफी लम्बे समय तक इंतजार करना पड़ता है। अध्ययन से पता चलता है कि अगर राज्य स्तरीय सुनवाई पर सूचना आयोग में एक साल से अधिक समय लग जाता हैं।

सूचना आयोग के गैर अनुपालन और प्रवर्तन (लागू) आदेश –

सामान्यतया लोक प्राधिकरण द्वारा सूचना आयोगों के आदेशों पर ध्यान नहीं दिया जाता है और यहाँ तक कि जो शास्ति लगाई कई हैं, उसकी भी वसूली जाती हैं, आयोगों के लागू करने का का यह गैर में नहीं होती है। पास अनुपालन की निगरानी यां प्रभावपूर्ण तरीका नहीं' अनुपालन, सूचना के हैं। अदिश प्रदर्शीकरण रुकावट डालेगी। अधिनियम की धारा 20 के संबंध में हाईकोर्ट द्वारा बताई गई विवेचना से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि आयोग द्वारा गैर अनुपालन शिकायतों पर विचार किया जा सकता है, शिकायतों पर

न्याय कर सकता हैं और अधिनियम में वर्णित प्रावधानों के अनुसार अपने सामने लाए गए मामलों का निर्णय कर सकता है, लेकिन फिर भी, यह सुनिश्चित करने के लिए कोई सरल तंत्र नहीं है, कि सूचना प्राप्त करने वाले को और गैर अनुपालन आवेदन की सुनवाई के बाद
उससे संबंधित जानकारी निश्चित रूप से मिल जाएगी।

वेबसाइटों पर सूचना का प्रकटीकरण से सभी सूचना आयोगों की अपनी आधिकारिक वेबसाईट थी, लेकिन सूचना की उपलब्धता पर सभी अयोगों में अलगाव था और वेवसाइटों पर जाकर आसानी से जाँच किया जा सकता हैं, लेकिन से उनमें से कई वेबसाइटों पर तो अद्यतन जानकारियों को नहीं डाला गया है। दुर्भाग्यवश कई सूचना आयोग के द्वारा सूचना अधिकार अधिनियम की धारा 4 की आश्यकताओं का पालन नहीं करते हैं। उनकी अधिकतर वेबसाइटों पर बहुत ही कम सूचना है और बहुत–सी महत्वपूर्ण सूचना गायब है। बहुत सारे वार्षिक प्रतिवेदनों को अपलोड करने में विलंब होते हैं। इसके अलावा वेबसाइटो पर बाद सूची, निपटाने और लंबित आंकडे
भी नहीं डाले जाते हैं। इसकी पारदर्शिता के के लिए महत्वपूर्ण जानकारी को वेबसाइटों पर होनी चाहिए।

आर.टी.आई. अधिनियम को सफल कमजोर होने में तथा सूचना के अधिकार के द्वारा भारत में सुशासन की स्थापना ना होने में जिला प्रशासन सबसे आगे रहा है। यह भारत के औपनिवेशिक काल से ही संरचित है। इसलिए जिला स्तर पर सूचना के कार्यान्वयन में आने वाली बाधा की पहचान करना अत्यन्त आवश्यक हैं।

जिला प्रशासन के अंतर्गत कई विभागों की कार्यपद्धति निर्धारित की जाती है, जैसे पुलिस रेल, राजस्व, स्वास्थ्य, खाद्य एवं आपूर्ति, समाज कल्याण एवं बाल विकास, शहरी स्थानीय शासन, नगर नियोजन, विकास एवं पंचायती राज इसके साथ ही जिला प्रशासन अन्य कई रूप में है–

I. राज्य सरकार और लोक क्षेत्र के उद्यमों के विभिन्न विभागों के जिला
II. स्तरीय कार्यालय और कर्मचारी।
III. जिला ग्रामीण विकास एजेंसी जैसी विकास ऐजसिंयों के द्वारा पंचायती
IV. राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों पर नियंत्रण रखा जाता है।
V. कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने के लिए तंत्र।
VI. समुदाय आधारित संगठन
VII. संस्थागत ऋण प्रणाली।
VIII. विभिन्न क्षेत्रों जैसे गोशाला, कृषि और लघु
IX. सिंचाई आदि में कार्यरत सहकारी संस्थाएँ इत्यादि।
X. जिला स्तर पर केन्द्र सरकारी संगठनों के अधिकारी।

निष्कर्षः–

सूचना के अधिकार अधिनियम 2005 शासन के कर्मचारी द्वारा सूचना को सही समय पर न देना तथा आधी अधूरी सूचना उपलब्ध कराना।

सूचना अधिकार अधिनियम 2005 के अर्न्तगत जनता द्वारा मांगी गयी सूचना पूर्ण रूप से न देने पर आयोग तक जनता को जाना पड़ता है।

सूचना के अधिकार विकास कार्यो में शासन के मंसा काम करने की जरूरत है तथा विकास कार्य में पूर्ण धन की जानकारी उपलब्ध कराता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ– सूची

- त्रिवेदी डॉ0 सुषील 1996 शषिकांत शुक्ला जनसंपर्क की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, भोपाल, मध्यप्रदेष हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
- त्रिवेदी डॉ0 सुषील 2010 जनसंपर्क की एक परिचय छत्तीसगढ़, छत्तीसगढ़ राज्य हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
- त्रिवेदी डॉ0 सुषील और शुक्ला शषिकांत 1996 जनसंपर्क सिद्धान्त और व्यवहार छत्तीसगढ, मध्यप्रदेष हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
- त्रिवेदी डॉ0 सुषील और शुक्ला शषिकांत 1990 जनसंपर्क की सिद्धान्त और व्यवहार भोपाल, मध्यप्रदेष हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
- A.G/. Noorani “India’s International Accountablity on Human Rights”, Economic and Political wekly, August 31, 1991
- A.R. Desai Violation of Democratic Rights in India, Bombay, Popular Prakashan, 1986.
- AJ.M Milne Freedom and Rights, London, George Alien and Unwin, 1968.
- Anand Mehta Right of life and Personal Liberty, (1999)
- Anand Singh “Civil Liberties: Uncivil State”, Seminar (335), March 1989.
- Anjan Ghosh “Civil Liberties: Uncivil State”. Seminar (335), March 1989.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

ग्रामीण क्षेत्रों की उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राओं में परम्परागत व्यवहार : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ0 महेन्द्र कुमार
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
महाराज बलवन्त सिंह पी0 जी0 कालेज, गंगापुर, वाराणसी, उ0प्र0
प्रोफेसर आलोक कुमार कश्यप
समाजशास्त्र विभाग,
महाराज बलवन्त सिंह पी0 जी0 कालेज, गंगापुर, वाराणसी, उ0प्र0।

सारांश

भारत में प्राचीन काल से चले आ रहे व्यवहार प्रतिमान परम्पराओं का रूप धारण करते हुये भारतीय समाज को विशिष्टता प्रदान करते रहे हैं। सामाजिक परिवर्तन के फलस्वरूप विभिन्न व्यवहारों, धार्मिक रीति–रिवाजों एवं कर्मकाण्डों में अन्तर आता रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र में ग्रामीण क्षेत्रों की अनुसूचित जाति की उच्च शिक्षारत छात्राओं में परम्परा के प्रति उनके विचारों को जानने का प्रयास किया गया है। अध्ययन के लिए उत्तर प्रदेश के वाराणसी जिले के ग्रामीण क्षेत्र में स्थित विभिन्न महाविद्यालयों का चयन किया गया है। चयनित महाविद्यालयों में अध्ययनरत अनुसूचित जाति की 300 छात्राओं का चयन निदर्श के रूप में किया गया है।

प्रमुख शब्द

अनुसूचित जाति, परम्परा, जागरुकता, परम्परागत व्यवहार, जाति परम्परा की स्थिति, जातिगत संघर्ष।

समाजशास्त्र में परंपरा का अर्थ केवल पुराने रीति–रिवाजों से नहीं है। बल्कि यह उन मूल्यों विश्वासों और व्यवहारों का पुंज है जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को सौंपे जाते हैं। परंपरा का अर्थ परंपरा शब्द संस्कृत के पर और अम्प से मिलकर बना है जिसका अर्थ है हस्तांतरण अंग्रेजी शब्द Tradition लैटिन शब्द Tradere से आया है जिसका अर्थ भी सौंपना (to deliver) होता है। यह अतीत से जुड़ी होती है। इसे सामाजिक स्वीकृति प्राप्त होती है। यह निरंतरता (Continuity) बनाए रखती है।

परम्परा से तात्पर्य उन सभी विचारों आदतों तथा रिवाजों के योग से है जो एक समाज में पायी जाती है तथा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को सौंपी जाती है। परम्परा हमारे व्यवहार के तरीके है। समाज में प्रचलित विचार रूढ़ियाँ, मूल्य विश्वास धर्म रीति–रिवाज तथा आदतों के संयुक्त रूप को परम्परा कहा जाता है। परम्परा शब्द के द्वारा संबंधित समाज के उन व्यवहारों व संस्थाओं की ओर संकेत किया जाता है जो अतीत काल से निरन्तर चले आ रहे हैं।

परम्परा प्रथायें, रूढ़ियाँ, आदतें, विचार, विश्वास, रीति–रिवाज, धर्म, कानून इत्यादि सामाजिक विरासत का अभौतिक पक्ष है जो हमारे व्यवहार के स्वीकृत तरीकों का द्योतक है और जिसकी निरंतरता पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरण की प्रक्रिया द्वारा बनी रहती है।

रॉबर्ट रेडफील्ड ने परंपरा को दो भागों में विभाजित किया है, जो समाजशास्त्रीय अध्ययन के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैंरू–

1 लघु परंपरा – यह अनपढ़ ग्रामीण कृषकों की परंपरा है जो मौखिक होती है और स्थानीय स्तर पर भिन्न होती है (जैसे स्थानीय लोकगीत कुल देवता)।

2 महान परंपरा – यह शिक्षित और संभ्रांत वर्ग की परंपरा है जो धर्मग्रंथों लिखित इतिहास और मंदिरों से जुड़ी होती है (जैसे रामायण महाभारत)।

एम.एन. श्रीनिवास ने परंपरा को स्थिर नहीं माना। उन्होंने ब्राह्मणीकरण और बाद में संस्कृतिकरण के माध्यम से बताया कि कैसे निम्न जातियाँ अपनी परंपराओं को छोड़कर उच्च जातियों की परंपराओं को अपनाकर अपनी सामाजिक स्थिति बदलने की कोशिश करती हैं।

योगेंद्र सिंह ने बताया कि भारतीय परंपराएँ बहुत लचीली हैं। उन्होंने कहा कि भारतीय परंपराओं में पदानुक्रम और समग्रता जैसे गुण होते हैं जो आधुनिकता के साथ टकराते नहीं बल्कि सामंजस्य बिठा लेते हैं।

परम्परा में सामाजिक रूप से मान्य बोलचाल के रूप में तथा नियम के अनुसार आचरण सम्मिलित होते हैं जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होते हैं। परम्पराओं में विश्वास और व्यवहार भी सम्मिलित होते हैं। इस प्रकार परम्परा में विचार, विश्वास, किंवदन्तियाँ पौराणिक कथायें, कानून, रूढ़ियाँ, जनरीतियाँ, टोटम तथा टैबू सभी आ जाते हैं।

प्रो. योगेन्द्र सिंह का मानना है कि ''परम्परा किसी समाज की वह संचित विरासत है जो सामाजिक संगठन के समस्त स्तरों पर छायी रहती है, जैसे–मूल्य व्यवस्था सामाजिक संरचना तथा वैयक्तिक संरचना। मानव समाज पर दृष्टिपात करने से यह तथ्य प्रकट होता है कि समाज सतत गतिशील विकासशील तथा परिवर्तनोन्मुखी है। परम्पराओं में भी स्पष्टतः परिवर्तन हुए हैं। सामाजिक मूल्यों में आये परिवर्तन ने समाज के स्वरूप को बदलने में अहम् भूमिका का निर्वहन किया है। समय और परिस्थिति के साथ–साथ कतिपय मूल्यों, आदर्शों एवं सिद्धान्तों में भी परिवर्तन हुआ है। इस प्रकार स्पष्टतः देखा जा सकता है कि प्राचीन परम्पराओं, विश्वासों और रीति–रिवाजों का स्थान नवीन परम्पराओं, विश्वासों और रीति–रिवाजों ने ग्रहण कर लिया है।

समस्त विचारधाराओं पर विचार व्यक्त करते हुए परम्परा के सम्बन्ध में हम कह सकते हैं कि परम्परा एक अभौतिक सामाजिक विरासत है, जैसे रीति–रिवाज, प्रथा, मूल्य, धर्म, विचार करने का तरीका स्वीकृतियाँ निषेध, नैतिक मान्यतायें रूढ़ियाँ इत्यादि जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है।

विभिन्न संस्कारों का आयोजन संस्कारों के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास तथा संस्कारों के प्रति शुभ फलदायक होने की मान्यता प्राचीन काल से चली आ रही है। विश्वास है जिसे आज भी लोग स्वीकृति प्रदान करके अपनी परम्पराओं की रक्षा करना चाहते हैं। संस्कारों के प्रति जागरुकता की अभिव्यक्ति की सकारात्मक स्वीकृति उच्च शिक्षारत छात्राओं की परम्पराओं के प्रति विश्वास का द्योतक है। निदर्शन के आधे भाग की संस्कारों की जानकारी के प्रति नकारात्मक एवं अनिश्चित अभिमत यह स्पष्ट करता है कि अनुसूचित जाति की छात्राओं के सम्मुख भारतीय परम्पराओं द्वारा रक्षित संस्कारों का कोई स्थान नहीं है। ऐसी उत्तरदात्रियों

का मानना है कि जब परिवार रिश्तेदार या पड़ोस में संस्कारों से सम्बन्धित अनुष्ठानादि क्रियायें होती ही नहीं तो हम जानेंगे कैसे?

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राओं में परम्परानुसार संस्कारों के आयोजन के प्रति स्वीकृति और अस्वीकृति दोनों प्रकार के भाव विद्यमान है। सामाजिक साहचर्य एवं सम्पर्क के प्रभावस्वरूप युवा छात्रायें परम्पराओं एवं संस्कारों के प्रति जागरुक भी है और अनभिज्ञ है।

अध्ययन का उद्देश्य

1. ग्रामीण क्षेत्रों की उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राओं में परम्परागत व्यवहार का अध्ययन करना।
2. उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राओं की धार्मिक विश्वासों का अध्ययन करना।
3. उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राओं की सांस्कृतिक क्रियाओं का पता लगाना।
4. ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राओं द्वारा परम्पराओं के अनुपालन का पता लगाना।

प्राक्कल्पनाएँ –

1 ग्रामीण क्षेत्रों की उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राएँ परम्परागत व्यवहार करती है।

2 ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राएँ घर में होने वाली सभी धार्मिक क्रियाओं में सहभागिता करती है।

3 ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राएँ सभी सांस्कृतिक क्रियाओं में भाग लेती है।

4 ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राएँ सभी परम्पराओं का पालन करती है।

अध्ययन क्षेत्र –

प्रस्तुत अध्ययन के लिए पूर्वी उ. प्र. के वाराणसी जनपद के ग्रामीण क्षेत्र में उच्च शिक्षा केन्द्रों के रूप में स्थापित महाविद्यालयों में अनुसूचित जाति की छात्राओं पर आधारित है। वाराणसी जनपद के 2 महाविद्यालय क्रमशः महाराज बलवंत सिंह पी. जी. कॉलेज, गंगापुर, वाराणसी तथा डॉ0 राम मनोहर लोहिया पी. जी. कॉलेज भैरवतालाब, वाराणसी का चयन इस आशय से किया गया है कि ये महाविद्यालय ग्रामीण क्षेत्रों में अवस्थित है।

निदर्शन –

प्रस्तुत अध्ययन के लिए ग्रामीण क्षेत्र में स्थित महाविद्यालायों में उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राओं का चयन दैव निदर्शन एवं उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि से कुल 200 उत्तरदात्रियों का चयन किया गया है। जिसमें प्रत्येक महाविद्यालय से 100–100 छात्राओं का चयन किया गया है।

तथ्य संकलन की प्रविधि –

प्राथमिक तथ्यों का संकलन प्रमुख रूप से साक्षात्कार अनुसूची के द्वारा किया गया है।

सारणी संख्या 1

प्रचलित परम्पराओं के अनुसार व्यवहार करती हैं

क्र.सं.	प्रतिक्रिया	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	परम्परागत व्यवहार करती हैं	170	85.00

2.	परम्परागत व्यवहार नही करती हैं	28	14.00
3.	अनिश्चित	02	1.00
	योग	**200**	**100**

सारणी संख्या 01 के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि संपूर्ण निदर्श के 85 प्रतिशत उत्तरदात्रियां परम्परागत व्यवहार करती हैं। 14 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ परम्परागत व्यवहार नही करती हैं तथा 01 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ अनिश्चितता प्रकट करती हैं। अतः स्पष्ट है कि इस संपूर्ण निदर्श की अधिसंख्यक उत्तरदात्रियाँ सकारात्मक हैं। उन्हें यह ज्ञात है कि परम्परागत व्यवहार हमारे लिए कितने उपयोगी हैं।

उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राओं में परम्परानुसार व्यवहार के प्रति स्वीकृति और अस्वीकृति दोनों प्रकार के भाव विद्यमान है। सामाजिक साहचर्य एवं सम्पर्क के प्रभावस्वरूप युवा छात्रायें परम्परानुसार व्यवहार के प्रति जागरुक भी है और अनभिज्ञ है।

सारणी संख्या 2
सभी धार्मिक क्रियाओं में सहभागिता

क्र.सं.	धार्मिक क्रियाओं में सहभागिता	**आवृत्ति**	**प्रतिशत**
1.	हाँ	190	95
2.	नहीं	08	04
3	अनिश्चित	02	01
	योग	**200**	**100**

सारणी संख्या 2 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की 95 प्रतिशत छात्राएँ समाज में प्रचलित सभी धार्मिक क्रियाओं में सहभागिता करती हैं तथा 04 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ सभी धार्मिक क्रियाओं में सहभागिता नही करती हैं जबकि 01 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ अनिश्चितता की स्थिति व्यक्त करती हैं।

ग्रामीण परिवेश में निवास करने वाली उच्च शिक्षारत छात्रायें यह मानती हैं कि आज के इस आधुनिक परिवेश में समाज में जो प्रचलित परम्पराएँ थीं अब उनका बहुत महत्व नहीं रह गया है। फिर भी पूर्ण रूप से

यह नहीं कहा जा सकता कि प्रचलित परम्पराओं के अनुसार उच्च शिक्षारत छात्राएँ व्यवहार नहीं करती हैं। ग्रामीण परिवेशों की उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राएँ इस बात की पुष्टि करती हैं कि अभी भी समाज में प्रचलित परम्पराओं का समूल विनाश नहीं हुआ है। इनके अनुसार आज भी प्राचीन परम्परायें जीवित हैं।

सारणी संख्या 3
सभी सांस्कृतिक क्रियाओं में सहभागिता

क्र.सं.	प्रतिक्रिया	आवृत्ति	प्रतिशत	
1.	हॉ	176	88	
2.	नहीं	20	10	
3	अनिश्चित	04	02	
	योग	200	100	

सारणी संख्या 3 के आंकड़ों के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि संपूर्ण निदर्शन की 88 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ सभी सांस्कृतिक क्रियाओं में सहभागिता करती हैा उनका यह मानना है कि आधुनिकता हमारे समाज में चाहे जिस स्तर तक व्याप्त हो जाए लेकिन जो हमारे पूर्वजों द्वारा रीति–रिवाज बनाये गये हैं उनका पालन भी करना होगा। 10 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का मानना है कि अब सभी सांस्कृतिक क्रियाओं में सहभागिता आवश्यक नहीं हैा वह इसके प्रति अपने नकारात्मक दृष्टिकोण को व्यक्त करती हैं। सामाजिक परिवर्तन एवं गतिशीलता के फलस्वरूप वर्तमान सामाजिक संरचना में जातिगत परम्परायें विलुप्त नहीं हो रही हैं। ग्रामीण परम्पराओं को आज भी युवाओं द्वारा स्वीकार किया जा रहा है। अनेक कारणों से आज भी युवाओं की सांस्कृतिक क्रियाओं के प्रति प्रतिबद्धता एवं स्वीकृति दृष्टिगोचर होती है।

सारणी संख्या 4
सभी परम्पराओं का पालन करती **है**

क्र.सं.	प्रतिक्रिया	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	हॉ	150	75.00
2.	नहीं	35	17.50
3	अनिश्चित	15	07.50
	योग	200	100

सारणी संख्या 4 के आंकड़ों के अवलोकन से यह परिलक्षित होता है कि संपूर्ण निदर्श की 75.00 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ सभी परम्पराओं का पालन करती है। उनका तर्क है कि आज भी हमारे समाज में परम्परायें प्रचलित हैं जो हमारे पूर्वजों द्वारा रीति–रिवाज बनाये गये हैं उनका पालन भी करना होगा। 17.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ सभी परम्पराओं का पालन नहीं करती हैं। उनका मानना है कि अब परम्पराओं पालन बहुत कम होता है। समाज में उनका प्रभाव बहुत नहीं रह गया है।

निष्कर्ष –

प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षारत अनुसूचित जाति की छात्राओं में परम्परानुसार स्वीकृति और अस्वीकृति दोनों भाव विद्यमान हैं। सामाजिक संपर्क के प्रभावस्वरूप युवा छात्रायें जागरुक भी हैं और अनभिज्ञ भी हैं। ग्रामीण नगरीय परिवेश की छात्राओं में परम्पराओं से सम्बन्धित व्यवहार के अनुकरण में बहुत आंशिक अन्तर है आज भी ग्रामीण जन–परम्पराओं के अनुसार ही व्यवहार के पक्षधर हैं। ग्रामीण परम्पराओं का आज भी युवाओं द्वारा स्वीकार किया जा रहा है। युवाओं की प्रथाओं एवं परम्पराओं की प्रतिबद्धता एवं स्वीकृति दृष्टिगोचर हो रही है।

संदर्भ

1. श्रीनिवास एम. एन.1972 सोशल चेन्ज इन मार्डन इण्डिया, मुम्बई
2. गांधी एम. के. गांधी फरवरी 11, 1933 हरिजन
3. धुरिये, जी. एस. : कास्ट क्लास एण्ड आक्यूपेशन
4. दुर्खीम इमाईल 1959 एजुकेशन एण्ड सोसियोलॉजी', द फ्री प्रेस ग्लामकास इलिन्वायस
5. लीच. ओ. एम. 1974 द पोलिटिक्स ऑफ अनट्चविलिटी', नेशनल पब्लिशिंग हाउस, न्यू दिल्ली
6. हट्टन, जे. एच. 1961 कास्ट इन इण्डिया थर्ड एडीशन
7. पणिक्कर, के. एम. 1956 हिन्दू सोसाइटी ऐट क्रॉस रोड्स, एशिया पब्लिकेशन हाउस, बम्बई
8. मिश्रा, आर. बी. एण्ड सिंह सी. पी. 1992 'इण्डियन वीमेन चैलेंज एण्ड चेन्ज', कामनवेल्थ पब्लिशर्स, न्यू दिल्ली
9. सिंह, के. एस. 1997 पीपुल ऑफ इण्डिया : दी शिड्यूल्ड ट्राइब्स, नेशनल सीरीज आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
10. सिंह, योगेन्द्र 1994 'माडर्नाइजेशन ऑफ इण्डियन ट्रेडिशन', रावत पब्लिकेशन, जयपुर

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

लोकनायक के रूप में इन्द्र की अवधारणा का विश्लेषण

डॉ0 वागीश मिश्र
असिस्टेंट प्रोफेसर
सर्वोदय विद्यापीठ पी0जी0 कालेज
सलोन, रायबरेली

सारांश

वेद मात्र देव स्तुति ग्रन्थ ही नहीं, अपितु वैदिक संस्कृति के प्रथम प्रकाशक हैं। देवताओं की स्तुति के माध्यम से ऋषि प्रकृति, सत्ता, नियम और चेतना से संवाद करते हैं। वह देवताओं की स्तुति के माध्यम से उन गुणों पर सूक्ष्म चिन्तन करते हैं, जिन्हें वह अपना आदर्श मानते हैं। इन देवताओं में इन्द्र सर्वाधिक प्रमुख और विभिन्न चारित्रिक विशेषताओं से युक्त हैं। ऋग्वेद का चतुर्थांश (250 सूक्त) इन्द्र को समर्पित है। इसके अतिरिक्त लगभग 50 सूक्तों में यह अन्य देवताओं के साथ स्तुत्य हैं। इन्द्र को समर्पित सर्वाधिक सूक्त संख्या इस तथ्य का स्पष्ट संकेत है कि इन्द्र वैदिक ऋषियों के आदर्श और सर्वाधिक महत्वपूर्ण देव हैं। वैदिक युग में उनका स्वरूप एक ऐसे लोकनायक का है जो शत्रुओं का संहार करता है, अन्न–धन का प्रदाता है, गो संपदा और जल को मुक्त कर जनजीवन को समृद्ध बनाता है तथा समुदाय की रक्षा करता है। वृत्र–वध इस लोकनायकत्व का केन्द्रीय प्रतीक है, जहाँ इन्द्र प्राकृतिक अवरोधों को हटाकर जीवन–स्रोत जल को प्रवाहित करते हैं। यह घटना केवल आख्यान नहीं, अपितु कृषि प्रधान समाज की जीवन–आवश्यकताओं और सामूहिक अस्तित्व–संघर्ष का सांकेतिक चित्रण है। इस शोध पत्र में इन्द्र के ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक पक्षों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन यह प्रतिपादित करता है कि इन्द्र मात्र प्राकृतिक शक्तियों के प्रतीक नहीं अपितु भारतीय लोकमानस के आदर्श, प्राकृतिक संसाधनों के वितरक, भयमुक्त समाज के संस्थापक, परोपकारी, सहयोगी एवं वीरता आदि गुणों के आदर्श हैं। इन्द्र के यही गुण इन्हें राष्ट्रीय देवता के पद पर स्थापित करते हैं।

कूट शब्द– वेद, इन्द्र, देव, वृत्र, वर्षा, नेतृत्व

प्रस्तावना

लोकनायक का सामान्य अर्थ है वह शक्ति या व्यक्ति जो जनता के कल्याण, सुरक्षा और समृद्धि के लिये कार्य करे। मानव समाज ने सदैव ऐसे व्यक्ति या शक्ति को अपना आदर्श स्वीकार किया है। सुरक्षा, कल्याण व समृद्धि जैसी शुभ आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाले देव के रूप में इन्द्र प्रधान रूप से स्तुत्य हैं। इन्द्र शक्ति और वीरता के साथ ही साथ लोकहित के गुणों से भी युक्त हैं।

इन्द्र के कार्य

इन्द्र वर्षा, शक्ति, वीरता के प्रतीक हैं। ऋग्वेद इन्द्र की विजयगाथाओं एवं महानता के वर्णन से ओतप्रोत है। वीरता के कार्यों के अतिरिक्त इन्द्र अपने मित्रों, स्तोताओं, सहयोगियों के रक्षक व महान दाता

भी हैं। निरुक्तकार ने इन्द्र के सभी कार्यों में तीन को प्रमुख बताया है– अथास्य कर्म रसानुप्रदानं वृत्रवधः। या च का च बलकृतरिन्द्रकर्मैव तत्[1]– अर्थात् वर्षण, वृत्रवध एवं बल सम्बन्धी समस्त कार्य इन्द्र के हैं। बृहद्देवताकार भी निरुक्तकार के समान ही मत प्रकट करते हैं।

रसादानं तु कर्मास्य वृत्रस्य च निवर्हणम्
स्तुतेः प्रभुत्वं सर्वस्य बलस्य निखिला कृतिः। बृहद्देवता–2/6

जल प्रदाता इन्द्र

इन्द्र जल के प्रदाता और जल के स्वामी हैं। यह मनुष्य जीवन के मूल आधार जल को प्रेषित कर मनुष्यों का हित करते हैं। ऋषि इन्द्र के स्वरूप का बोध कराते हुए कहते हैं कि– जो जल को प्रेषित करते हैं वहीं इन्द्र हैं।[2] वर्षा के स्वामी इन्द्र से स्तोता जल–वृष्टि की कामना करते हैं। जल वर्षा से इन्द्र भूमि को उर्वर करते हैं। नदियां भी वेगवान रहते हुए इन्द्र की स्तुति करती हैं। इन्द्र के जलप्रदाता गुणों से मुग्ध स्तोतागण इन्हें वृषभ कहकर पुकारते हैं। वृषभ शब्द को सायण कामना के अनुरूप वर्षा करने वाला से समीकृत करते हैं– वृषभं कामानं वर्षितारम्।[3] ऋक् संहिता में इन्द्र को अधिकांशतः मेघों का भेद कर जल प्रदान करने वाला, नदियों को प्रवाहित करने वाला कहा गया है।

वृत्रवध और वर्षण गहन रूप से सम्बन्धित है। वृत्र जल को बाधित करने वाले के रूप में प्रदर्शित किया गया है। वह जल को घेर कर लेट[4] जाता है जिससे जीवनकारी जल वर्षा रूप में प्राप्त नहीं होता है। वृत्र नदियों का प्रवाह बाधित करता है। इस प्रकार अवर्षण का कारक वृत्र इन्द्र के साथ ही साथ सम्पूर्ण समाज का शत्रु है। वृत्र का वध कर इन्द्र जल को मुक्त करते हैं, नदियों को प्रवाहित करते हैं। वृत्र वध कर इन्द्र ने समाज को सुखी, मंगलमयी जीवन प्रदान किया। वृत्रवध के कारण ही इन्द्र वृत्रहन् कहे गये हैं।[5] इन्द्र और वृत्र के युद्ध का वर्णन वैदिक कवियों के उच्च काव्यात्मक गुणों का द्योतक है। इस युद्ध के वर्णन में वैदिक कवियों ने विभिन्न उपमाओं के प्रयोग से सम्पूर्ण प्रकरण को जीवन्त किया है। इन्द्र वृत्र को ऊर्णनाभि कीट की तरह, मृग की तरह और कभी वृक्ष की तरह नष्ट करते हैं। वृत्र मेघ का प्रतीक है, जैसा कि निरुक्तकार का कथन है– तत्को वृत्रः? मेघ इति नैरुक्ताः[6] स्तोताओं ने मेघों के नाना प्रकार रूपों की कभी वृक्ष, कभी कीट, कभी मृग रूप में कल्पना कर तड़ित, गर्जन, इत्यादि को सम्मिलित रूप से युद्ध का रूप प्रदान किया।

अन्न प्रदाता इन्द्र

वर्षा के साथ ही साथ इन्द्र अन्न के प्रदाता भी हैं। निरुक्तकार इन्द्र शब्द का निर्वचन करते हुए इन्हें अन्न प्रदान करने वाला[7] (इरां ददातीति वा), अन्न धारण करने वाला[8] (इरां दधातीति वा), अन्न का विदारण करने वाला कहते हैं।[9] (इरां दृणातीति वा) इन्द्र शब्द के निर्वचन से स्पष्ट है कि इन्द्र ने लोकहित के लिये वर्षा की जिससे कृषि सम्भव हुई एवं समाज को जीवन गति बनाए रखने के लिये अन्न प्राप्त हो सका। इन्द्र ने अपने भोग या आनंद के लिये वर्षा नहीं की।[10] अपितु परोपकार तथा लोक संरक्षण के लिये वर्षा की जिससे सुगम कृषि सम्भव हो सकी। स्तोतागण अपनी स्तुतियों में इन्हें बार–बार अन्नप्रदाता कहते हैं।[11] अन्नप्रदाता होने के कारण ही इन्द्र स्वधावः[12] हैं–

उपो नयस्व वृषणा तपुष्पोतेमव त्वं वृषभ स्वधावः।
प्रसेतामश्वा वि मुचेह शोणा दिवेदिवे सदृशीरद्धिधानाः।।

सुरक्षा प्रदाता इन्द्र

वर्षण व अन्न प्रदाता इन्द्र ने समाज को शत्रुओं से सुरक्षा प्रदान करने का वीरतापूर्ण कार्य किया। इन्द्र ने बहुत से शत्रुओं का वध किया जिससे शान्तिपूर्ण समाज की स्थापना सम्भव हुई। इन्द्र एक जन्मजात योद्धा हैं, इन्होंने उत्पन्न होते ही अपनी माता से शत्रुविषयक प्रश्न किया– कउग्राः के श्रण्विरे?[13] अर्थात् संसार में कौन–कौन उग्र बल वाले हैं? कृष्ण, वृत्र, नमुचि, शम्बर, शुष्ण, पणि, प्रिय इनके जन्मजात शत्रु हैं। कृष्ण का वध इन्द्र ने अंशुमति नदी के किनारे किया। नमुचि को इन्द्र समुद्रफेन से बने अस्त्र से पराजित करते हैं। शम्बर को इन्द्र चालीसवें वर्ष ढूँढ़कर मारते हैं। शत्रु नगरों को विदीर्ण करने के कारण ही इन्हें पुरन्दर कहा गया है।[14] इसके अतिरिक्त इन्द्र ने शुष्ण[15] (कुत्साय शुष्णमशुषं नि बर्हीः प्रतित्वे अह्नः कुयवं सहस्रा), प्रिपु[16] (स्तोमासस्त्वा गौरिवीतेरवर्धन्नरन्धयो वैदिथिनाय पिप्रुम्), अहा[17], कुभव[18], बल[19], अर्वुद[20] (अस्य सुवानस्यमन्दिनस्रितस्य न्यर्बुदं वानृधानो अस्तः।), विश्वरूप[21], रौहिण[22], दृभीक[23], उरण[24], रूधिक्ता[25], चुमुरिधुनि[26], किवि[27], मृगय[28], व्यंस[29] (त्वं प्रिप्रुमगयं शूशुवांससमृजिश्वने वैदथिनाय रन्धीः।) अर्ण[30] (ममच्यन ते मघवन्व्यंसो निविविध्वाँ अपहन् जघान।) और चित्ररथ (उत त्या सद्य आर्या सरयोरिन्द्र पारतः। अर्णाचित्ररथावधीः।) जैसे बलशाली असुरों का विनाश कर शांति व सुरक्षा की स्थापना की। इन्द्र द्वारा शत्रुओं का विनाश इन्द्र की वीरता तथा समाज को स्थिरता प्रदान करने का परिचायक है। एक विकासशील समाज के लिये आर्थिक स्थिरता के साथ ही साथ भयमुक्त समाज की सदा आवश्यकता रही है। सम्राट इन्द्र ने समाज को धन, अन्न की सुनिश्चितता के साथ ही साथ शत्रुभय मुक्त वातावरण भी दिया है। शत्रुओं के विरूद्ध इन्द्र का युद्ध सत्ता बनाए रखने के लिये अपितु व्यवस्था बनाए रखने के लिये है।

परोपकारी इन्द्र

आर्थिक सुरक्षा, शांति के साथ ही इन्द्र परोपकारी भी है। वह मित्रों असमर्थों के रक्षक भी हैं। ऋग्वेद के द्वितीय मण्डल में वर्णन प्राप्त होता है कि– एक बार असुर दभीति का अपहरण कर उन्हें नगर से बाहर ले जा रहे थे। मार्ग में प्रकट होकर इन्द्र ने असुरों के आयुधों को छीनकर अग्नि में दग्ध कर दिया। इस प्रकार दभीति की रक्षा कर इन्द्र ने उन्हें गायें, घोड़े व रथ भी प्रदान किये। एक अन्य स्थल पर प्राप्त होता है कि– परावृज ऋषि जन्म से अंधे व पंगु थे। इनके विवाह के अवसर पर ब्याह के लिये आयी हुई कन्याओं को जब इनके स्वरूप का बोध हुआ तब वह कन्याएं विवाह न करने की इच्छा से भागने लगीं। परावृज ऋषि उन कन्याओं का अनुसरण करने के क्रम में जल में फिर गिर पड़े। ऐसी अवस्था में ऋषि ने इन्द्र की स्तुति की व इन्द्र ने उन्हें नेत्र व दौड़ने की शक्ति प्रदान की। इस प्रकार दयालु इन्द्र ने परावृज ऋषि का उपकार किया।

महर्षि विश्वामित्र के सौ पुत्रों में एक मधुच्छन्दा थे। मधुच्छन्दा महान तपस्वी थे, आगे चलकर यह ऋषि मन्त्रों के द्रष्टा भी बने। विद्वान होते हुए भी ऋषि दरिद्र थे। दरिद्रता के क्लेश से विवश हो ऋषि ने इन्द्र की स्तुति की। अपनी स्तुति से प्रसन्न होकर इन्द्र ने ऋषि को प्रभूत धन प्रदान किया।

महर्षि गृत्समद में तपस्या का महान बल था। ऋषि यथेच्छ रूप बनाकर देवताओं की सहायता करते थे और असुरों से देवताओं की रक्षा भी किया करते थे। एक बार की बात है, महर्षि गृत्समद का एक महान यज्ञ सम्पादित हो रहा था। महर्षि का प्रिय करने के लिये इन्द्र स्वयं उस यज्ञ में उपस्थित हुए। असुर देवताओं विशेष रूप से, इन्द्र से द्वेष रखते थे। असुरों में धुनि व चमुरि नामक दो महाबलशाली असुर थे। वे इन्द्र पर घात करने का अवसर ढूँढ़ा करते थे। उन्हें जब मालूम हुआ कि इन्द्र गृत्समद के यज्ञ में गये हुए हैं तो वे भी बड़ी शीघ्रता से आयुधों से युक्त हो वहाँ जा पहुँचे, जहाँ यज्ञ हो रहा था।

असुरों को दूर से आता देख व उनके पापयुक्त मनोभावों को जानकर ऋषि ने तपस्या के बल से इन्द्र का रूप धारण किया व क्षणमात्र में ऋषि असुरों के सामने से अदृश्य हो गये। दोनों असुरों ने सोचा कि इन्द्र हमारे भय से अदृश्य हो गया है, अतः वे इन्द्ररूपधारी गृत्समद को ढूँढ़ने लगे। वे इन्द्ररूपधारी मुनि कभी अंतरिक्ष में दिखलायी पड़ते कभी द्युलोक में। भयंकर धुनि तथा चुमुरि आयुध लेकर उन्हें मारने के लिये दौड़ते रहे। जब असुरों ने मुनि का पीछा नहीं छोड़ा तब ऋषि ने असुरों को बताया कि मैं इन्द्र नहीं हूँ अपितु इन्द्र कोई और ही है। असुरों को पहले विश्वास ही न हुआ, तब गृत्समद ने इन्द्र की महनीय कीर्ति का उनके बल पराक्रम का मन्त्रों द्वारा गुणगान किया। गृत्समद द्वारा इन्द्र की कीर्ति का वह गुणगान उन असुरों के लिये वज्र के समान घातक हुआ। गृत्समद ने उन दोनों के समक्ष इन्द्र की वीरता, शौर्य तथा प्रभुत्व का इतना वर्णन किया कि उन महादैत्यों का नैतिक बल समाप्त हो गया और उसी समय इन्द्र ने उपस्थित होकर उन महादैत्यों का वध कर दिया। महर्षि गृत्समद का ऐसा अद्भुत प्रयत्न व तपोबल देखकर इन्द्र अपार प्रसन्न हुए तथा उन्हें अपना प्रिय सखा बना लिया।

रूरु नामक राजर्षि के कुत्स नाम के पुत्र थे। उन्होंने एक समय शत्रुओं से युद्ध में स्वयं को असमर्थ देख इन्द्र की स्तुति की। इन्द्र ने कुत्स के शत्रुओं का वध किया तथा कुत्स की रक्षा की। उसके बाद अत्यधिक प्रीति के कारण उन दोनों में मित्रता हो गयी। इन्द्र के साथ उनके मित्र कुत्स भी इन्द्र के घर गये। इन्द्र व कुत्स के स्वरूप की समानता देखकर इन्द्राणी भी संशय में पड़ गयी कि कौन इन्द्र है?, कौन कुत्स?

स्वश्व नामक एक राजा ने सूर्य के समान तेजस्वी पुत्र की कामना से सूर्य की स्तुति की। राजा की कठोर तपस्या व स्तुति मन्त्रों से प्रसन्न हो सूर्य ने स्वयं ही पुत्र रूप में उत्पन्न होने का निश्चय किया। सूर्य को स्वयं उत्पन्न हुआ जानकर एतश नामक ऋषि क्रुद्ध हुए। ऋषि का सूर्य के साथ युद्ध हुआ। युद्ध में विजय पाने की इच्छा से ऋषि ने इन्द्र को सोम से संतुष्ट किया। सोमपान से प्रसन्न इन्द्र ने स्वश्वपुत्र सूर्य से एतश की रक्षा की।

अजीगर्त के तीन पुत्र थे। उनमें मध्यम पुत्र शुनःशेप को उसने सौ गायों के बदले बेच दिया। सौ गायों के बदले यूप में बांधा तथा सौ गायों के बदले बलि देने को तैयार हो गया। यूप में बंधे हुए शुनःशेप ने तब प्रजापति, सविता, वरुण, अग्नि, विश्वेदेवों व अन्त में इन्द्र की स्तुति की। प्रसन्न होकर देवों ने उसके बन्धन को मुक्त कर दिया व इन्द्र ने उसे एक दिव्य रथ प्रदान किया।

वर्षा के उपरान्त प्रकृति सुखकर और हरितवर्णी हो जाती है। इस मनोरम वातावरण का प्रमुख कारण ऋषियों ने इन्द्र की कृपा को माना है। अतः स्तोतागण इन्द्र को हरितवर्ण से समीकृत करते हैं और कहते हैं इनका सम्पूर्ण शरीर हरित वर्ण की शोभा से युक्त है। इनके नेत्र, केश, श्मश्रु सभी हरित वर्ण के हैं। हरिशिप्रः उपाधि इन्द्र के लिये ही प्रयुक्त है। सायण ने इसका अर्थ हरित वर्ण नासिका या हरित हनु दोनों ही माना है– हरिशिप्रः हरितवर्ण नासिकः तद्वर्णहनुर्वा।[31] ओजपूर्ण कार्यों से इन्द्र सूर्य के समान तेजस्वी हैं। इन्द्र को एक बार प्रत्यक्ष रूप से सूर्य ही कहा गया है।[32] इन्द्र की वीरता व तेजस्विता को ध्यान में रखकर ही स्तोता इन्हें सूर्य से समीकृत करते हैं।

निष्कर्ष

लोकनायक के रूप में इन्द्र अन्याय के विरूद्ध न्याय के प्रतीक हैं। वह परिवर्तन व क्रांति का उद्घोष करते हैं। इन्द्र अपनी शक्ति का प्रयोग सामाजिक जड़ता को तोड़ने, प्राकृतिक संसाधनों को सर्वसुलभ बनाने व शान्ति व व्यवस्था को बनाए रखने के लिये करते हैं। श्रेष्ठ नायक वही है जो शक्ति के साथ–साथ

उत्तरदायित्व भी सुनिश्चित करे। इस दृष्टि से इन्द्र देवता से अधिक एक जननायक के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं जो शक्ति, संघर्ष व उत्तरदायित्व का संतुलित रूप प्रस्तुत करते हैं।

सन्दर्भ–

1. निरुक्त–7/10
2. ऋग्वेद–2/12/7
3. ऋग्वेद–1/9/4, 1/54/1 पर सायण
4. ऋग्वेद–4/19/2
5. किमादुतासिवृत्रहन्मघवन्यन्युमत्तमः। –ऋग्वेद–4/30/17
6. निरुक्त–2/5
7. निरुक्त–10/1
8. निरुक्त–10/1
9. निरुक्त–10/1
10. ऋग्वेद–1/55/3
11. ऋग्वेद–1/130/3, 3/30/21
12. ऋग्वेद–3/35/3
13. ऋग्वेद–8/45/4
14. ऋग्वेद–2/20/7, 1/102/7, 1/109/8, 8/28/8, 8/50/8 आदि
15. ऋग्वेद–4/16/12
16. ऋग्वेद–5/29/11
17. ऋग्वेद–1/63/7
18. ऋग्वेद–1/104/3
19. ऋग्वेद–1/11/5
20. ऋग्वेद–2/11/20
21. ऋग्वेद–2/11/19
22. ऋग्वेद–2/12/12
23. ऋग्वेद–2/14/3
24. ऋग्वेद–2/14/4
25. ऋग्वेद–2/14/5
26. ऋग्वेद–2/15/9
27. ऋग्वेद–2/17/6
28. ऋग्वेद–4/16/13
29 ऋग्वेद–4/18/9
30. ऋग्वेद–4/30/18
31. ऋग्वेद–10/96/4 पर सायण
32. ऋग्वेद–10/89/2

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

लोकतंत्र, न्याय और समानता : मुद्दे, चुनौतियाँ और समाधान (नारी शक्ति वन्दन अधिनियम–2023)

डॉ0 प्रसेन जीत सागर
एसोशिएट प्रोफेसर–हिन्दी विभाग
डॉ0 राजेश्वर सेवाश्रम महाविद्यालय
ढिंढुई, प्रतापगढ़
E-mail: prasenjeetsagarhindi@gmail.com

शोध सारांशः –

नारी शक्ति वंदन अधिनियम 2023 एक महत्वपूर्ण विधायी कदम है, जिसका लक्ष्य भारतीय लोकतन्त्र में महिलाएं निर्णय–निर्माण में अधिक सक्रिय और प्रभावी भूमिका निभा सकें। यह विधेयक महिलाओं को संसद और विधान सभाओं में स्थायी और संरचनात्मक अवसर प्रदान करता है। लैंगिक समानता का पक्षधर है। नारी वंदन शक्ति अधिनियम 2023, जिसे महिला आरक्षण विधेयक या संविधान का 128वां संशोधन भी कहा जाता है। यह एक ऐतिहासिक कानून है। इसका मुख्य उद्देश्य देश के लोकतान्त्रिक संस्थानों में महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी प्रतिनिधित्व को सशक्त बनाना है। लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में कुल सीटों का 33% आरक्षण महिलाओं को देना है। यह आरक्षण महिलाओं को सीधे निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में शामिल कराता है, जिससे सामाजिक न्याय, लैंगिक प्रतिनिधित्व और सशक्तिकरण बढ़ता है। नीतियों और फैसलों में सीधा प्रभाव डाल सकेंगी। किसी भी उन्नत समाज में महिलाओं का योगदान देश को प्रगति के पथ पर ले जाता है। इस अधिनियम से महिलाओं में नेतृत्व की क्षमता, सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक आकांक्षा पूरी होगी। पितृप्रधान समाज में सित्रियों को हमेशा भेदभाव का सामना करना पड़ता है। वहीं यदि दलित स्त्री को दोयम दर्जे का माना जाता रहा है। दलित स्त्री का जीवन हमेशा शोषण, उत्पीड़न, अपमानित और अभाव ग्रस्त से ग्रसित रहा है। यहॉ उन्हें दोहरा–तिहरा शोषण का सामना करना पड़ा है। ऐसे में यह अधिनिमय उन्हें सशक्त, मुखर और आत्मनिर्भर बनाने में सार्थक कदम होगा।

मूल शब्दः–अधिनियम, लोकतन्त्र, आरक्षण, प्रतिनिधित्व, सशक्तिकरण, अभावग्रस्त, सामाजिक न्याय, ऐतिहासिक, अस्मिता, समानता, आकांक्षा, प्रभुसत्ता, पितृसत्तात्मक, शोषण आदि।

लोकतंत्र एक ऐसी शासन व्यवस्था है, जिसमें सत्ता लोगों के हाथ में होती है यह एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है,जिसमें नागरिकों की भागीदारी बढ़ती है, मानव अधिकारों की रक्षा होती है। एक अच्छा लोकतंत्र वह है जिसमें राजनीतिक, सामाजिक और न्याय के साथ–साथ आर्थिक न्याय की भी व्यवस्था है। राजनीति में महिलाओं की पर्याप्त भागीदारी के अभाव में देश के विकास की कल्पना अधूरी है। किसी भी क्षेत्र में स्त्रियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन का कोई भी क्षेत्र महिलाओं की दावेदारी से अछूता नहीं है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद–14 महिलाओं और पुरूषों को राजनीतिक, आर्थिक

और सामाजिक क्षेत्रों में समान अधिकर और समान अवसर प्रदान करता है। किसी भी उन्नत समाज में महिलाओं का योगदान महत्वपूर्ण होता है। विकसित समाज में महिलाओं को पुरूषों के साथ समानता का अधिकार प्राप्त होता है। भारतीय संविधान में सभी नागरिकों को न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बन्धुत्व जैसे मूल अधिकार प्राप्त है। ''लोकतंत्र के बुनियादी लक्षण है, कि प्रभुसत्ता लोगों में निहित हो, धर्म, जाति, सम्प्रदाय, रंग या स्त्री–पुरूष के भेदभाव के बिना तथा आर्थिक, शैक्षिक या व्यवसायिक पृष्ठिभूमि के स्तर के भेदभाव के बिना, कानून की नजरों में सभी समान हों''[1]

पितृसत्तात्मक समाज में शोषण, धर्म संस्कृत के नाम पर प्रचलित मान्यताओं, प्रथाओं को ढोने की लाचारी तथा दीनता से भरा रहा है। दलित स्त्रियों को तो दोहरे उत्पीड़न से गुजरना पड़ता है। स्त्री और दूसरे दलित होने के कारण भूख, अशिक्षा, दरिद्रता, जातिदंश, शोषण, अपमान से जूझना पड़ता है। आज भी समाज में स्त्री का निरन्तर शोषण, उसके अस्तित्व और अस्मिता को कुचला जाना आम बात है। दलित स्त्री को जातिगत असमानता के साथ लैंगिक असमानता की पीड़ा से गुजरना पड़ता है। सवर्ण स्त्रियों की अपेक्षा उन पर दोहरी मार पड़ती है। दलित स्त्री की स्थिति दोयम दर्जे की है। समाज की पितृसत्तात्मक मानसिकता ही स्त्रियों के मार्ग को अवरूद्ध करती है, लांछन, कलंक, इज्जत, आबरू जैसे शब्द स्त्री शोषण के सशक्त हथियार रहे हैं । मुखर और सशक्त स्त्री ऐसे समाज को स्वीकार नहीं हैं। सुशीला टाकभौरे ने अपनी आत्मकथा 'शिकन्जे का दर्द' में दलित और स्त्री होने की पीड़ा को व्यक्त किया है–''समाज में स्त्रियों के प्रति यह मानसिकता सजह रूप में व्याप्त है, पितृसत्ता प्रधान भारतीय समाज में स्त्रियों को बराबर का दर्जा नहीं दिया जाता, उसकी प्रताड़ना और शोषण को पारिवारिक और व्यक्तिगत माना गया है''। [2] दलित स्त्री शोषित, पीड़ित, अपमानित, अभावग्रस्त जीवन की व्यथा है। चाहे हमारा देश हो या विश्व के अन्य देश, हर जगह शोषण, उत्पीड़न का शिकार स्त्री ही रही है। जिस देश में वर्ण भेद, जाति भेद की कलुषित परम्परायें हैं वहॉ दलित स्त्री शोषण की व्यथा और भी गहरी हो जाती है।

स्त्री शिक्षा जैसे क्षेत्रों पर दृष्टिपात करते हैं तो भारत की पहली महिला शिक्षिका के अतुलनीय योगदान को अवश्य स्मरण करना चाहिए । सवित्री बाई फुले सम्पूर्ण समाज के लिए एक आदर्श प्रेरणास्रोत है। समाजसुधारक, जागरूक और भारत के स्त्री आन्दोलन की अगुवा भी थीं। उन्होंने हजारों–हजार साल से शिक्षा से वंचित कर दिये गये शूद्र, अति शूद्र, समाज और स्त्रियों के लिए बन्द दरवाजे को एक ही धक्के में लातमार कर खोल दिया। ''सावित्री बाई फुले ने समय के उस दौर में काम शुरू किया जब धार्मिक अंधविश्वास, रूढ़िवाद, अस्पृश्यता दलितों और स्त्रियों पर मानसिक और शारीरिक अत्याचार अपने चरम पर थे। बालविवाह, सतीप्रथा, बेटियों के जन्मते ही मार देना, विधवा स्त्री के साथ तरह–तरह अमानुषिक व्यवहार, अनमेल विवाह, बहुपत्नी विवाह आदि प्रथायें समाज का खून चूस रही थी। समाज में ब्राह्मणवाद और जातिवाद का बोलबाला था। ऐसे समय सावित्री बाई फुले और ज्योतिबा फुले का इस अन्यायी समाज और उसके अत्याचारों के खिलाफ खड़े हो जाने से सदियों से ठहरे और सड़ रहे गन्दे तालाब में हलचल पैदा हो गयी थी।''[3]

भारतीय संविधान में सभी नागरिकों को न्याय का आश्वासन दिया गया है। सामाजिक न्याय में जन्म, मूलवंश, जाति, धर्म स्त्री–पुरूष के आधार पर किसी प्रकार का कोई भेदभाव नहीं किया जाता है। पं0 जवाहर नेहरू ने सामाजिक न्याय पर अपना विचार इस प्रकार व्यक्ति किया है–''सामाजिक न्याय ने सदैव संवदेनशील व्यक्त्यिों को आकर्षित किया है। मेरे विचार में मार्क्सवाद के प्रति करोड़ों लोगों का बुनियादी आकर्षण इसलिए नहीं था कि उसने वैज्ञानिक सिद्धान्त को अपनाने का प्रयास किया, बल्कि उसका कारण था सामाजिक न्याय के प्रति उसका गहरा लगाव।''[4]

समानता के अधिकार का अर्थ जाति, नस्ल, धर्म, लिंग और जन्म स्थान के आधार पर कानूनी भेदभाव का अभाव तथा यह सभी नागरिकों को समान अधिकार सुनिश्चित करता है। संविधान की उद्देशिका में केवल प्रतिष्ठा और अवसर की संकल्पना का समावेश किया गया है। पुरूष की अपेक्षा अपने जीवन में अधिक समस्याओं का सामना आज भी करती है। जीवन को संघर्ष मानकर अपने लक्ष्यों की तरफ बढ़ना ही विजयी होना है। नारी किसी भी जाति, धर्म की हो वह कष्टों से घिरी रहती है। संघर्ष से ही वह जीवन सुख और सम्मान पाती है। आज भी रूढ़िवादी मानसिकता वाले बेटियों की अपेक्षा बेटों को अधिक सम्मान और महत्व देते हैं, जो किसी भी प्रकार से उचित नहीं है। परिवार में पुरूषों के साथ स्त्रियॉ भी बेटों को महत्व देकर पुरूष सत्ता को महत्व देती हैं, उसे बढ़ावा देती हैं। स्त्रियॉ परिवार के मान–मर्यादा के लिए चुप रहकर सहती हैं, घर परिवार के संस्कार उन्हें और भी कमजोर बना देते हैं । आज भी स्त्री समाज का एक बड़ा हिस्सा सामंतवादी प्रवृत्ति व विचार से ग्रस्त है, वे मर्दवादी सोच के अनुसार व्यवहार कर दुर्बल अधीनस्थ स्त्रियों का शोषण कर वर्चस्व– वादियों का हथियार बन जाती हैं, उन्हें इसका बोध नहीं है। चर्चित कथाकार सम्पादक राजेन्द्र यादव ने माना है कि सत्ताशीर्ष पर पहुॅचने वाली महिलाओं ने पुरूष दृष्टि का ही पालन किया है। ''सही है कि औरतें भी सत्ताशीर्ष पर आयीं हैं, हिन्दुओं में कम, शरीयत के शिकन्जों के बावजूद मुसलमानों में ज्यादा, वहॉ रजिया सुल्तान, चॉद बीबी, हजरत महल से लेकर बेनजीर भुट्टों, हसीना शेख, खालिदा जिया की परम्परा है। अपने यहॉ झांसी की रानी और अहिल्या बाई के बाद सीधी इन्दिरागांधी है, मगर यह सब पुरूषों की विसात पर उन्हीं के नियमों से खेलती रहीं, उनकी मजबूरी थी, उन्होंने स्त्रियों के लिए विशेष रूप से कुछ नहीं किया।''[6]

देश आजाद होने के पश्चात् अनेकोनेक परिवर्तनों के बीच भी स्त्रियॉ समता, सम्मान के अधिकार से वंचित हैं, सामाजिक बन्दिसों, बन्धनों से जकड़े स्त्री जीवन की बद्हाल स्थिति परोक्ष रूप से सोचने पर मजबूर करती है। स्त्री अपने सामाजिक स्थिति एवं अपनी यातना को पहचानने की जद्दोजहद से गुजर रही है, वे अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो रही हैं। वरिष्ठ महिला कथाकार मैत्रेयी पुष्पा ने महिलाओं के प्रति लोकतांत्रिक व्यवहार की अपेक्षा करते हुए कहा है कि–''सच्चा डर है आपका! इस लोकतांत्रित संविधान में उसी को आना चाहिए जो खुद लोकतांत्रिक हो! चिन्ता भी झूठी नहीं है कि जैसे अब तक पुरूष ही पुरूष दिखते रहे हैं। संसद में, अब स्त्रियॉ ही स्त्रियॉ दिखें तो आश्चर्य या अनीति तो मानी जानी चाहिए । अब तो हाल यह है कि चुनाव का टिकट देने में आप जीभर कोताही करते हैं। दलील यह है कि ये जीतेंगी नहीं। सीधी बात यही है कि आपको औरतों से नफरत नहीं, उनकी राजनीतिक चेतना से भय है। ऐसा न होता तो अपने इतने लम्बे कार्यकाल में कम से कम स्त्रियों को निगलते बाजार पर रोक लगाते, उनकी भयानक असुरक्षा पर ध्यान देते। जब इतना भी नहीं किया तो बराबरी पर जगह देना तो बहुत भारी है। आप पक्के परम्परावादी हैं, पूर्वजों के महान संस्कारों के अनुयायी, जिन्होंने औरत को अनपढ़ रखने की प्रथा को बड़ी कुशलता से चलाया।''[7]

महिला आरक्षण विधेयक पारित होने में वर्षों लगने पर मैत्रेयी पुष्पा ने अपना आक्रोश व्यक्त किया है–''औरत कब क्या कर बैठेगी? कौन जान पाया है स्त्री के चरित्र को? यही वजह रही है कि 'महिला आरक्षण बिल को अभी तक इस बहाने से कोने में सरकाते रहे, कभी दलित महिलाओं के अलग से आरक्षण के बहाने तो कभी जातीय समीकरणों की बात कहकर और कभी सवर्ण स्त्रियों की पैठ के बारे में चिन्ता जताकर। बस इसी तरह इन औरतों से विधान सभा और संसद को बचाना है। साथ ही सामाजिक न्याय की दुहाई देते रहना है।''[8]

महिला आरक्षण अधिनियम–2023 संविधान का 128वाँ संशोधन अधिनियम–2023, विधेयक लोकसभा, राज्य विधान सभाओं और दिल्ली विधान सभा में महिलाओं के लिए 1/3 सीटें आरक्षित करता है। यह लोकसभा और राज्य विधान सभाओं में अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित सीटों पर भी लागू होता है। यह विधेयक लागू होने के बाद जनगणना के प्रकाशन के होने के बाद यह आरक्षण प्रभावी होगा। जनगणना के आधार पर महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित करने के लिए परिसीमन किया जायेगा। संसद और राज्य विधान सभाओं में महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित करने के उद्देश्य से संवैधानिक संशोधन–1996, 1998, 1999 व 2008 में प्रस्तावित किये गये थे। महिला आरक्षण विधेयक 12 सितम्बर 1996 को भारत सरकार ने 81वाँ संवैधानिक संशोधन विधेयक पेश किया और 1/3 सीटें आरक्षित करने की मांग की गयी। नयी संसद में पहले ही दिन महिला आरक्षण 128वाँ संशोधन विधेयक कानून मंत्री अर्जुन मेघवाल द्वारा लोकसभा में पेश किया गया। नारी शक्ति वन्दन अधिनियम–2023 सदन में पेश किया जाना ऐतिहासिक निर्णय है। केन्द्र सरकार ने यह विधेयक देश आजाद होने के 75 वर्ष बाद सदन में सफलतापूर्वक पारित करा पाया है। देश आजाद होने के पहले महिलाओं के प्रतिनिधित्व के लिए 1931 में पहला प्रयास हुआ, 1989 में राजीव गांधी ने भी प्रयास किया था, परन्तु अनावश्यक बताकर सदन में इसे खारिज किया गया। संसद के विशेष सत्र में इतिहास रचा गया, जिससे देश और समाज शक्शिाली बनेगा। यह निर्णय स्वर्ण अक्षरों में अंकित होगा, सभी दलों ने अहम भूमिका निभाई है। इस विधेयक के प्रति सभी दलों की नयी सोच है। लोकसभा और विधान सभा में 33 प्रतिशत महिला आरक्षण मील का पत्थर साबित होगा। इसका लक्ष्य होगा राजनीति में महिला सशक्तीकरण का बढ़ता कदम, नीति निर्धारण में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाना, आजादी के 75 वर्षों बाद अमृतकाल में सबका साथ सबका विकास, सबका प्रयास का नारा सफल हुआ। आखिर आधी आबादी को कैसे नकारा जा सकता है। लोकसभा में विधेयक के पक्ष में 454 वोट और विरोध में सिर्फ 2 तथा राज्य सभा में 215 पक्ष में विरोध में शून्य मत पड़ा है। लोकसभा और विधान सभाओं में तथा केन्द्रशासित दिल्ली में कुल 33 प्रतिशत सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित होंगी। पुड्डूचेरी में यह आरक्षण लागू नहीं होगा, क्योंकि वहॉ 1 सीट है, रोटेशन के आधार पर परिसीमन के बाद यह आरक्षण लागू होगा। अगला परिसीमन 2026 में प्रस्तावित है। 27 साल से आधी आबादी को हक देने का विचार चल रहा था। प्रधानमंत्री मोदी ने कहा कि भवन बदलने के साथ भाव भी बदलना चाहिए। लोकसभा में 543 सीटें हैं, इसके पहले यह 545 थी, इनके दो सीटों पर राष्ट्रपति द्वार ऐंग्लो इण्डियन को मनोनीत किया जाता था। यह आरक्षण अब समाप्त कर दिया गया है। वर्तमान में कुल 543 सीटें ही हैं, जिसमें 82 मौजूदा महिला सांसद हैं। आरक्षण लागू होने के बाद यह संख्या 181 हो जायेगी। यह आरक्षण 15 वर्षों तक लागू रहेगा। संसद द्वारा आगे भी बढ़ाया जा सकता है। संसद में महिला प्रतिनिधित्व में भारत और विश्व का आकड़ा इस प्रकार है–संसद में महिला भागीदारी के मामले में 147 देशों में भारत 141वें स्थान पर है । दुनिया में शीर्ष स्थान पर रवान्डा 61 प्रतिशत, क्यूबा 53 प्रतिशत, निकारागुआ 52 प्रतिशत तीन देश है। बंग्लादेश 21 प्रतिशत तथा पाकिस्तान 20 प्रतिशत के साथ भारत से आगे हैं। भारत में सिर्फ 10 राज्य विधान सभाओं में महिला सदस्यों की संख्या 2 अंकों में है। महिला आरक्षण विधेयक के दोनों सदनों में पास हो जाने के बाद राजनीतिक व्यवस्था में आनुपातिक रूप से प्रतिनिधित्व की आवश्यकता बढ़ गयी है। इसे हम एक उदाहरण के तौर पर समझ सकते हैं। एक बार सेनेट्री पैड पर 12 प्रतिशत कर निर्धारित किया गया, जिसके परिणाम स्वरूप यह बहुत सारी महिलाओं की पहुॅच से दूर हो गया। इसके प्रभाव से महिलाओं के स्वास्थ्य पर विपरीत असर हुआ। यह मामला वर्ष 2018 में कोर्ट में पहुॅचा तो कोर्ट के आदेश से सरकार को सेनेट्री पैड टैक्स फ्री करना पड़ा, जहॉ सेनेट्री पैड 42

प्रतिशत महिला ही उपयोग कर पा रही थी। टैक्स फ्री होने पर यह आकड़ा बढ़कर 64 प्रतिशत हो जाता है, इसलिए आवश्यक है, जिसके लिए यह निर्णय लिया जा रहा है उसका रहना जरूरी है।

चुनौतियॉ–

1– महिला नेताओं को ढूंढना राजनीतिक पार्टियों के लिए चुनौती बन सकता है।

2– पिछड़ा और अल्पसंख्यक विरोधी होना । इस विधेयक की चुनौती है।

3– सामान्य सीट पर सक्षम होने पर भी महिला कैंडीडेट को नहीं उतारना।

4– महिला सीट सिर्फ महिला तक सीमित न रह जाय।

5– इस विधेयक को अभी लागू न करने का आरोप लगना भी एक चुनौती है।

6– प्रायोजित नैरेटिव के बीच दूरगामी परिणाम के असल मुद्दों का न आना, राज्य सभा और विधान परिषद में महिलाओं की संख्या कम होना।

7– हर राजनीतिक दलों को अधिक से अधिक महिलाओं को राजनैतिक रूप से प्रशिक्षित करना।

8– परिसीमन के बाद सीटें बदल जायेंगी। क्षेत्रीय पार्टियों का आरोप है कि कुलीन महिलाओं का वर्चस्व होगा। शहरी और पढ़ी–लिखी महिलाओं को ज्यादा अवसर।

9– साक्षरता की कमी, वित्तीय समस्या तथा प्रधानपति जैसे मुद्दे भी चुनौती हैं।

समाधान–

1– नारी शक्ति वन्दन अधिनियम–2023 से महिलाओं को राजनीति में ज्यादा से ज्यादा हिस्सा मिलने की उम्मीद है।

2– इस अधिनियम के तहत महिलाओं के नेतृत्व विकास को बढ़ावा मिलेगा।

3– महिलाओं से जुड़े मुद्दों पर ज्यादा ध्यान दिया जायेगा।

4– विधायिका में महिलाओं का प्रतिनिधित्व बढ़ेगा।

5– महिलाओं को रोजगार, शिक्षा और आर्थिक तरक्की के बराबर मौके मिलेंगे। इससे महिलाएं अपनी हर आकांक्षा को पूरी कर सकेंगी।

6– इस कानून से लोकतंत्र और मजबूत होगा। महिलाओं के आर्थिक सशक्तीकरण को बढ़ावा मिलेगा।

7– महिलाएं अपने जीवन के बारे में निर्णय लेने और अपने समुदायों के समग्र आर्थिक विकास में योगदान दे सकेंगी।

8– देश की तरक्की में योगदान द्वारा परिवार समाज के बन्धनों से मुक्त होकर अपने निर्णयों के निर्माता खुद हो सकेगी।

9– पुरूषों के बराबर समाज में महत्व होगा। महिलाओं के सशक्त होने से पूरा समाज सशक्त होगा। महिला सशक्तीकरण की दिशा में यह विधेयक एक युगान्तकारी कदम है।

निष्कर्ष–

नारी शक्ति वन्दन अधिनियम–2023 के पारित हो जाने से लैंगिक समानता के दिशा में यह एक अहम कदम है, जिससे महिलाओं के राजनैतिक सशक्तीकरण को बढ़ावा मिलेगा। महिलाओं में नेतृत्व की क्षमता पैदा होगी। इस अधिनियम के लागू होने के बाद लोकसभा, राज्य विधान सभा और दिल्ली विधान सभा में महिलाओं के लिए कुल 33 प्रतिशत सीटें आरक्षित होंगी। महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार होगा। रोजगार, शिक्षा, आर्थिक तरक्की के समान अवसर उपलब्ध होंगे। इस विधेयक से पुरूषों के

समान महिलाएं भी अपनी हर आकांक्षा को पूरी कर सकेंगी। महिलाओं में आत्म विश्वास बढ़ेगा, यह सब कुछ देश के लिए अच्छा होगा।

संदर्भ–

1– सुभाष काश्यप, हमारा संविधान नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, नई दिल्ली पृ0 53
2– सुशीला टाकभौरे, शिकन्जे का दर्द, वाणी प्रकाशन दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण–2020 पृ0 196
3– अशोकदास, दलित दस्तक, एक्सपो प्रिन्ट एवं मीडिया प्राइवेट लि0 नई दिल्ली, अंक 08 जनवरी 2018 पृ0 31
4– सुभाष काश्यप, हमारा संविधान नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, नई दिल्ली पृ0 57
5– सोहनलाल शास्त्री, विद्यावाचस्पति, बी0ए0, हिन्दू कोड बिल और डॉ0 अम्बेडकर सम्यक् प्रकाशन 32/3 पश्चिमपुरी, नई दिल्ली सप्तम संस्करण 2011, पृ0 12
6– राजेन्द्र यादव, आदमी की निगाह में औरत, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली चौथा संस्करण 2015 पृ0 60
7– मैत्रेयी पुष्पा, चर्चा हमारा, सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली संस्करण 2011, पृ0 190
8– वही, पृ0 187

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

आगरा जनपद के विधानसभा चुनावों में दलित मतदान व्यवहार : एक विश्लेषण

हेमन्त
शोधार्थी ,शोध केन्द्र–शासकीय एम०एल०बी०उत्कृष्ट महाविद्यालय,ग्वालियर
जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म०प्र०)

सारांश

भारतीय राजनीति में जाति–आधारित विमर्श का मुद्दा हमेशा एक प्रमुख मुद्दा रहा है। स्वतंत्रता के बाद लोकतांत्रिक प्रक्रिया में पिछड़े, दलित व वंचित तबकों का राजनीतिक सशक्तिकरण की दिशा में कई प्रयास किए गए। विशेषकर डॉ० भीमराव अंबेडकर के नेतृत्व और विचारों से प्रेरित होकर दलित राजनीति ने एक वैचारिक आधार प्राप्त किया। इसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए कांशीराम और बहुजन समाज पार्टी (बसपा) ने उत्तर प्रदेश की राजनीति में दलितों को एक मजबूत मतदाता वर्ग के रूप में संगठित किया। 'रजनी कोठारी जैसे राजनीतिक विश्लेषकों ने जातियों के राजनीतिकरण को विशेष महत्व दिया है।' यह शोध पत्र आगरा जिले को अध्ययन क्षेत्र के रूप में चुनता है क्योंकि आगरा ऐतिहासिक रूप से दलित राजनीति का एक महत्वपूर्ण केंद्र रहा है। विगत वर्षों के आगरा जिले में आये विधानसभा के चुनावों के नतीजों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि दलित मतदाता बसपा तक ही सीमित नहीं रहे, बल्कि उन्होंने परिस्थितियों और राजनीतिक रणनीतियों के अनुसार अन्य दलों का समर्थन भी दिया।इस समयावधि में दलित मतदाता व्यवहार में बहुत महत्वपूर्ण परिवर्तन देखे गए। '2007 के आम चुनावों में बसपा को अधिकांश समर्थन प्राप्त हुआ और मायावती के नेतृत्व में बसपा सत्ता में भागीदारी का प्रमुख आश्वासन देने में सफल रही।' लेकिन 2012 और विशेषकर 2017 के आम चुनावों में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) ने दलित मतदाताओं को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए न केवल सामाजिक समीकरणों में परिवर्तन किए बल्कि सबका साथ, सबका विकास जैसे नारों के द्वारा दलित राजनीति की नवीन पारंपरिक आधारभूमि को भी चुनौती दी। स्टडी से स्पष्ट है कि दलित वोट अब एक संगठित वोट बैंक न होकर एक गतिशील और विवेकपूर्ण मतदाता समूह के रूप में उभरा है। उनके राजनीतिक मुद्दे जाति या पहचान तक ही सीमित नहीं हो गए, बल्कि विकास, सामाजिक न्याय, सुरक्षा और प्रतिनिधित्व जैसे मुद्दों ने भी उन्हें प्रभावित किया है।

आगरा जिले का तुलनात्मक अध्ययन (2002–2017) यह संकेत करता है कि बहुजन राजनीति ने दलित मतदाताओं को एक मजबूत राजनीतिक चेतना प्रदान की, लेकिन बदलते सामाजिक–आर्थिक परिवेश और राजनीतिक दलों की नई रणनीतियों के कारण उनके मतदान व्यवहार में विविधता और बदलावशीलता स्पष्ट रूप से उतरती दिखाई देती है। यह अध्ययन न केवल आगरा जिले की राजनीति को समझाने में मददगार है, बल्कि उत्तर प्रदेश और भारतीय लोकतंत्र में दलित राजनीति की बदलावशील दिशा भी उजागर करता है।

मूल शब्दः दलित राजनीति, दलित मतदाता, आगरा जिला, बसपा, भाजपा, समाजवादी पार्टी, चुनावी व्यवहार, उत्तर प्रदेश, 2002–2017

प्रस्तावना

भारतीय लोकतंत्र की सबसे अधिक शक्ति उसकी बहुलतावाद और विविधता में निहित है। यहाँ जाति, धर्म, भाषा और क्षेत्रीय पहचानें राजनीति की दिशा और स्वरूप को गहराई से प्रभावित करती रही हैं। भारतीय राजनीति के परिप्रेक्ष्य में दलित राजनीति का उद्भव सामाजिक न्याय और प्रतिनिधित्व की ऐतिहासिक मांगों से जुड़ा हुआ है। 'डॉ. भीमराव अंबेडकर ने दलित समाज को सामाजिक, शैक्षिक और राजनीतिक अधिकार दिलाने की दिशा में बहुत बड़ा योगदान दिया।' उनके विचारों ने भारतीय लोकतंत्र में दलित चेतना को एक मजबूत आधार प्रदान किया। उत्तर प्रदेश, खासकर पश्चिमी उत्तर प्रदेश और आगरा जिला, दलित राजनीति का एक महत्वपूर्ण केंद्र रहा है। 'बसपा (बहुजन समाज पार्टी) के संस्थापक कांशीराम और बाद में मायावती के नेतृत्व में दलित राजनीति ने नए आयाम स्थापित किए।' बसपा ने 1990 के दशक से लेकर 2000 के दशक तक दलित समाज को एक मजबूत राजनीतिक शक्ति के रूप में संगठित किया। हालांकि, समय के साथ राजनीतिक परिस्थितियों, सामाजिक समीकरणों और चुनावी रणनीतियों में बदलाव ने दलित मतदाता व्यवहार को प्रभावित किया।

'2002 से 2017 का समय अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि इन वर्षों में उत्तर प्रदेश की राजनीति में विस्तृत परिवर्तन आया।' 2002 और 2007 में बसपा को विस्तृत समर्थन प्राप्त हुआ, जबकि 2012 और 2017 में भाजपा ने दलित मतदाताओं को अपने तरफ आकर्षित करने में सफल रही। यह परिवर्तन तो दल–बदल की राजनीति का ही परिणाम नहीं था, बल्कि इससे दलित मतदाताओं की राजनीतिक जागरूकता और प्राथमिकताओं में आए परिवर्तन का दौर भी दिखता है।

यह परिवर्तन आगरा जनपद में भी दिखाई पड़ता है, इसलिए इस अनुसंधान में आगरा जिले का चयन इसलिए किया गया है क्योंकि 'यह प्रदेश में दलित जनसंख्या, सामाजिक आंदोलनों और बसपा की परंपरागत राजनीति का एक महत्वपूर्ण गढ़ माना जाता है।' आगरा जिले में आये विधानसभा एवं लोकसभा चुनावों का तुलनात्मक अध्ययन (2002–2017) हमें यह समझने का मौका प्रदान करता है कि कैसे दलित मतदाता अब किसी एक दल के वोट बैंक न रहकर अपनी राजनीतिक प्राथमिकताओं को समय–समय पर पुनः परिभाषित कर रहे हैं।

अतः यह अध्ययन बहुजन राजनीति और दलित मतदाता व्यवहार की बदलती प्रवृत्तियों को समझने के लिए न केवल आगरा जिले की राजनीति का विश्लेषण करता है बल्कि उत्तर प्रदेश और समग्र भारतीय लोकतंत्र में दलित राजनीति की प्रासंगिकता पर भी प्रकाश डालता है।

अध्ययन का महत्व

- दलित राजनीति की बदलती प्रवृत्तियों को समझने में सहायक।
- उत्तर प्रदेश की चुनावी राजनीति में बहुजन राजनीति की भूमिका को रेखांकित करता है।
- दलित मतदाता व्यवहार को समाजशास्त्रीय और राजनीतिक दृष्टि से समझने का अवसर।
- भविष्य में राजनीतिक दलों की रणनीति और नीतियों के लिए उपयोगी।

- आगरा जिले के अध्ययन से व्यापक स्तर पर दलित राजनीति की दिशा और स्वरूप को समझने में मदद।

शोध पद्धति

यह शोधपत्र आगरा जनपद के विधानसभा के निर्वाचन में दलितों के मतदान व्यवहार पर आधारित है। जिसमें वर्ष 2002 से 2017 के मध्य सम्पन्न हुये चुनावों में दलित मतदाताओं के मतदान व्यवहार को केन्द्र में रखकर अध्ययन व विश्लेषण किया गया है। उक्त शोध पत्र की शोध पद्धति वर्णात्मक एवं तुलनात्मक है। जिसमें वर्ष 2002,2007,2012 व 2017 के विभिन्न चुनावों के पहलुओं एवं मुद्दों को ध्यान में रखकर तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है। यह डिजाइन आगरा जिले में दलित मतदाताओं के राजनीतिक भागीदारी, उनके मतदान पैटर्न, दलित प्रत्याशियों, प्रतिनिधित्व और सामान्य सीटों पर उनकी सफलता का तुलनात्मक विश्लेषण करने में सहायक होगा। जिसमें द्वितीयक स्रोत के रूप में निर्वाचन आयोग से प्राप्त आंकड़े, शोध पत्र, प्रमुख पुस्तकें आदि शामिल हैं।

उद्देश्य

- 2002 से 2017 तक आगरा जिले में दलित मतदाता व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- बसपा,सपा,भाजपा और अन्य दलों की रणनीतियों का विश्लेषण करना।
- दलित मतदाताओं की प्राथमिकताओं और बदलावों की पहचान करना।
- यह जानना कि दलित मतदाता अब भी किसी एक दल तक सीमित हैं या उनकी प्राथमिकताएँ विविधतापूर्ण हो चुकी हैं।
- बहुजन राजनीति के भविष्य पर इस बदलाव का प्रभाव स्पष्ट करना।

अध्ययन की सीमा

- 2002 से 2017 तक आगरा जिले में हुए विधानसभा चुनावों तक सीमित।
- मुख्य रूप से दलित मतदाता व्यवहार और बहुजन राजनीति पर केंद्रित।
- राजनीतिक, सामाजिक एवं चुनावी परिणामों के तुलनात्मक विश्लेषण पर आधारित।

अध्ययन की सीमाएँ

- अध्ययन आगरा जिले तक सीमित है, इसलिए पूरे उत्तर प्रदेश या भारत पर सीधे लागू नहीं किया जा सकता।
- उपलब्ध आंकड़ों एवं चुनावी परिणामों पर आधारित विश्लेषण में कुछ सूचनात्मक सीमाएँ रह सकती हैं।
- मतदाताओं की मानसिकता एवं व्यक्तिगत निर्णयों को पूरी तरह समझना कठिन।
- शोध का कालखंड केवल 2002 से 2017 तक का है, अतः नवीनतम राजनीतिक परिवर्तनों का समावेश नहीं।

आगरा जनपद की राजनीति में दलित

आगरा जनपद उत्तर प्रदेश का एक महत्वपूर्ण जनपद है। दलितों की जनसांख्यिकी दृष्टि से यह प्रदेश में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन करता है। शोधकर्ता के द्वारा आगरा जनपद की राजनीति में दलितों के मतदान व्यवहार के अध्ययन को निम्न सारिणी द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं–

आगरा जनपद की विधानसभा की अनारक्षित एवं आरक्षित सीटों पर दलवार स्थिति

वर्ष	कुल सीट	आरक्षित सीट	अनारक्षित सीट का विवरण	आरक्षित सीट (अनु०जाति) का विवरण
2002	09	2	बसपा–2 भाजपा–4 रालोद–1	भाजपा–1 रालोद–1
2007	09	2	बसपा–4 भाजपा–2 जनमोर्चा–1	बसपा–2
2012	09	2	बसपा–4 भाजपा–2 सपा–1	बसपा–2
2017	09	2	भाजपा–7	भाजपा–2

उक्त सारिणी से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2002 में कुल 9 सीटों में 2 सीटें आरक्षित थी इस चुनाव में भाजपा सर्वाधित 4 अनारक्षित व 1 सीट आरक्षित जीतनें में सफल रही। बसपा जैसे दलित वोट बैंक वाली पार्टी 02 सीट अनारक्षित पर विजयी रही किन्तु आरक्षित सीट जीतने में असफल रही। रालोद जैसी क्षेत्रीय पार्टी 01 अनारक्षित व 01 आरक्षित सीट पर विजयी रही। समाजवादी पार्टी जैसे महत्वपूर्ण दल ने किसी भी सीट पर जीत दर्ज नहीं कर सकी।

वर्ष 2007 में आगरा जनपद की कुल 09 सीटों में 4 अनारक्षित व 2 आरक्षित सीट पर बसपा ने जीत दर्ज की। भाजपा 2 अनारक्षित सीट व 01 सीट पर जनमोर्चा विजयी रही। इसी क्रम में वर्ष 2012 में बसपा पुनः 4 अनारक्षित व 2 आरक्षित सीटें जीतने में सफल रही। भाजपा 2 आरक्षित सीट पर व 01 सीट समाजवादी पार्टी जीतने में सफल रही। वर्ष 2017 का चुनाव भाजपा की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा जिसमें कुल 09 सीटों में सभी सीटों पर उसने जीत दर्ज की।

उक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि आगरा जनपद में बसपा का वर्ष 2007 व 2012 में बहुमत रहा। इसका कारण राजनीतिक नेतृत्व, सोशल इन्जीनियरिंग, सुदृण कानून व्यवस्था व पूर्व में बसपा के शासन काल की महत्वपूर्ण उपलब्धियां आदि कारक थे। जिसने दलित मतदान व्यवहार को प्रभावित किया इसी क्रम में 2017 के चुनावों में दलितों का वोट बैंक भाजपा की तरफ अग्रसर हुआ तथा कुल 09 सीटों में से सभी पर उसकी निर्णायक विजय हुयी। इसका श्रेय भाजपा की बेहतर चुनाव रणनीति, राजनीतिक मुद्दे, चुनावी घोषणा–पत्र आदि को दिया जा सकता है।

राज्य विधानसभा की अनारक्षित सीट पर दलित उम्मीदवारों की स्थिति का विश्लेषण

वर्ष	कुल उम्मीदवार	अनु० जाति के उम्मीदवार	जीते उम्मीदवार	जमानत की स्थिति
2002	93	7	0	जब्त
2007	119	19	0	जब्त
2012	105	10	0	जब्त
2017	105	12	0	जब्त

उक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि अनारक्षित सीटों पर दलित उम्मीदवारों की उम्मीदवारी अत्यन्त कम रही है। वर्ष 2002 से विभिन्न विधान सभा के चुनावों का विश्लेषण करें तो पाते हैं कि 2002 की तुलना में उम्मीदवारों की सख्या में वृद्धि हुई है। प्रमुख तथ्य यह रहा है कि उक्त 4 विधानसभा चुनावों में दलित वर्ग का कोई भी उम्मीदवार अनारक्षित सीट पर जीत दर्ज नहीं कर पाया है। यहां तक की अधिकतम उम्मीदवारों की जमानत भी जब्त हो गयी है।

निष्कर्ष

- 2002–2012 तक दलित वोटरों का मुख्य आधार बसपा था, लेकिन 2017 के दौरान भाजपा ने दलित वोटों में वृद्धि की।
- 2002–2012 के मध्य दलित उम्मीदवारों ने सामान्य सीटों पर उम्मीदवारी में वृद्धि हुयी, जिससे उनकी राजनीतिक भागीदारी में सुधार हुआ।
- 2017 के विधानसभा निर्वाचन में विकास, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा जैसे मुद्दे अब दलित मतदाता निर्णय में अधिक महत्वपूर्ण रहे हैं, जबकि केवल जातिगत पहचान की भूमिका घट गई है।
- आगरा जनपद की राजनीति में समाजवादी पार्टी की राजनीतिक भागीदारी वर्ष 2002–2017 के मध्य अन्य दलों की अपेक्षा कम रही।
- वर्ष 2012–2017 के मध्य विधानसभा चुनावों में आगरा जनपद में क्षेत्रीय दल महत्वपूर्ण भूमिका में रहे।

सुझाव

दलितों की राजनीतिक भागीदारी बढ़ाने के लिए सामुदायिक प्रयास करने की आवश्यकता है।

- दलितों की सामाजिक व शैक्षणिक स्थिति में सुधार की महती आश्वयकता है।
- दलितों के आर्थिक सशक्तीकरण को बढ़ाकर राजनीतिक भागीदारी को बढ़ाया जा सकता है।
- दलितों की राजनीतिक चेतना को बढ़ाने व वोट के मूल्य के महत्व को समझाने की आवश्यकता है।
- विभिन्न राजनीतिक दलों के द्वारा दलितों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए दलित नेतृत्व को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

References-

1. कोठारी, रजनी पॉलिटिक्स इन इण्डिया, ओरिएण्ट ब्लैक स्वान पब्लिकेशन नई दिल्ली–1970।
2. भारत निर्वाचन आयोग–उत्तर प्रदेश विधानसभा आम निर्वाचन 2007
3. मायावती 'मेरे संघर्षमय जीवन एवं बहुजन मूवमेंट का सफरनामा भाग–1', बहुजन समाज पार्टी केन्द्रीय कार्यालय, नई दिल्ली।
4. मित्र, धीरज प्रताप 'बहुजन समाज पार्टी सामाजिक न्याय से राजनीतिक हासिये तक' इन्टरनेशनल जर्नल आर्टस्, ह्यूमिनिटीस एण्ड सोशल स्टडीज, गाजियाबाद।
5. भारत निर्वाचन आयोग उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव 2007 परिणाम
6. एनडीटीवी समाचार वेबसाइट– https://ndtv.in/india/agra-is-capital-of-dalits-bahujan-samaj-party-has-not-yet-won-lok-sabha-elections-on-this-seat-5520122
7. भारत निर्वाचन आयोग उ०प्र० विधानसभा निर्वाचन परिणाम 2002,2007,2012 और 2017 के आंकड

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

युवाओं पर सूचना एवं संचार माध्यमों का प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ आदित्य कुमार,
सहायक आचार्य (समाजशास्त्र)
शहीद स्मारक राजकीय महाविद्यालय
युसूफपुर, गाजीपुर

सारांश

सोशल मीडिया आधुनिक जीवन का अभिन्न हिस्सा बन चुका है, और इसकी प्रभावशीलता ने समाज, परिवार और व्यक्तिगत स्तर पर बड़ी भूमिका निभाई है। एक ओर यह जानकारी साझा करने, लोगों को जोड़ने और अवसरों के विस्तार में सहयोग करता है, वहीं दूसरी ओर इसके दुष्प्रभाव भी स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। तेजी से फैलने वाली गलत सूचनाएँ, साइबर बुलिंग, निजी डेटा की असुरक्षा और निरंतर तुलना की प्रवृत्ति ने युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य को चुनौती दी है। विशेष रूप से किशोरों में फ़िल्टर की संस्कृति, अवास्तविक जीवनशैली और लाइक-कमेंट की दौड़ आत्मविश्वास को प्रभावित करती है।सामाजिक संबंधों में भी बदलाव देखा जा रहा है—ऑनलाइन बातचीत बढ़ने से वास्तविक संवाद कम हो रहा है और व्यक्ति धीरे-धीरे आभासी दुनिया पर अधिक निर्भर होता जा रहा है। परिवारों में संवाद की कमी और डिजिटल गैप जैसी समस्याएँ भी उभर रही हैं। इसके बावजूद, सोशल मीडिया को पूरी तरह नकारात्मक नहीं माना जा सकता; जागरूकता फैलाने, प्रतिभा दिखाने, शिक्षा प्राप्त करने और वैश्विक समुदाय से जुड़ने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है।अंततः आवश्यक यह है कि उपयोग नियंत्रित, सुरक्षित और उद्देश्यपूर्ण हो। डिजिटल साक्षरता, समय-प्रबंधन और सकारात्मक उपयोग की आदतें ही सोशल मीडिया को अवसरों का मंच बना सकती हैं, न कि दबाव का कारण।

मुख्य शब्द - सोशल मीडिया डिजिटल साक्षरता मानसिक स्वास्थ्य साइबर बुलिंग गलत सूचना ऑनलाइन पहचान गोपनीयता सामाजिक संबंध

प्रस्तावना

वर्तमान वैश्वीकरण और डिजिटल क्रांति के युग में सूचना एवं संचार माध्यमों (ICT) ने समाज के प्रत्येक वर्ग को प्रभावित किया है, परंतु युवाओं पर इसका प्रभाव सबसे अधिक स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। बीसवीं शताबी और इक्कीसवीं सदी के प्रारम्भिक वर्षों में जहाँ मीडिया मुख्यतः मुद्रित अख़बार, रेडियो और टेलीविज़न तक सीमित था, वहीं आज इंटरनेट, स्मार्टफोन, सोशल मीडिया, ओटीटी प्लेटफॉर्म, डिजिटल ऐप्स और ऑनलाइन गेमिंग जैसे नवीन साधनों ने संचार की प्रकृति एवं गति दोनों को पूरी तरह बदल दिया है। सूचना का प्रवाह अत्यंत तीव्र हो गया है, जिससे युवा वर्ग के सीखने के तरीके, सोचने की शैली, सामाजिक संबंधों, पहचान निर्माण और दैनिक जीवन-व्यवहार में उल्लेखनीय परिवर्तन देखने को मिलते हैं।समाजशास्त्रीय दृष्टि से मीडिया केवल मनोरंजन भर का साधन नहीं है, बल्कि यह सामाजिक वास्तविकता को गढ़ने, दृष्टिकोण निर्मित करने, समूह-व्यवहार को प्रभावित करने तथा सामाजिककरण की प्रक्रिया को पुनर्गठित करने वाला शक्तिशाली माध्यम बन चुका है। आज के युवाओं का बड़ा हिस्सा अपने जीवन के अनेक निर्णय—जैसे करियर,

शैली, संबंध, सामाजिक व्यवहार, राजनीतिक रुचियाँ और सांस्कृतिक पसंद—डिजिटल माध्यमों से प्राप्त सूचनाओं के आधार पर करता है। इस प्रकार मीडिया युवाओं के सामाजिक अनुभवों का एक महत्वपूर्ण आधार बन गया है। शोध बताते हैं कि सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जैसे इंस्टाग्राम, यूट्यूब, स्नैपचैट, व्हाट्सऐप और एक्स (ट्विटर) युवाओं की संवाद शैली, समय-प्रबंधन, आत्म-छवि, और यहां तक कि भावनात्मक संतुलन पर भी महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं।सूचना एवं संचार माध्यमों के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार के प्रभाव युवा वर्ग में स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं। सकारात्मक रूप से ये माध्यम उन्हें ज्ञान, सूचना, कौशल, सामाजिक जागरूकता और वैश्विक दृष्टिकोण प्रदान करते हैं। ऑनलाइन शिक्षा, ई-लर्निंग प्लेटफॉर्म और डिजिटल पुस्तकालयों ने उनकी सीखने की क्षमताओं में नई संभावनाएँ खोल दी हैं। वहीं दूसरी ओर, गलत सूचना का प्रसार, साइबर बुलिंग, गोपनीयता का हनन, ऑनलाइन लत, अवास्तविक मानकों का दबाव और सामाजिक तुलना जैसी समस्याएँ भी युवाओं के मानसिक व सामाजिक स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं। समाजशास्त्रीय सिद्धांतों—जैसे सामाजिक अधिगम सिद्धांत, उपभोग संस्कृति सिद्धांत और मीडिया प्रभाव सिद्धांत—के अनुसार मीडिया युवाओं के व्यवहार और संस्कृति को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में नियन्त्रित करता है।

भारत जैसे विविधतापूर्ण समाज में जहाँ युवा आबादी बड़ी संख्या में है, वहाँ सूचना एवं संचार माध्यमों का प्रभाव और भी अधिक महत्त्वपूर्ण बन जाता है। डिजिटल इंडिया, 5G तकनीक, सस्ते स्मार्टफोनों और इंटरनेट की उपलब्धता ने मीडिया उपयोग को व्यापक स्तर पर बढ़ाया है। ऐसे में युवा पीढ़ी के सामाजिकरण एवं व्यक्तित्व-निर्माण में मीडिया की भूमिका को समझना न केवल अकादमिक दृष्टि से आवश्यक है, बल्कि नीति-निर्माताओं, शिक्षकों, अभिभावकों और समाजशास्त्रियों के लिए भी अत्यंत उपयोगी है।

साहित्य सर्वेक्षण

युवाओं पर सूचना एवं संचार माध्यमों के प्रभाव को समझने के लिए कई विद्वानों ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। मार्शल मैक्लुहान की पुस्तक "Understanding Media" (1964) में यह स्थापित किया गया कि माध्यम ही संदेश होता है, अर्थात संचार उपकरण स्वयं समाज की संरचना और मानव व्यवहार को प्रभावित करते हैं। यह विचार आधुनिक डिजिटल युग में और अधिक प्रासंगिक है, जहाँ मीडिया युवा पहचान और सामाजिक संपर्कों को गहराई से आकार देता है।

डेविड बकिंघम की "Youth, Identity and Digital Media" (2008) युवाओं के डिजिटल अनुभवों, उनके ऑनलाइन व्यवहार और मीडिया के माध्यम से निर्मित पहचान पर विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करती है। बकिंघम बताते हैं कि डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म न केवल सामाजिक अभिव्यक्ति का साधन हैं, बल्कि नए सामाजिक- सांस्कृतिक संबंधों के निर्माण का माध्यम भी हैं।

शेरी टर्कल की "Alone Together" (2011) यह दर्शाती है कि तकनीक के अत्यधिक उपयोग से युवा आभासी दुनिया में तो अधिक जुड़ते हैं, परन्तु वास्तविक सामाजिक संबंध कमजोर पड़ सकते हैं। वह बताती हैं कि डिजिटल संपर्क सुविधाजनक होने के बावजूद भावनात्मक दूरी और सामाजिक अलगाव बढ़ा सकते हैं।

उद्देश्य: युवाओं के सामाजिकरण, व्यवहार, पहचान निर्माण और दैनिक जीवन पर सूचना एवं संचार माध्यमों के विविध प्रभावों का विश्लेषण करना।

उपकल्पना:

सूचना एवं संचार माध्यमों का बढ़ता उपयोग युवाओं की सोच, व्यवहार और सामाजिक संबंधों में महत्वपूर्ण परिवर्तन उत्पन्न करता है।

तथ्य संकलन के स्रोत

द्वितीयक स्रोतों के माध्यम से प्राप्त सामग्री का उपयोग किया जाएगा। इनमें समाजशास्त्र, मीडिया अध्ययन और युवा व्यवहार से संबंधित प्रकाशित पुस्तकें, शोध-पत्र, अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय जर्नल, विश्वविद्यालयीय शोध-प्रबंध, सरकारी रिपोर्टें, प्रकाशित डिजिटल मीडिया उपयोग संबंधी सर्वेक्षण शैक्षणिक वेबसाइटें, ई-लाइब्रेरी, समाचार से प्राप्त किया गया है

इक्कीसवीं सदी का समाज तकनीकी प्रगति और संचार क्रांति के कारण अभूतपूर्व परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है। सूचना एवं संचार माध्यम—जैसे टेलीविजन, रेडियो, अख़बार, इंटरनेट, मोबाइल फोन, सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म, डिजिटल ऐप, ऑनलाइन गेमिंग और स्ट्रीमिंग सेवाएँ—न केवल जानकारी देने वाले साधन हैं, बल्कि वे सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक व्यवहार, मूल्य-व्यवस्था और मानवीय संबंधों को व्यापक रूप से प्रभावित कर रहे हैं। इन माध्यमों का सबसे अधिक प्रभाव जिस सामाजिक समूह पर दिखाई देता है वह है—युवा वर्ग। युवा समाज का वह हिस्सा है जो न केवल तेजी से सीखता है, बल्कि नई तकनीकों को अपनाने में भी अग्रणी रहता है। इसलिए सूचना एवं संचार माध्यमों का युवा जीवन पर प्रभाव समझना समाजशास्त्रीय दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है।युवाओं के लिए ICT (Information and Communication Technology) केवल मनोरंजन या संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि ज्ञान, पहचान, अभिव्यक्ति, सामाजिक सहभागिता और भविष्य के अवसरों का प्रमुख स्रोत बन गया है। सोशल मीडिया के माध्यम से युवा वैश्विक स्तर पर अपने विचार साझा कर सकते हैं, नई मित्रताएँ स्थापित कर सकते हैं, अपनी प्रतिभा दिखा सकते हैं और सामाजिक आंदोलनों का हिस्सा बन सकते हैं। डिजिटल तकनीक ने उनके सामने एक ऐसी दुनिया खोली है जहाँ भौगोलिक सीमाएँ लगभग समाप्त हो गई हैं। इंटरनेट और मोबाइल तकनीक ने वे सारे संसाधन उनकी पहुँच में ला दिए हैं जो कभी केवल विकसित देशों या उच्च वर्गों तक सीमित थे। इस संदर्भ में समाजशास्त्र यह अध्ययन करता है कि यह बदलाव युवाओं के सामाजिकरण, व्यवहार, मूल्य और सामाजिक पहचान को किस प्रकार रूपांतरित करता है।यदि हम युवाओं की मीडिया-आधारित जीवनशैली को समझना चाहें, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि उनका दैनिक जीवन सूचना एवं संचार माध्यमों से अत्यधिक प्रभावित है। वे सुबह उठते ही मोबाइल पर संदेश, नोटिफिकेशन, सोशल मीडिया अपडेट, समाचार और मनोरंजन सामग्री की ओर आकर्षित हो जाते हैं। ऑनलाइन शिक्षा, डिजिटल असाइनमेंट, वर्चुअल कक्षाएँ, इंटरनेट आधारित शोध, और ई-लर्निंग के कारण पढ़ाई का स्वरूप भी बदल गया है। डिजिटल गेमिंग, वीडियो स्ट्रीमिंग और सोशल मीडिया क्रिएटिविटी (रील, वीडियो, पोस्ट, ब्लॉग) ने मनोरंजन के तरीकों को भी पूरी तरह नए रूप में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार युवाओं का समय, रुचियाँ, आदतें, सामाजिक संपर्क और पहचान निर्माण मीडिया द्वारा आकार दिए जा रहे हैं। समाजशास्त्र के विभिन्न सिद्धांत—जैसे प्रतीकात्मक अंतःक्रियावाद, सांस्कृतिक अध्ययन, उत्तर-आधुनिकतावाद और तकनीक-समाज संबंध—यह बताते हैं कि मीडिया एक नई सामाजिक वास्तविकता (social reality) का निर्माण करता है, जिसे युवा अक्सर वास्तविकता का विस्तार मान लेते हैं। इस प्रभाव के कारण युवा केवल उपभोक्ता नहीं रहते, बल्कि डिजिटल दुनिया के सक्रिय निर्माता भी बन जाते हैं।सूचना एवं संचार माध्यमों के सकारात्मक प्रभावों की बात करें तो इनके द्वारा युवाओं को ज्ञान और सूचना की अपरिमित दुनिया तक पहुँच मिलती है। स्कूल और कॉलेज की सीमाओं से परे जाकर वे ऑनलाइन प्लेटफ़ॉर्मों से नए विषय, कौशल, भाषाएँ और तकनीकें सीख सकते हैं। यह नई पीढ़ी इंटरनेट के माध्यम से न केवल अकादमिक ज्ञान प्राप्त करती है, बल्कि आर्थिक अवसर भी खोजती है—जैसे फ्रीलांसिंग, कंटेंट क्रिएशन, ऑनलाइन रोजगार, डिजिटल मार्केटिंग, और स्टार्टअप संस्कृति। सोशल मीडिया युवाओं को आत्म-अभिव्यक्ति के मंच प्रदान करता है जहाँ वे साहित्य, संगीत, नृत्य, कला या किसी भी रचनात्मक गतिविधि को प्रस्तुत कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त युवा सामाजिक मुद्दों—जैसे पर्यावरण संरक्षण, लैंगिक समानता, मानवाधिकार, सामाजिक न्याय, स्वास्थ्य, शिक्षा और लोकतांत्रिक अधिकारों—पर भी खुलकर अपनी आवाज़ उठाते हैं। इस प्रकार ICT युवाओं को सामाजिक जागरूकता, आत्मविश्वास और नागरिक सहभागिता के लिए प्रेरित करता है। डिजिटल दुनिया के नकारात्मक प्रभाव भी चिंताजनक हैं। अत्यधिक स्क्रीन समय, सतही मनोरंजन, गलत सूचना, अफवाहें, तुलना संस्कृति, गलत आदर्श, लोकप्रियता का दबाव, गोपनीयता का संकट और ऑनलाइन विवाद आज के युवा जीवन के प्रमुख मुद्दे

बन चुके हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से देखा जाए तो सोशल मीडिया युवाओं के सामने ऐसी दुनिया प्रस्तुत करता है जिसमें सब कुछ आकर्षक, सफल और परिपूर्ण दिखाई देता है, जबकि वास्तविक जीवन उतना सरल नहीं होता। यह अंतर कई बार युवा मन में दबाव, हताशा, भ्रम और आत्म-संदेह जैसी भावनाएँ पैदा कर सकता है। इसके अलावा डिजिटल स्पेस में मौजूद प्रतिस्पर्धा, लोकप्रियता की दौड़ और 'लाइक–फ़ॉलोअर संस्कृति' युवा आत्म-छवि को प्रभावित करती है। कई युवा आभासी दुनिया में इतनी गहराई से उलझ जाते हैं कि वास्तविक सामाजिक संबंध कमजोर होने लगते हैं। परिवार और समुदाय आधारित सामाजिक समर्थन की जगह आभासी संपर्क लेने लगते हैं, जो कई बार स्थायी या विश्वसनीय नहीं होते। ये चुनौतियाँ दर्शाती हैं कि ICT युवाओं के विकास पर बहुआयामी प्रभाव डालता है—कभी सकारात्मक रूप में, तो कभी जोखिमपूर्ण रूप में। इन परिस्थितियों में यह समाजशास्त्रीय अध्ययन आवश्यक हो जाता है कि युवाओं की डिजिटल आदतों, उपयोग की प्रवृत्तियों, सामाजिक जीवन में ICT की भूमिका और इसके मनो-सामाजिक प्रभावों को गहराई से समझा जाए। आज शहरी और ग्रामीण युवाओं के बीच डिजिटल अवसरों में भिन्नता दिखाई देती है, जिसे "डिजिटल विभाजन" कहा जाता है। आर्थिक स्तर, परिवार की तकनीकी समझ, शिक्षण संस्थानों का वातावरण और सामाजिक संरचनाएँ यह तय करते हैं कि युवा ICT का कितना और किस प्रकार उपयोग करेंगे। ऑनलाइन समुदाय, इन्फ्लुएंसर संस्कृति, डिजिटल फैशन, मीम संस्कृति और वर्चुअल नेटवर्क नए सामाजिक समूहों का रूप ले रहे हैं। यह अध्ययन इस बात की भी खोज करता है कि युवा अपनी नई पहचान कहाँ से ग्रहण करते हैं—क्या यह पहचान मीडिया द्वारा निर्मित आदर्शों से प्रभावित है या उनके वास्तविक अनुभवों से?समाजशास्त्रीय दृष्टि से ये सभी पहलू बताते हैं कि सूचना एवं संचार माध्यम केवल तकनीकी प्रगति का संकेत नहीं, बल्कि युवा जीवन के सामाजिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक आयामों को गहराई से बदलने वाली शक्ति हैं। इसलिए ICT के प्रभावों को समझना युवाओं के सर्वांगीण विकास, सामाजिक संबंधों के बदलाव और नई सामाजिक चुनौतियों का आकलन करने के लिए अनिवार्य है।

महत्व

सूचना एवं संचार माध्यमों के तेजी से फैलते प्रभाव ने आधुनिक समाज की संरचना को गहराई से प्रभावित किया है, और इस प्रभाव का केंद्र बिंदु युवा वर्ग है। इसलिए युवाओं पर ICT के प्रभाव का अध्ययन समाजशास्त्रीय दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण बन जाता है। यह अध्ययन समझने में मदद करता है कि डिजिटल तकनीक किस प्रकार युवाओं के सामाजिकरण, व्यवहार, मूल्य, निर्णय क्षमता और पहचान निर्माण को प्रभावित करती है। आज युवा शिक्षा, मनोरंजन, संवाद, सामाजिक जुड़ाव और अवसरों के लिए मुख्यतः डिजिटल माध्यमों पर निर्भर हैं, जिससे उनके सोचने और जीवन को संगठित करने के तरीके में महत्वपूर्ण परिवर्तन आ रहा है। यह अध्ययन नीति-निर्माताओं, शिक्षकों, अभिभावकों और समाजशास्त्रियों को यह समझने में सहायता करता है कि डिजिटल मीडिया के लाभों को कैसे बढ़ाया जाए और संभावित जोखिमों—जैसे गलत सूचना, ऑनलाइन दबाव, गोपनीयता संकट और सामाजिक दूरी—को कैसे कम किया जाए। इसके माध्यम से समाज यह जान सकता है कि युवा किन नई चुनौतियों और संभावनाओं का सामना कर रहे हैं तथा उनके लिए सुरक्षित, संतुलित और सकारात्मक मीडिया वातावरण कैसे बनाया जा सकता है।इस प्रकार यह अध्ययन न केवल शैक्षणिक क्षेत्र में योगदान देता है, बल्कि युवा विकास और सामाजिक कल्याण की दिशा में महत्वपूर्ण मार्गदर्शन भी प्रदान करता है।

सकारात्मक प्रभाव

सूचना एवं संचार माध्यमों ने युवाओं के जीवन में कई सकारात्मक बदलाव लाए हैं। सबसे पहले, ये माध्यम ज्ञान और सूचना का व्यापक स्रोत प्रदान करते हैं, जिससे युवा किसी भी विषय पर तुरंत जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और अपनी शैक्षणिक क्षमता बढ़ा सकते हैं। ऑनलाइन शिक्षा, डिजिटल लाइब्रेरी और ई-लर्निंग प्लेटफ़ॉर्म ने सीखने की प्रक्रिया को अधिक सुलभ और रोचक बनाया है।

इसके अलावा, सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म युवाओं को अपनी अभिव्यक्ति और रचनात्मकता प्रदर्शित करने का अवसर देते हैं। वे कला, संगीत, लेखन और तकनीकी कौशल को बड़े मंच पर प्रस्तुत कर सकते हैं। डिजिटल नेटवर्किंग उन्हें वैश्विक स्तर पर नए विचारों, संस्कृतियों और समुदायों से जोड़ती है, जिससे उनका दृष्टिकोण व्यापक होता है और सामाजिक समझ बढ़ती है।

साथ ही ICT युवाओं में सामाजिक जागरूकता, नेतृत्व क्षमता और नागरिक भागीदारी को भी प्रोत्साहित करता है। पर्यावरण, मानवाधिकार और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों पर युवा सक्रिय रूप से अभियान चला सकते हैं।

नकारात्मक प्रभाव

सूचना एवं संचार माध्यमों के अत्यधिक उपयोग से युवाओं पर कई नकारात्मक प्रभाव भी देखने को मिलते हैं। सबसे महत्वपूर्ण समस्या है अत्यधिक स्क्रीन समय, जिसके कारण पढ़ाई, नींद और दैनिक दिनचर्या में असंतुलन आ सकता है। सोशल मीडिया पर लगातार तुलना और लोकप्रियता की होड़ से कई युवा मानसिक दबाव, चिंता या आत्म-संदेह का अनुभव कर सकते हैं। इसके अलावा, डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म पर उपलब्ध सतही या अपूर्ण जानकारी कभी-कभी गलत धारणा और भ्रम पैदा कर देती है। अफवाहों, फेक न्यूज़ और भ्रामक सामग्री से युवा आसानी से प्रभावित हो सकते हैं। साइबर-बुलिंग, ऑनलाइन विवाद और निजी जानकारी के दुरुपयोग का जोखिम भी बढ़ गया है।मीडिया द्वारा प्रस्तुत अवास्तविक जीवनशैली और आदर्श कई बार युवाओं को वास्तविकता से दूर कर देते हैं, जिससे उनके आत्म-छवि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। आभासी संपर्कों पर अत्यधिक निर्भरता से परिवार और वास्तविक सामाजिक संबंध कमजोर पड़ने की संभावना भी बढ़ जाती है।

वर्तमान स्थिति

वर्तमान समय में सूचना एवं संचार माध्यम युवाओं के दैनिक जीवन का अभिन्न हिस्सा बन चुके हैं। स्मार्टफोन, इंटरनेट और सोशल मीडिया की आसान उपलब्धता ने इन्हें हर उम्र के युवाओं तक पहुँचा दिया है। आज युवा शिक्षा, मनोरंजन, संवाद, नौकरी की तैयारी, सामाजिक सहभागिता और व्यक्तिगत अभिव्यक्ति—लगभग हर गतिविधि के लिए डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म पर निर्भर हो गए हैं। ऑनलाइन कक्षाएँ, ई-लर्निंग टूल, डिजिटल नोट्स और वर्चुअल समूह अध्ययन नई शैक्षणिक संस्कृति का निर्माण कर रहे हैं। इसी तरह इंस्टाग्राम, यूट्यूब, स्नैपचैट और अन्य सोशल मीडिया ऐप युवा पहचान, फैशन और संवाद शैली को प्रभावित कर रहे हैं।हालांकि सकारात्मक बदलावों के साथ कुछ चुनौतियाँ भी उभरी हैं। स्क्रीन समय लगातार बढ़ रहा है, जिससे समय प्रबंधन और एकाग्रता संबंधी समस्याएँ सामने आती हैं। गलत सूचना और फेक न्यूज़ का प्रसार युवाओं की समझ को प्रभावित कर रहा है। साइबर-बुलिंग, गोपनीयता के उल्लंघन और ऑनलाइन प्रतियोगिता के कारण कई युवा मानसिक बोझ महसूस कर सकते हैं।फिर भी, डिजिटल माध्यमों ने युवाओं को वैश्विक दृष्टिकोण, तकनीकी कौशल और रचनात्मक अवसरों से जोड़ा है। वर्तमान स्थिति दर्शाती है कि ICT युवा जीवन का केंद्रीय तत्व बन चुका है, जिसके प्रभावों का संतुलित उपयोग अत्यंत आवश्यक है।

निष्कर्ष

युवाओं पर सूचना एवं संचार माध्यमों के प्रभाव का समाजशास्त्रीय अध्ययन यह दर्शाता है कि डिजिटल तकनीक आधुनिक युवा जीवन का केंद्रीय और अपरिहार्य हिस्सा बन चुकी है। मीडिया न केवल उनकी जानकारी और मनोरंजन का स्रोत है, बल्कि यह उनके विचार, दृष्टिकोण, पहचान, व्यवहार, सामाजिक संबंधों और आकांक्षाओं को भी गहराई से आकार देता है। स्मार्टफोन, इंटरनेट और सोशल मीडिया ने युवा पीढ़ी को वैश्विक दुनिया से जोड़ा है, जहाँ उन्हें असीमित ज्ञान, नए कौशल, रोजगार अवसर और अभिव्यक्ति के मंच उपलब्ध होते हैं। इसने युवा चेतना को अधिक जागरूक, तकनीक-संपन्न और रचनात्मक बनाया है।इसके बावजूद डिजिटल माध्यमों के प्रभाव पूरी तरह सकारात्मक नहीं हैं। अत्यधिक स्क्रीन समय, सतही तुलना संस्कृति, गलत सूचना, निजी गोपनीयता का संकट और साइबर-संबंधी जोखिम आज के युवाओं के लिए गंभीर चुनौतियाँ बनकर उभरे हैं। मीडिया द्वारा प्रस्तुत अवास्तविक आदर्श कई बार युवा

आत्म-छवि को प्रभावित कर सकते हैं और वास्तविक सामाजिक संबंधों में दूरी ला सकते हैं। इन स्थितियों के कारण यह आवश्यक हो जाता है कि युवा ICT का संतुलित, जिम्मेदार और उद्देश्यपूर्ण उपयोग करें।समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह अध्ययन इस बात को रेखांकित करता है कि परिवार, विद्यालय, समाज और नीति-निर्माताओं को मिलकर युवाओं को डिजिटल साक्षरता, तथ्य-जांच की क्षमता और सुरक्षित ऑनलाइन व्यवहार के लिए सक्षम बनाना चाहिए। सकारात्मक और सुरक्षित मीडिया वातावरण युवाओं के समग्र विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- बेरल्सन, बी. (2011). संचार अनुसंधान के सिद्धांत. नई दिल्ली: पब्लिकेशन डिवीजन।
- कुमार, के. (2015). मीडिया, समाज और संस्कृति. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
- मैकक्वेल, डी. (2013). मैकक्वेल्स मास कम्युनिकेशन थ्योरी. लंदन: सेज पब्लिकेशंस।
- जोशी, ओ. पी. (2018). भारतीय युवा और सोशल मीडिया. मुंबई: ओरिएंट प्रेस।
- सिंह, एस. (2016). डिजिटल संस्कृति और समाज. दिल्ली: अटलांटिक पब्लिशर्स।
- लाजर्सफेल्ड, पी., & मर्टन, आर. (2012). संचार के प्रभाव सिद्धांत. न्यूयॉर्क: फ्री प्रेस।
- चंद्रा, आर. (2019). मीडिया और समाज: एक विश्लेषण. जयपुर: श्रेष्ठ प्रकाशन।
- गोयल, एस. (2017). सूचना तकनीक और युवा पीढ़ी. वाराणसी: ज्ञान भारती प्रकाशन।
- शर्मा, बी. एल. (2020). समाजशास्त्र के सिद्धांत और मीडिया अध्ययन. नई दिल्ली: पुस्तकालय प्रकाशन।
- प्रसाद, ए. (2014). इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का सामाजिक प्रभाव. पटना: जनमित्र प्रकाशन।
- राव, एम. (2015). इंटरनेट संस्कृति और सामाजिक परिवर्तन. हैदराबाद: यूनिवर्सल बुक हाउस।

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

डॉ. भीम राव अम्बेडकर के आर्थिक चिन्तन और विचारात्मक विशलेषण

भास्कर प्रसाद मिश्रा

अर्थशास्त्र विभाग

अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश

सारांश

आर्थिक विचारकों के मन में हमेशा आर्थिक विकास का प्रश्न होता है। उन्होंने समसामयिक परिस्थितियों से उबरने के लिए आर्थिक समस्याओं पर कुछ विचार और समाधान रखे हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि वे विचार और समाधान आज पुराने हो चुके हैं। उन विचारों में वर्तमान अर्थव्यवस्था को सही दिशा में निर्देशित करने की क्षमता है। भारत के मामले में अनेक विशेषज्ञों ने सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र से संबंधित अपने बहुमूल्य विचार रखे हैं। हालांकि उनके विचार सिद्धांत के रूप में नहीं हैं लेकिन आर्थिक विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। जब हम डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के आर्थिक विचारों पर गौर करते हैं तो हमने उन्हें बहुत महत्वपूर्ण आर्थिक विचारकों में पाया है। डॉ बी आर अंबेडकर को 'बाबासाहेब' के नाम से जाना जाता है । वह एक भारतीय विधिवेत्ता, राजनीतिज्ञ, दार्शनिक, मानवविज्ञानी, इतिहासकार और अर्थशास्त्री थे। डॉ. अम्बेडकर भारत के संविधान के महान शिल्पकार थे। आर्थिक चिंतन में डॉ. अम्बेडकर का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है। उन्होंने भारत में लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति के संबंध में कुछ मुद्दों और विकल्पों पर प्रकाश डाला। उन्होंने कृषि, केंद्र और राज्य सरकार के बीच संबंध, औद्योगीकरण, मुद्रा, वित्त प्रणाली, बीमा, शिक्षा, मिश्रित अर्थव्यवस्था, समाजवाद, आर्थिक असमानता, गरीबी एवं बेरोजगारी आदि पर अपने आर्थिक विचार व्यक्त किए हैं । उनके आर्थिक विचार आज भी प्रासंगिक हैं । प्रस्तुत पत्र उनके कुछ महत्वपूर्ण आर्थिक विचारों को उजागर करने का एक प्रयास है ।

मुख्य शब्द: मिश्रित अर्थव्यवस्था, औद्योगिकरण, समाजवाद, आर्थिक असमानता

प्रस्तावना

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर 20 वीं शताब्दी में भारत के सबसे उत्कृष्ट बुद्धिजीवियों में से थे। डॉ बी. आर. अंबेडकर को 'बाबासाहेब' के नाम से जाना जाता है। वह एक भारतीय विधिवेत्ता, राजनीतिज्ञ, दार्शनिक, मानवविज्ञानी, इतिहासकार और अर्थशास्त्री थे। डॉ. अम्बेडकर भारत के संविधान के महान शिल्पकार थे। आर्थिक चिंतन में डॉ. अम्बेडकर का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है। डॉ. अम्बेडकर विदेश से अर्थशास्त्र में डॉक्टरेट की डिग्री लेने वाले पहले भारतीय थे। उन्होंने तर्क दिया कि औद्योगिकीकरण और कृषि विकास से भारतीय अर्थव्यवस्था में वृद्धि हो सकती है। उन्होंने भारत में प्राथमिक उद्योग के रूप में कृषि में निवेश पर बल दिया। अम्बेडकर के दर्शन ने सरकार को अपने खाद्य सुरक्षा लक्ष्य हासिल करने में मदद की। अम्बेडकर ने राष्ट्रीय आर्थिक और सामाजिक विकास की वकालत की, शिक्षा, सार्वजनिक स्वच्छता, समुदाय स्वास्थ्य, आवासीय सुविधाओं को

बुनियादी सुविधाओं के रूप में जोर दियज्ञं डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के प्रमुख अर्थशास्त्र प्रकाशन हैं "द प्रॉब्लम ऑफ रुपी" (पी एस किंग एंड सन लिमिटेड, लंदन 1923), और द इवोल्यूशन ऑफ प्रोविंशियल फाइनेंस इन ब्रिटिश इंडिया" (पी एस किंग एंड सन) लिमिटेड, लंदन 1925)। एक महत्वपूर्ण अकादमिक पेपर है जिसे उन्होंने 1918 में लिखा था, 'स्मॉल होल्डिंग्स इन
इंडिया एंड देयर रेमेडीज' जर्नल ऑफ द इंडियन इकोनॉमिक सोसाइटी, खंड 1, 1918 |
इन अकादमिक आर्थिक लेखों के अलावा, उनके ज्ञापन और विभिन्न सरकारी आयोगों को दिए गए साक्ष्य, विभिन्न विधायी निकायों में भाषण, और पुस्तक समीक्षाएं हैं जिनमें सभी में कुछ आर्थिक सामग्री है। डॉक्टर अंबेडकर के आर्थिक विचारों का अध्ययन हम कृषि, उद्योग, श्रम, मुद्रा वित्तीय स्थिति बिंदुओं के अंतर्गत विभाजित करके कर सकते हैं।

कृषि व्यवस्था

डॉ. अम्बेडकर कृषि को महत्व देते हैं क्योंकि भारतीय अर्थव्यवस्था इसी क्षेत्र पर आधारित है। अंबेडकर के अनुसार भारतीय अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन का मूलभूत कारण भूमि व्यवस्था में परिवर्तन में देरी है। उनका विचार था कि कृषि और अंततः भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास के बिना ग्रामीण समाज का विकास असंभव है। उन्होंने मजदूरों के लिए न्यूनतम मजदूरी का समर्थन किया। उन्होंने भारतीय कृषि का राष्ट्रीयकरण सामूहिक खेती के साथ अपनाने का सुझाव दिया। उन्होंने भारतीय कृषि समस्याओं के समाधान के लिए कृषि पर निर्भर भूमिहीन मजदूरों पर जोर दिया। उन्होंने खेत के आकार को कभी महत्व नहीं दिया। उनके अनुसार पूंजी और अन्य संसाधन, छोटे आकार के खेत की तुलना में भारतीय कृषि क्षेत्र की मुख्य समस्याएं हैं। मशीनीकरण की मदद से कृषि के आधुनिकीकरण पर भी उन्होंने अपने विचार व्यक्त किए हैं । आधुनिकीकरण से उत्पादन बढ़ेगा और इस क्षेत्र का विकास होगा। वे सामूहिक खेती में विश्वास करते थे। उनके अनुसार खेत के आवंटन का आधार जाति नहीं होनी चाहिए और सरकार को खेती और पानी की आपूर्ति के उपकरण उपलब्ध कराने चाहिए। सरकार को कृषि आय पर कर नहीं लगाना चाहिए और खेती से होने वाली आय को बिना किसी जाति के भेदभाव के किसानों के बीच वितरित किया जाना चाहिए डॉ अंबेडकर ने कृषि सुधार को औद्योगिकरण के साथ जोड़ा ताकि ग्रामीण व शहरी प्रगति में एक प्रकार का संपर्क बना रहे। वास्तव में उन्होंने कृषि उद्योग दोनों को एक दूसरे का पूरक क्षेत्र माना है यही कारण है कि जो बात अंबेडकर ने 1918 में कहीं उसे ही हमारे विशेषज्ञों ने 1950 के पश्चात स्वीकार कर यह महसूस किया कि भारत की आर्थिक प्रगति के लिए ना केवल कृषि सुधार बल्कि साथ ही समूचे भारत में औद्योगिकरण की भी परम आवश्यकता है ।

श्रम

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के अनुसार समाज में भेदभाव विशेष रूप से शोषण पर आधारित था और उन्होंने इस बात की पुष्टि की कि प्रत्येक श्रम को मनुष्य के रूप में माना जाना चाहिए, उन्होंने सभी के लिए समानता और स्वतंत्रता का परिचय देने की आवश्यकता का सुझाव दिया। 1937 में उन्होंने लेबर पार्टी की स्थापना की। लेबर पार्टी की मान्यता थी कि किसान की जमीन के निरंतर टुकड़े होना और उन पर जनसंख्या का दबाव होना किसानों की गरीबी का मुख्य कारण है, इसका समाधान यह है कि पुराने लघु उद्योगों को बहाल किया जाए और नए उद्योग शुरू किए जाए। लोगों की योग्यता और उत्पादन शक्ति बढ़ाने के लिए उन्हें तकनीकी शिक्षा दी जाए। इसके लिए सरकार की ओर से उद्योग चलाने और प्रबंध करने का सुझाव दिया गया। कारखाने के कामगारों के रोजगार तथा कल्याण के लिए बेहतर कानून बनवाना भी पार्टी का एक लक्ष्य था। काम के घंटे तय करना, प्रमोशन के अवसर देना, वेतन, छुट्टियां, आवास की उपयुक्त सुविधा आदि के लिए प्रभावी कानून बनवाने के लिए सरकार को बाध्य करना दल के अन्य लक्ष्य थे। अंबेडकर के अनुसार जो सुविधाएं औद्योगिक श्रमिकों को दी जाती है वहीं सुविधाएं कृषि श्रमिकों की जानी चाहिए क्योंकि कृषि श्रम भी इससे अलग नहीं है। उनके अनुसार कार्य की दशाएं प्रावधाई निधि, नियोक्ता के दायित्व, कार्य की क्षति पूर्ति, स्वास्थ्य बीमा, पेंशन आदि के लाभ सभी प्रकार के श्रम को प्राप्त होने चाहिए चाहे वह औद्योगिक श्रमिक हो या कृषि श्रमिक ।

औद्योगिकीकरण

अंबेडकर सभी उद्योगों के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में नहीं थे। वे केवल महत्वपूर्ण उद्योगों का ही स्वामित्व और कार्यप्रणाली राज्य के अधीन करने के पक्ष में थे। वह यह भी सुझाव देते थे कि जो उद्योग महत्वपूर्ण उद्योग नहीं है परंतु जो मूल उद्योग हैं उन्हें या तो राज्य चलाएं या राज्य द्वारा स्थापित निगम संचालित करें। डॉक्टर अंबेडकर ने निजी क्षेत्र का कभी भी विरोध नहीं किया। उनका यह निश्चित मत था कि मूलभूत उद्योगों के अतिरिक्त उत्पादन के क्षेत्र निजी उद्यमियों के स्वामित्व में होने चाहिए परंतु साथ ही साथ उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि निजी उद्यमियों को समाज के वृहत्त हितों को ध्यान में रखना होगा। सरकार को स्वयं निश्चित करना होगा कि कौन से उद्योग राज्य के द्वारा चलाए जाए या निजी क्षेत्र के द्वारा या निजी क्षेत्र तथा राज्य दोनों के नियंत्रण में हो।

वित्त का विकेन्द्रीकरण

अम्बेडकर ने अर्थव्यवस्था के राष्ट्रीयकरण पर जोर दिया। उनका विचार था कि राज्य को अर्थव्यवस्था का प्रबंधन करना चाहिए ताकि उत्पादन इष्टतम स्तर तक पहुंच सके और पूंजीपति द्वारा

लाभ नहीं लिया जाना चाहिए। लाभ समान रूप से वितरित किया जाना चाहिए। वह पूंजीवादी व्यवस्था के कारण होने वाली स्पष्ट सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को दूर करते हुए समाज के प्रगतिशील परिवर्तन के लिए खड़े थे। अम्बेडकर समाजवाद के दृढ़ विश्वासी थे। उद्योगों के राष्ट्रीयकरण और जीवन बीमा पर उनके विचार ने भारत के सामने आने वाली आर्थिक समस्याओं के प्रति उनकी बड़ी चिंता को दर्शाया। सार्वजनिक क्षेत्र के गठन और जीवन बीमा निगम की स्थापना से पता चला कि वह अन्य प्रमुख अर्थशास्त्रियों के साथ सहमत थे। उन्होंने टिप्पणी की कि भारत का औद्योगीकरण एक आवश्यक चीज थी। लेकिन साथ-साथ राज्य प्रबंधन और उद्योग के राज्य स्वामित्व के सिद्धांत को अपनाया जाना चाहिए। सामाजिक बीमा और रोजगार पर नियंत्रण, बर्खास्तगी जैसी सुविधाएं उद्योग की प्रगति के लिए महत्वपूर्ण थीं। इन उपायों के बारे में निम्न मध्यम वर्ग की रक्षा की जानी चाहिए। उनका दृढ़ विश्वास था कि शोषण को समाप्त करके, श्रम कल्याण और अनुकूल औद्योगिक संबंध के माध्यम से औद्योगिक सद्भाव स्थापित किया जा सकता है। उन्होंने टिप्पणी की "हमने राजनीतिक स्वतंत्रता और समानता प्राप्त की है लेकिन आर्थिक और सामाजिक समानता के बिना यह काफी अपर्याप्त है।" अम्बेडकर ने आर्थिक और सामाजिक स्वतंत्रता और समानता पर अधिक जोर दिया। समाज और समाजवाद की उनकी अवधारणा का उद्देश्य गरीब वर्गों के कल्याण के लिए आधारित असमानता को समाप्त करना था। जन्म पर सामाजिक व्यवहार पैटर्न में भेदभावपूर्ण प्रथाओं को समाप्त करना, सभी के लाभ के लिए राजनीतिक अर्थव्यवस्था का पुनर्गठन करना, पूर्ण रोजगार और शिक्षा बनाए रखना, कमजोर और बीमारों के लिए सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना।

मुद्रा के संबंध में विचार

डॉ. अम्बेडकर के विचार वर्तमान भारतीय नकदी ढांचे को बहुत प्रभावित करते हैं। ब्रिटिश मानक के तहत जब भारत सरकार भारतीय रुपये के गिरते अनुमान से जूझ रहे थे, डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने 1923 में 'रुपये का मुद्दा, इसकी जन्मस्थली और व्यवस्था' की रचना की। उन्होंने ब्रिटिश भारत के दौरान भारतीय धन की स्थिति पर अपनी जांच और शोध को केंद्रित किया। उन्होंने इस पर शोध प्रस्ताव तैयार किया। अपने सिद्धांत में, उन्होंने तर्क दिया कि सोने के व्यापार मानक में स्थिरता नहीं है। भारत जैसे निर्माण करने वाले देश सोने के व्यापार मानदंडों की लागत का प्रबंधन नहीं कर सकते हैं, इससे अधिक यह मूल्य वृद्धि के खतरे को भी बढ़ाता है। उन्होंने अंतर्दृष्टि की जानकारी और कारणों के साथ प्रदर्शित किया कि कैसे भारतीय रुपये ने अपना मूल्य खो दिया है और इस प्रकार रुपये की खरीद तीव्रता गिर रही है। उन्होंने सुझाव दिया कि सरकारी कमी को दूर किया जाना चाहिए और पैसे का एक वृत्ताकार प्रवाह होना चाहिए। उन्होंने यह भी प्रस्तावित किया कि रूपांतरण पैमाने पर निर्भरता की तुलना में मूल्य ठोसता पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए यह पुस्तक अनिवार्य रूप से भारतीय रिजर्व बैंक की नींव को प्रेरित करती है।

समान कार्य के लिए समान वेतन

डॉ. अम्बेडकर प्रमुख व्यक्ति थे जिन्होंने वायसराय आधिकारिक सभा में श्रम मंत्री के रूप में औद्योगिक विशेषज्ञों के रूप में भारत में "समान कार्य के लिए समान वेतन" कानून लाया। भारतीय संविधान का मसौदा तैयार करते समय, डॉ. अम्बेडकर ने अनुच्छेद 39 (डी) को समाहित करने के लिए महत्वपूर्ण प्रतिबद्धता निभाई, जो राज्य को समकक्ष के लिए समान वेतन की पुष्टि करने के लिए एक निर्णय लेने के लिए संबंधित है। उनके द्वारा इंगित किया गया है, महिलाओं की सामाजिक स्थिति और निष्पक्षता के निर्माण के बिना वित्तीय सुधार में समर्थन की कल्पना नहीं की जा सकती है। जो भी हो, भारत में महिलाओं की भयानक आर्थिक स्थिति के कारण ही आज अपने यथार्थ स्थित पर पहुँच चुकी है।

संदर्भ

1. कुमारी, प्रमिला म.प्र. एक भौगोलिक अध्ययन म.प्र. हिन्दी अकादमी भोपाल 1952.
2. सिंह, निशान्त पर्यावरण और जल प्रदूशण सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली 2000 पृ. 27.
3. शर्मा, विष्णुदत्त पर्यावरणीय प्रदूशण, आर्य प्रकाशन मंडल, गांधी नगर दिल्ली, 1991 पृ. 40.
4. तिवारी, सी.पी. एवं पाण्डेय, एस.पी. ग्रामीण विकास में तालाब का योगदान गौरव प्रकाशन, रीवा 2007
5. चतुर्वेदी, रामप्रकाश पर्यावरण प्रदूषण एवं प्रबंधन, रीवा पठार के सन्दर्भ में एक भौगोलिक अध्ययन (अप्रकाशित प्रबंध) अ.प्र.सिंह वि.वि. रीवा 1996.
6. तिवारी, कृश्ण कुमार रीवा पठार का भूऐतिहासिक अध्ययन, (अप्रकाशित शोध ग्रंथ) अ.प्र.सिंह वि.वि. रीवा म.प्र. 2001.
7. तिवारी, भाष्कर प्रसाद बीमारियों का भौगोलिक वि.वि. रीवा-2006 रीवा जिले में जल प्रदूषण जनित अध्ययन (अ.प्र. शोध प्रबन्ध)

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

आधुनिक भारत के निर्माण में सरदार बल्लभ भाई पटेल का योगदान एवं पंडित जवाहरलाल नेहरू से मतभेद

अजय कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर– इतिहास
राजकीय महाविद्यालय डुमरियागंज, सिद्धार्थनगर
Email: ajaykumarntv@gmail.com

सारांश :
निःसंदेह सरदार बल्लभ भाई पटेल आधुनिक भारत के महान शिल्पकार थे, आज जो भारत का मानचित्र है उसके निर्माण में सरदार पटेल का अहम योगदान रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत देश के समक्ष तीन बड़ी चुनौतियां थी, प्रथम देश की रियासतों का विलय, दूसरी भारत की शासन व्यवस्था को चलाने के लिए संविधान का निर्माण, तीसरी भारत औपनिवेशिक व्यवस्था से अभी मुक्त हुआ था, ऐसे में आर्थिक नियोजन के माध्यम से भारत की व्यवस्था को पटरी पर लाना था। जहाँ रियासतों के विलय की बात थी, उस कार्य को सरदार बल्लभ भाई पटेल, संविधान के निर्माण में डाक्टर अम्बेडकर और आर्थिक नियोजन में जवाहर लाल नेहरू का अहम योगदान रहा।

सरदार पटेल स्वतंत्रता संग्राम में गांधीजी के साथ महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। इसके साथ ही साथ सिविल सेवा का भारतीयकरण किया। देश के पहले गृहमंत्री एवं उपप्रधानमंत्री के रूप में अमूल्य योगदान दिया। सरदार पटेल विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था पर बल दिया। कृषकों पर लगान सम्बंधित समस्याओं को समाप्त करने के लिए बारडोली सत्याग्रह चलाया। इतना ही नहीं सिविल सेवाओं का भारतीयकरण किया। उन्होंने आई सी एस का नाम बदलकर आई ए एस कर दिया। सही अर्थो में कहा जाए तो वह स्वतंत्र भारत में सिविल सेवाओं के जनक थे।

प्रमुख शब्दः सहकारिता, औपनिवेशिक भारत, राष्ट्रव्यापी सत्याग्रह, कैबिनेट मिशन, समकालीन भारत, जनमत संग्रह, रक्तहीन क्रांति, औद्योगिक क्रांति, आधुनिकता, वैज्ञानिक पद्धति, पंचायती राज, पाश्चात्य व्यवस्था, सौहार्द्र, अलगाववाद, पूर्वोत्तर, भारतीय करण, अंतरिम सरकार, सिविल सेवाओं, जनक, आई सी एस, आई ए एस, हैदराबाद, जूनागढ़, कश्मीर, आक्साई चीन, पाक अधिकृत कश्मीर, कल्हण, राजतरंगिणी,

सरदार बल्लभ भाई पटेल आधुनिक भारत में एक ख्यातिप्राप्त अधिवक्ता, स्वतंत्रता सेनानी, गांधीजी के घनिष्ठ सहयोगी, सहकारिता एवं कृषकों के मसीहा, स्वतंत्रा भारत के पहले गृहमंत्री एवं उपप्रधानमंत्री रहे। सही अर्थो में कहा जाए तो सरदार बल्लभ भाई पटेल आधुनिक भारत के महान निर्माताओं में एक थे। जहाँ औपनिवेशिक भारत में सरदार पटेल खेड़ा और बारडोली सत्याग्रह के माध्यम से कृषकों की पीड़ा को ब्रिटिश सरकार के सामने उठाया। खेड़ा वर्तमान गुजरात में स्थित है। 1918 ई0 में यहाँ की प्रमुख समस्या भीषण

अकाल के दौर में कृषकों को लगान से छूट दिलाना था। सरदार पटेल ने यहाँ के कृषकों से मिलकर उनकी समस्याओं को जानने का प्रयास किया और गांधीजी के खेड़ा सत्याग्रह के दौरान कृषकों की समस्या को प्रमुखता से उठाया और सहयोग किया, जिससे लगान की समस्या में कृषकों को छूट मिली।

1922 ई में चौरी चौरा की घटना के उपरांत जिस तरह से गांधीजी ने अपने प्रथम राष्ट्रव्यापी सत्याग्रह असहयोग आंदोलन को स्थगित किया, उससे देश भर के राष्ट्रवादियों मे निराशा का वातावरण उत्पन्न हो गया और गांधीजी के इस कार्य की आलोचना हुई, परंतु सरदार पटेल ने गांधीजी के असहयोग आंदोलन के प्रस्ताव को स्थगित करने का समर्थन किया। बल्लभ भाई पटेल ने 1928 में बारडोली सत्याग्रह में कृषकों के कर वृद्धि के फैसले के खिलाफ संघर्ष का नेतृत्व किया। अंग्रेज अधिकारी ब्रूमफील्ड ने लगान की दर घटाकर 30 प्रतिशत से 6.25 प्रतिशत कर दिया। बारडोली सत्याग्रह में यहाँ की महिलाओं ने बल्लभ भाई पटेल को सरदार की उपाधि से विभूषित किया। 1931 ई0 में कांग्रेस के कराची अधिवेशन में कांग्रेस की अध्यक्षता की। कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में कराची में अधिवेशन में मौलिक अधिकारों के प्रस्ताव को पारित करवाया।

1937 ई में हुए विभिन्न राज्यों के चुनाव में सरदार पटेल ने अहम भूमिका अदा की। कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में कार्य करते हुए मौलिक अधिकार एवं आर्थिक प्रस्ताव को पारित करवाया। इतना ही नहीं 1947 ई0 में भारत – पाकिस्तान युद्ध में गृहमंत्री के रूप में सेवा दी। सरदार पटेल ने संविधान निर्माण में अपना सहयोग दिया। भारत के बटवारा के समय सरदार पटेल ने प्रारंभ में भारत विभाजन का विरोध किया। परंतु देश की उस समय की तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों को देखते हुए सरदार पटेल ने भारत विभाजन के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया, उनका कहना था कि यदि हम पाकिस्तान की मांग को स्वीकार नहीं करते तो भारत में कई पाकिस्तान बन जाते। सरदार पटेल ने गांधीजी को तत्कालीन परिस्थितियों से अवगत कराया।

गांधीजी के अंतिम राष्ट्रव्यापी सत्याग्रह भारत छोड़ो आन्दोलन 1942 ई0 में सरदार पटेल ने बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। 9 अगस्त 1942 ई0 को बम्बई के ग्वालियां टैंक से राष्ट्रवादियों को सम्बोधित करते हुए भारत छोड़ो आन्दोलन के कार्यक्रम एवं नीतियों को बताया। बाद में इन्हें आपरेशन जीरो ऑवर के तहत गिरफ्तार कर लिया गया और महाराष्ट्र की यरवदा जेल में गांधीजी के साथ लम्बा वक्त बिताया।

भारत छोड़ो आन्दोलन के उपरांत कैबिनेट मिशन और माउंटबेटन योजना के प्रावधानों पर सरदार पटेल ने गहन चिंतन किया। गांधीजी भारत विभाजन के घोर विरोधी थे, वह स्वयं कहते थे कि अलग पाकिस्तान का निर्माण मेरी लाश पर होगा परंतु मुस्लिम लीग की बढ़ती अलग पाकिस्तान की मांग और हो रहे दंगों के मद्देनजर सरदार बल्लभ भाई पटेल को अलग पाकिस्तान राष्ट्र के मांग को स्वीकार करने पर विवश कर दिया। स्वयं सरदार पटेल ने अपने सम्बोधन में कहा कि यदि इंसान के किसी अंग में कैंसर हो जाये तो उस अंग को निकाल देना बेहतर होगा। यदि हम आज पाकिस्तान की मांग को स्वीकार नहीं करेंगे तो भविष्य में देश के भीतर कई पाकिस्तान बन जायेंगे।

सरदार पटेल के यह विचार आज समकालीन भारत में प्रासंगिक दिखते हैं। पूर्वोत्तर के क्षेत्र अलगाववादी समस्या, उत्तर के क्षेत्र में सीमापार आतंकवाद की समस्या आदि सरदार पटेल के इसी विचार को स्पष्ट कर रहे हैं। 15 अगस्त 1947 ई0 को भारत औपनिवेशिक शासन से मुक्त हुआ। भारत को स्वतंत्रता मिली। जवाहर लाल नेहरू के अंतरिम सरकार में देश के प्रथम गृह मंत्री और देश के प्रथम उप प्रधानमंत्री के रूप में सेवा प्रदान की। सरदार पटेल ने सिविल सेवा का भारतीयकरण किया और आई सी एस का नाम

बदलकर आई ए एस कर दिया। सरदार पटेल पंचायती राज्य व्यवस्था के पक्के समर्थक थे, वह पंचायतों का विकास करके भारत का विकास करना चाहते थे। आजादी के उपरांत देश के समक्ष भारत के स्वरूप को लेकर रहा। देशी रियासतों के विलय की समस्या प्रमुख थी। स्वतंत्रता के उपरांत देश में सबसे प्रमुख समस्या देश के 561 देशी रियासतों के विलय की प्रमुख समस्या रही। भारतीय रियासतों के प्रति अंग्रेजी सरकार की नीति के बारे में प्रसिद्ध लेखक सर ली वार्नर ने अपनी पुस्तक The native state of India में तीन भागों में बांटा है:

प्रथम रिंग फेस अथवा अधीनस्थ पृथक्करण की नीति जो 1757 ई0 से 1813 ई0 तक चलती रही। 1757 ई0 में प्लासी के विजय के उपरांत भारत में कम्पनी शासन की नीव पड़ी। सही अर्थो में कहा जाए तो यह समय भारत में आधुनिकता का काल था, यह समय आधुनिक भारत और मध्यकालीन भारत के मध्य विभाजक रेखा रही। 1763 ई0 में फ्रांसीसियों की सत्ता को समाप्त करने, 1765 ई0 में बंगाल में दीवानी प्राप्त करने के उपरांत ईस्ट इंडिया कम्पनी जो महज एक व्यापारिक संस्था थी, अब वह राजनीतिक संस्था बन गयी। परंतु इस वक्त कम्पनी इतनी राजनीतिक रुप से शक्तिशाली नही थी कि वह भारतीय रियासतों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करे। अन्य दक्षिण के रियासतों में मराठे, हैदराबाद के निजाम और मैसूर के सुल्तान थे। कम्पनी का प्रमुख देशी रियासतों के साथ समझौतों से उक्त की भारत की राजनीतिक स्थितियों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। सबसे पहला समझौता कम्पनी का 1759 ई0 में हैदराबाद के निजाम के साथ हुआ, हैदराबाद के साथ कम्पनी की नीति तटस्थता की रही। अर्थात कम्पनी राज्य के आंतरिक मामलों में तटस्थ रहेगी। कम्पनी राज्य के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि मामले में हस्तक्षेप नहीं करेगी। अर्थात कम्पनी शासन की स्थापना के दौर में कम्पनी का हैदराबाद के साथ सम्बन्ध तटस्थता का रहा। इसके उपरांत कम्पनी का दक्षिण भारत के दूसरे रियासत मछलीपट्टनम के साथ सैन्य संधि की। मछलीपट्टनम कभी मध्यकालीन भारत में बहमनी सम्राज्य का हिस्सा रहे गोलकुंडा राज्य का एक बंदरगाह के रूप में जाना जाता है।

इसी प्रकार से देश के अन्य रियासतों अवध, अंकाट आदि के साथ संधियाँ की जिससे कम्पनी को संकट काल के दौर में सैन्य सहायता करना पड़ा। लार्ड बेल्जली के भारत आने के उपरांत कम्पनी की देशी रियासतों के प्रति नीति में अहम् बदलाव आया, वेल्जली का उद्देश्य था कि देशी रियासतों को कम्पनी सम्राज्य में मिलाना, इसके लिए उन्होंने सहायक संधि प्रणाली की शुरुआत की। वेल्जली की सहायक संधि का उद्देश्य था कि देशी रियासतों का कम्पनी सम्राज्य में मिलना। सही अर्थो में कहा जाए तो वेल्जली की सहायक संधि का उद्देश्य भारत में कम्पनी सम्राज्य का विस्तार करना था। सहायक संधि के तहत कम्पनी देशी रियासतों के साथ एक समझौता करती थी, जिसके तहत कम्पनी देशी रियासतों को आंतरिक अथवा वाह्य आक्रमण की स्थिति में सैन्य सहायता उपलब्ध कराती थी। इसके लिए कुछ शर्ते थी:

1. कम्पनी, सहायक संधि स्वीकार करने वाले रियासतों को वाह्य आक्रमण अथवा आंतरिक विद्रोह की स्थिति में सैनिक सहायता उपलब्ध कराती थी।
2. सहायक संधि स्वीकार करने वाले राज्य बीना कम्पनी के अनुमति के बगैर किसी भी राज्य से कोई भी समझौता नहीं करेंगे।
3. सहायक संधि स्वीकार करने वाले रियासतों के राजधानी में एक अंग्रेजी रेजीडेंट की तैनाती होगी जो राज्य के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा परंतु निगरानी जरूर करेगा।
4. सहायक संधि स्वीकार करने वाले रियासतों को बिना कम्पनी के अनुमति के बगैर किसी यूरोपीय को अपने यहाँ नौकरी नहीं देंगे।

वेल्जली की सहायक संधि को स्वीकार करने वाले रियासतों में हैदराबाद, तंजौर, मैसूर, सिंधिया आदि थे। सही अर्थो में कहा जाए तो वेल्जली की सहायक संधि मीठे जहर के समान थी, जिसने देशी रियासतों को कम्पनी सम्राज्य में मिलाया। कुल मिलाकर कहा जाए तो वेल्जली एक सम्राज्यवादी प्रशासक था, जिसने सहायक संधि का प्रयोग करके कम्पनी सम्राज्य का विस्तार किया।

दूसरा चरणः अधीनस्थ पृथक्करण की नीति 1813–1857, कम्पनी 1813 ई0 के बाद रिंग फेस की पुरानी नीति को त्याग करके सम्राज्यवादी नीति का अनुसरण किया। इसे अधीनस्थ सहयोग की नीति कहा जाता है। यही सर्वश्रेष्ठता की नीति आरंभ हुई। लार्ड हेस्टिंग्स के शासन काल में देशी रियासतों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप बढ़ना आरंभ हो गया। लार्ड हेस्टिंग्स ने मध्य भारत की 145, काठियावाड़ की 145 तथा राजपूताना राज्य की 20 रियासतों इस नीति के तहत आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप किया।

लार्ड डलहौजी (1848–1856 ई) लार्ड डलहौजी का शासन काल कम्पनी सम्राज्य के विस्तार का स्वर्णिम काल रहा। डलहौजी का मुख्य उद्देश्य कम्पनी सम्राज्य का विस्तार करना था। इसके लिए उन्होंने हड़प नीति का अनुसरण किया। हड़प नीति को विलय का सिद्धांत, व्ययपगत का सिद्धांत आदि नामों से जाना जाता है। डलहौजी ने देशी रियासतों को तीन भागों में बांटाः स्वतंत्र, आश्रित और अधीनस्थ। इस सिद्धांत के अनुसार पैतृक वारिस न होने के कारण कम्पनी किसी रियासत को अपने सम्राज्य का हिस्सा मान लेती थी। हड़प नीति के माध्यम से कम्पनी सतारा, नागपुर, संभलपुर एवं तंजौर जैसी रियासतों का कम्पनी सम्राज्य में विलय किया। डलहौजी की हड़प नीति के तहत देशी रियासतों को जांचने के लिए ईनाम आयोग का गठन किया गया। इसके तहत देशी रियासतों की जांच पड़ताल की गई। इसके उपरांत बोर्ड आफ प्रोपराइटर की अनुमति लेनी पड़ती थी।

दूसरे शब्दों में संक्षेप में कहा जाए तो भारत में कम्पनी सम्राज्य की स्थापना के उपरांत देशी रियासतों को कम्पनी सम्राज्य में मिलाने के युद्धों के साथ साथ कूटनीति का सहारा लिया गया। यूरोपीय विद्वान हंटर और पीई राबर्टस जैसे विद्वानों ने माना है कि लार्ड डलहौजी इस सिद्धांत का संस्थापक नहीं था अपितु जोजेफ डूप्ले और मराठो के द्वारा इसको पहले से प्रयोग में लाया जा चुका है।

1857 ई0 की क्रांति के उपरांत देशी रियासतों में कम्पनी अहस्तक्षेप के सिद्धांत को अपनाया। बटलर समिति का गठनः देशी रियासतों के साथ सम्बन्ध को लेकर अध्ययन किया। इस आधार पर यह पाया कि भारत रियासतों का सम्बन्ध ब्रिटिश सरकार के साथ न होकर ब्रिटिश संसद के साथ है। इस समिति की सिफारिशें इस प्रकार से हैः

1. सम्राट की ओर से रियासतों के साथ कार्यवाही करने का अधिकार केवल वायसराय को है।
2. रियासतों की परिषद बनाने की योजना स्वीकृति न प्रदान किया जाए।
3. किसी भी रियासत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने का अधिकार सिर्फ वायसराय को है।

1928 ई0 में साइमन कमीशन ने देशी रियासतों का संघ बनाने की सिफारिश की परंतु इसका विरोध कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ने किया।

बराबर संघ की नीति (1935–1947 ई0) : 1935 ई0 के भारत सरकार के अधिनियम के तहत संघीय विधान सभा में 375 में 125 स्थान देशी रियासतों को प्रदान किया गया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय देश में कुल 561 देशी रियासते थी। सरदार पटेल ने इस कार्य को बड़ी कुशलता के साथ किया। सरदार पटेल को इस कार्य हेतु वीपी कृष्ण मेनन का साथ मिला। देश की अधिकांश रियासतों

का विलय शांतिपूर्ण तरीके, बातचीत एवं कूटनीति के माध्यम से किया। महज तीन रियासते ऐसी थी जो सरदार पटेल के प्रस्ताव को नहीं मानी, वे इस प्रकार हैः

1. जूनागढ़ः जूनागढ़ सरदार पटेल के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। जूनागढ़ वर्तमान गुजरात के सौराष्ट्र में स्थित है। यह हिन्दू बहुल रियासत थी पर यहाँ का शासक नबाब शहनाज भुट्टो था जो स्वतंत्र रहना चाहता था। एक जनमत संग्रह के माध्यम से इसे भारत में मिलाया गया। बाद में नवाब यहाँ से भाग गया।
2. हैदराबादः यह देश की सबसे बड़ी रियासत थी, इसका सरदार पटेल ने सैन्य कार्रवाई आपरेशन पोलो के माध्यम से किया। हैदराबाद में निजाम का शासन था। हैदराबाद का निजाम स्वतंत्र रहना चाहता था, सरदार पटेल ने जनरल जे के चौधरी के नेतृत्व में सेना भेजकर विलय का मार्ग प्रशस्त किया।
3. जम्मू कश्मीरः इसका भारत में विलय अन्तर्राष्ट्रीय नियमों एवं बातचीत के माध्यम से किया गया। जम्मू कश्मीर सही अर्थो में कहा जाय तो यह भारत का मुकुट है। भारत का एक प्रमुख पर्यटन का स्थल है। कश्मीर में इतिहास लेखन की एक विकसित परम्परा रही। कल्हण के द्वारा लिखित राजतरंगिणी से कश्मीर के इतिहास का पता चलता है। स्वतंत्रता के प्राप्ति के उपरांत जम्मू कश्मीर एक स्वतंत्र रियासत थी। यह मुस्लिम बहुल आबादी वाली रियासत थी, परंतु यहाँ राजा हरि सिंह हिन्दू थे। भारत के विभाजन के उपरांत इसकी स्थिति भारत और पाकिस्तान के मध्य में थी। आजादी के उपरांत भारत और पाकिस्तान दोनों के तरफ से अपने मे मिलाने का प्रयत्न किया गया, जहाँ भारत अन्तर्राष्ट्रीय नियमों के अनुसार भारत में मिलाना चाहता था, वही पाकिस्तान युद्ध का सहारा लिया। अन्ततः जम्मू कश्मीर का भारत में विलय हुआ। मूल जम्मू कश्मीर आज पांच हिस्से में बंटा हुआ हैः
    1. जम्मू
    2. कश्मीर
    3. लद्दाख
    4. पाक अधिकृत कश्मीर
    5. अक्साई चीन।

आज भारत का जो भी स्वरूप है, वह सरदार बल्लभ भाई पटेल की देन है। इसी कारण इन्हें भारत का बिस्मार्क कहा जाता है। परंतु बिस्मार्क और पटेल में फर्क है, जहाँ बिस्मार्क जर्मनी का एकीकरण युद्ध और रक्त के माध्यम से किया, अर्थात रक्त क्रांति का सहारा लिया, वहीं सरदार पटेल भारत में देशी रियासतों का विलय बातचीत के माध्यम से किया अर्थात सौहार्द्रपूर्ण ढंग अथवा रक्तहीन क्रांति के माध्यम से किया।

सरदार पटेल और जवाहर लाल नेहरूः दोनों स्वतंत्रता सेनानी, गांधीजी के सहयोगी और आधुनिक भारत के महान निर्माता थे परंतु दोनों में बुनियादी फर्क हैः

- जहाँ नेहरू आधुनिकता और पाश्चात्य शिक्षा व्यवस्था के पक्षधर थे, वहीं सरदार पटेल परम्परागत विचारों के पोषक थें।
- जहाँ नेहरू की छवि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर रही, वहीं सरदार पटेल देश में लोकप्रिय रहें।
- जहाँ नेहरू भारी औद्योगिकरण के पक्षधर थें वही पटेल कुटीर उद्योग को महत्व देते थें।
- जवाहर लाल नेहरू और सरदार पटेल के मध्य कश्मीर और हैदराबाद के विलय एवं तरीको पर मतभेद रहा!

- नेहरू हैदराबाद एवं कश्मीर पर पटेल के एकतरफा कार्यवाही से नाराजगी व्यक्त की।
- सरदार पटेल और जवाहर लाल नेहरू के मध्य सोमनाथ मंदिर के मुद्दे पर मतभेद रहा।
- सरदार पटेल जहाँ परम्परागत मूल्यों को महत्व देते थे, वहीं नेहरू पर आधुनिकता एवं विज्ञान के महत्व पर बल देते थे।
- सरदार बल्लभ भाई पटेल और नेहरू दोनों विधि विशेषज्ञ थे, दोनों के उद्देश्य एक थे, भारत को औपनिवेशिक व्यवस्था से मुक्ति दिलाना। स्वतंत्रता के उपरांत एक सशक्त राष्ट्र का निर्माण करना था।

उपरोक्त तमाम मतभेदों के बावजूद जवाहर लाल नेहरू और सरदार पटेल आधुनिक भारत के निर्माण में एक दूसरे के पूरक थे। जहाँ नेहरू वेस्टमीनिस्टर प्रणाली, आधुनिकता और वैज्ञानिक पद्धति के माध्यम से भारत का निर्माण करना चाहते थे, वही सरदार पटेल देशी रियासतों के विलय और पंचायती राज्य व्यवस्था को प्रमुखता दी।

सरदार पटेल जी का जन्मदिन हर वर्ष 31 अक्टूबर को राष्ट्रीय एकता दिवस के रूप में मनाते है। इसकी शुरुआत 2014 से हुई। सरदार पटेल सही अर्थो में आधुनिक भारत के शिल्पकार थे जो भारत का आज स्वरूप है, वह सरदार पटेल की देन है।

निष्कर्षः सही अर्थो में कहा जाए तो सरदार पटेल आधुनिक भारत के महान निर्माता थे। उन्होंने अधिवक्ता के रूप में अपने सार्वजनिक जीवन की शुरुआत की, बाद में गांधीजी जी के अनन्य सहयोगी के रूप में योगदान दिया। कई बार उन्होंने कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में सेवा प्रदान किया। स्वतंत्र भारत में देश के प्रथम उपप्रधानमंत्री एवं गृहमंत्री के रूप में सेवा की। इसके साथ ही साथ उन्होंने देशी रियासतों को भारतीय संघ में मिलाया। सरदार पटेल को इस महान कार्य के लिए उन्हें लौह पुरूष की संज्ञा दी गई। सरदार पटेल सही अर्थो में आधुनिक भारत के शिल्पकार थे। सरदार पटेल ने जिस समझ और कूटनीति से भारतीय रियासतों को संघ में मिलाया, वह अपने आप में महान कार्य था। सरदार पटेल सही अर्थो में आधुनिक भारत के निर्माता थे। सरदार पटेल ने पंचायत राज व्यवस्था के महत्व पर बल दिया। अर्थात वह विकेन्द्रीकरण के सिद्धांत पर बल दिया।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची–

1. आधुनिक भारत(1757–1950 ई0)– प्रोफेसर ए के मित्तल पृष्ठ संख्या–247, 249, 250
2. आधुनिक भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहासः डॉ ए के मित्तल (1707–1950 ई0) पृष्ठ संख्या 392
3. सरदार वल्लभभाई पटेल : लाइफ एंड लेजेसी :अनिल दत्त मिश्रा पृष्ठ संख्या 180, 181, 182
4. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष– प्रोफेसर ए के मित्तल।
5. अमर उजाला में प्रकाशित इतिहासकार रामचंद्र गुहा के लेख।
6. विभिन्न समाचार–पत्र में प्रकाशित लेख के अंश।
7. विभिन्न यूट्यूब चैनल पर प्रदर्शित परिचर्चा के अंश।
8. सरदार पटेल ए लाइफ : राजमोहन गांधी पृष्ठ संख्या : 190
9. आधुनिक भारत का इतिहास– कैलाश खन्ना पृष्ठ संख्या–130, 131
10. आधुनिक भारत का इतिहासः प्रोफेसर जगन्नाथ प्रसाद मिश्र– पृष्ठ संख्या–128, 142, 225

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

स्वास्थ्य व पोषण में मोटे अनाज का महत्व

डॉ. तारिका सिंह

सहायक प्राध्यापक (गृह विज्ञान)
शासकीय महाविद्यालय, ताला, मैहर , म. प्र.

सारांश -

भारत में मोटे अनाज या मिलेट्स को श्री अन्न का दर्जा दिया गया है। भारत श्री अन्न का बहुत बड़ा उत्पादक देश है। भारत का योगदान विश्व उत्पादन में लगभग 41% और एशिया के कुल उत्पादन का 80 % है। यह मोटे अनाज पोषण से भरपूर है और इनमें फाइबर ,एंटीऑक्सीडेंट, फेनोलिक एसिड ,टैनिन, विटामिन बी,प्रोटीन आदि पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। 60 के दशक के पूर्व भारत में श्री अन्न का उत्पादन पर्याप्त मात्रा में होता था परंतु हरित क्रांति के फल स्वरुप इसके उत्पादन और उपभोग में कमी आई. हालाँकि मोटे अनाज में पोषक तत्त्व पर्याप्त मात्रा में पाए जाते है परन्तु सटीक प्रसंस्करण नीति नहीं होने के कारण इनका उचित लाभ जनमानस तक नहीं पहुच रहा है। मोटे अनाज की उपयोगिता को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा वर्ष 2023 को "मोटे अनाज का अन्तराष्ट्रीय वर्ष" घोषित किया गया.भारत में मुख्य रूप से राजस्थान,महाराष्ट्र, कर्नाटक,मध्य प्रदेश ,गुजरात,आंध्र प्रदेश आदि राज्यों में मोटे अनाज का उत्पादन होता है, राजस्थान बाजरा के उत्पादन में अग्रणी राज्य है यहाँ भारत की कुल पैदावार का लगभग 30% हिस्सा उत्पन्न होता है .महाराष्ट्र में ज्वार एवं बाजरे का उत्पादन होता है तथा कर्नाटक रागी के उत्पादन में अग्रणी है। भारत में लगातार कुपोषण की समस्या बढती जा रही है, साथ ही समाज का एक वर्ग ऐसा भी है जो अपने स्वास्थ्य के लिए जागरूक हो रहा है। दोनों ही परिस्थितियों में समाज में मोटे अनाज का महत्त्व में वृद्धि हो रही है।

कुंजी शब्द:- मिलेट्स, श्री अन्न, एंटी ऑक्सीडेंट, पोषक , प्रसंस्करण

प्रस्तावना-

अनाज हमारी डाइट का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह हमारी बॉडी की पोषक आवश्यकताओं को पूरा करते हैं और शरीर को ताकत देते हैं। मोटे अनाज प्राचीन काल से भारतीय खान-पान का हिस्सा रहे हैं। कुछ मोटे अनाजों का वर्णन हमारे ग्रंथ, वेदों आदि में भी मिलता है। यजुर्वेद में भी बाजरे के उपयोग के प्रमाण है। मोटा अनाज या मिलेट्स छोटे दाने वाली घास प्रजाति की फसल हैं जो पौष्टिक गुणों से भरपूर ग्लूटन मुक्त एवं कम पानी और उर्वरक में उगने वाले सुपर फूड है । मोटे अनाज में मुख्य रूप से ज्वार, बाजरा ,रागी,कंगनी,कोदो, कुटू आदि शामिल है.इनके दाने मोटे होते है और ये गेहूं और चावल जैसे परिष्कृत अनाज की तुलना में खुरदुरे और मोटी बनावट के होते है। यह गर्म जलवायु में उगने वाले अनाज है एवं इनका उपयोग दुनिया के विभिन्न हिस्सों में पशु आहार,चारे या शराब को बनाने में किया जाता है।

मोटे अनाजों मे एंथ्रोसाइएनिन]फेनोलिक एसिड] फाइटोस्टीरोल] टैनिन जैसे पोषक तत्व व विभिन्न एंटीऑक्सीडेंट प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। हरित क्रांति के फल स्वरुप गेहूं और चावल के उत्पादन में अतिशय वृद्धि हुई अधिक उत्पादन व बेहतर स्वाद के कारण

भारत में इनकी मांग इतनी बड़ी की मोटे अनाज की खपत लगभग समाप्त हो गयी। विभिन्न रसायनों के उपयोग के कारण अधिकांश खाद्य पदार्थ केमिकल युग का शिकार हो गए अनाज फल सब्जी सभी में हानिकारक रंग] स्प्रे] केमिकल]उर्वरक आदि का प्रचुर मात्रा में प्रयोग हो रहा है। विभिन्न प्रकार की रासायनिक विधियो के प्रयोग के कारण गेहूं चावल का उत्पादन बहुत अधिक मात्रा में हो रहा है और उनकी मुलायम स्वाद के आगे उर्वरक एवं रसायन विहीन ,अत्यधिक पौष्टिक मोटे अनाज का कड़कीला स्वाद लोगों के द्वारा नकारा जा रहा है। एक समय था जब हमारे यहां मोटे अनाज गरीबों की थाली का महत्वपूर्ण हिस्सा हुआ करते थे. संभवत हमारे पूर्वजों के लंबी जीवन आयु एवं स्वस्थ जीवन का राज इन मोटे अनाजों में ही छिपा था। इनको कम लागत व कम पानी की खपत में उपजाया जा सकता है। ये पोषक तत्वों का खजाना है एवं व्यक्ति के शरीर की पोषक जरूरत को यह पूरा करने में सक्षम है।

कुपोषण की चुनौती जो हमारे देश की एक बड़ी आबादी को घेरे हुए हैं उसको कम करने में मोटे अनाज का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। इनमे पर्याप्त मात्रा में आहारीय रेशा होने से पाचन तंत्र स्वस्थ होता है और इनके सेवन से कब्ज ,पेट फूलना ,सूजन ,ऐठन जैसी समस्याये कम होती है। मोटे अनाज का ग्लैसिमिक इंडेक्स कम होता है जिसके कारण ये शरीर का ब्लड शुगर लेवल संतुलित बनाते हैं। ये रक्त प्रवाह में ग्लूकोस धीरे धीरे छोड़ते है जिससे रक्त में ग्लूकोस का स्तर तेजी से नहीं बढता है। इनमे उपस्थित फाइबर और एंटी ओक्सिडेंट शरीर में कॉलेस्टेरोल का स्तर नियमित करते हैं और ह्रदय रोग से बचाव करते है , इसके साथ ही मोटापा कम करने व ब्लड प्रेशर नियमित करने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इन्हे हेल्थ का "पावर हाउस" कहना अतिशयोक्ति न होगी। सामान्य तौर पर मिलेट का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जाता है।

1 बारीक मिलेट्स (कोदो , कुटकी)

2 मोटे दाने वाले मिलेट्स (ज्वार - बाजरा)

मोटे अनाजों में पोषक तत्वों की पर्याप्त मात्रा पायी जाती है, इस कारण से मोटे अनाजों को "न्यूट्री अनाज" कहा जाता है। इनमें पर्याप्त मात्रा में आहारीय फाइबर (लगभग 37% से 38%) पाया जाता है जो पाचन तंत्र को दुरुस्त रखने में सहायक होता है.फाइबर के साथ ही इनमें पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम और आयरन भी पाया जाता है जिससे हड्डियों को मजबूत बनती है और शरीर में खून की कमी पूरी होती है। लैक्टोज टोलरेंट लोगों के लिए मोटे अनाज कैल्शियम का प्रमुख स्रोत हो सकते हैं, क्योंकि मोटे अनाज में लस या ग्लूटेन नहीं पाया जाता है अतः यह सीलियक डिजीज वाले लोगों के लिए वरदान सिद्ध होते हैं. इनमें विटामिन बी-3 (नियासिन) पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है जो शरीर में ट्राइग्लिसराइड की मात्रा को कम करने तथा बुरे कोलेस्ट्रॉल को शरीर से बाहर निकालने के लिए उपयोगी होता है। ज्वार में पोटेसियम और फास्फोरस पाया जाता है ,रागी और बाजरा कैल्शियम तथा लौह तत्त्व से भरपूर होते है जो हड्डियों को मजबूत बनाने एवं एनीमिया का उपचार करने में बहुत उपयोगी है, कुटकी एक पारंपरिक फसल है जो अत्यंत पौष्टिक होती है और इसमें आहारीय रेशा लगभग 38% पाया जाता है। कोदो में भी पर्याप्त मात्रा में लौह तत्त्व पाया जाता है जो एनीमिया के उपचार में काफी लाभप्रद है. कौनी और प्रोसो मिलेट कैंसर कोशिकाओं के निर्माण को रोकने में सक्षम है। आमतोर पर मोटे अनाज को गरीबों का भोजन कहा जाता था पर इनकी उपयोगिता एवं पौष्टिक मूल्य देखते हुए अब आर्थिक रूप से संपन्न लोग भी इसको खाने से नहीं हिचकिचाते। यह सस्ते में उपलब्ध अनाजों में सबसे लाभप्रद अनाज है.इन अनाजों का ग्लैसमिक इंडेक्स तो कम होता ही है वरन पर्याप्त मात्रा में प्रोबायोटिक एवं एंटी ओक्सिडेंट भी पाए जाते है।

मोटे अनाज की प्रमुख पौष्टिक मूल्य तालिका (प्रति 100 ग्राम):

मोटा अनाज	ऊर्जा cal	कैल्शियम (मि ग्रा)	आयरन (मि.ग्रा)	प्रोटीन (ग्राम)	वसा (ग्रा)
रागी	328	344	3.9	5.8	1.3

बाजरा	361	42	8.0	11.6	5.4
ज्वार	349	25	4.1	10.4	1.8
कोदो -	350 -	30	4	9	1.5
सांवा का चावल	300	11-22	17 - *	- 11	-

*सांवा में आयरन की मात्रा चावल की तुलना में 5 से 10% तक अधिक पाई गई है .

मोटा अनाज हमारे लिए वरदान से काम नहीं है. इन अनाजों को सुपर फूड की श्रेणी में रखा जाता है क्योंकि यह पाचन को दुरुस्त करने, एनीमिया से बचाव करने, वजन नियंत्रित करने और हड्डियों को मजबूत करने तथा शरीर को गर्म रखने में सहायक होते हैं। यदि हम केवल भारत के संदर्भ में देखें तो मक्का ज्वार का अन्य मोटे अनाजों का उत्पादन भारत के कुल खाद्य उत्पादन का एक चौथाई है। 60 के दशक के पूर्व भारत में पर्याप्त मात्रा में मोटे अनाजों का उत्पादन होता था परंतु हरित क्रांति के फल स्वरुप इनका उत्पादन कमजोर पड़ने लगा.भारत में राजस्थान मोटे अनाज के उत्पादन में अग्रणी राज्य है यहाँ पर मुख्य रूप से बाजरे का उत्पादन होता है। इसके अतिरिक्त महाराष्ट्र, कर्नाटक ,मध्य प्रदेश , गुजरात में भी मोटे अनाज की अच्छी पैदावार होती है।

हालांकि यह मिलेट्स पोषक तत्वों से परिपूर्ण होते हैं परंतु इनमें कुछ एंटी न्यूट्रीशनल तत्व भी पाए जाते हैं जैसे कि टनिन, फेनोलिक एसिड, फाइबर आदि. इन तत्वों को हटाने के लिए विभिन्न प्रकार की पारंपरिक विधियाँ अपनायी जा रहे हैं जैसे की हवा में चालना, सेकना, भिगोना,अंकुरण और मालटिंग आदि.मोटे अनाज को विभिन्न प्रकार से ग्रहण किया जा सकता है .इनकी रोटी , खिचड़ी , बाटी, हलवा, चीला , डोसा ,चूरमा आदि बना कर इनका उपभोग किया जा सकता है.परन्तु मोटा अनाज सबके लिए लाभ प्रद हो ऐसा आवश्यक नहीं है. हाइपो थाइरोइड के रोगी, गर्भवती महिलाओं,किडनी स्टोन के रोगी, डिहाइड्रेशन के रोगी आदि को मोटे अनाज के सेवन से बचना चाहिए एवं जब भी मोटे अनाज के व्यंजनों का सेवन किया जाए तो प्रचुर मात्रा में पानी का सेवन करना चाहियें।

वैश्वीकरण, औद्योगिकी करण एवं हरित क्रांति के फलस्वरुप लोग मोटे अनाज को भूल चुके थे परन्तु जब संपूर्ण विश्व कोरोना की महामारी से जूझ रहा था उसे समय भारत के लोग अपनी जड़ों की तरफ वापस लौटे और इस विकट समय मे उन्हें पोषण से भरपूर मोटे अनाज का महत्व समझ में आया क्योंकि यह मोटे अनाज पोषण के साथ-साथ शरीर की प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ाते हैं. मोटे अनाज को मौसम के अनुरूप खाना चाहिए बाजरा और मकई सर्दियों के लिए उपयुक्त है, इन्हें गुड और घी के साथ खाना चाहिए जबकि ज्वार गर्मियों के लिए अनुकूल है और रागी/नाचनी पूरे साल खायी जा सकती है।

भारत सरकार द्वारा 2018 का राष्ट्रीय मिलेट वर्ष घोषित किया गया और भारत के प्रस्ताव से संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 2023 को अंतरराष्ट्रीय मिलेट वर्ष घोषित किया। केंद्र सरकार मोटे अनाज की खेती पर बहुत जोर दे रही है क्योंकि भारतीय आबादी के लिए पोषण युक्त भोजन उपलब्ध कराने मे मोटे अनाज सक्षम हो सकते हैं। भारत में परंपरा गत रूप से मोटे अनाज की खेती की जा रही है परन्तु इसके उत्पादन और प्रसंस्करण की कोई स्पष्ट नीति ना होने के कारण किसानो को कोई लाभ नहीं मिल पा रहा है। मोटे अनाज शुष्क जलवायु एवं बंजर भूमि में आसानी से उगाये जा सकते है। इनके लिए किसी विशेष खाद और बहुत अधिक सिचाई की भी आवश्यकता नहीं होती, मोटी संरचना के कारण इनमे कीट-फंगस आदि नहीं लगते अत: इन्हें किसी विशेष देखभाल की भी आवश्यकता नहीं होती, यदि सही नीति अपनायी जाए तो किसानो को मोटे अनाज के उत्पादन से मोटा लाभ मिल सकता है। मोटे अनाज पोषण का बेहतरीन जरिया है। यदि देश में मोटे अनाज से बनने वाले दलिया, बिस्कुट, सेवई, पास्ता, लड्डू, सूप मिक्स आदि बनाने के कारखाने स्थापित किये जाए तो अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है। केंद्र सरकार के द्वारा मोटे अनाज की खेती को प्रोत्साहित किया जा रहा है। हमारा भारत मोटे

अनाज का बहुत बड़ा उत्पादक देश है भारत का योगदान विश्व उत्पादन में लगभग 41%और एशिया के कुल उत्पादन का 80% है। इन मोटे अनाजों की उपयोगिता को देखते हुए भारत में इन्हें श्री अन्न का दर्जा दिया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1.दिव्या हिमाचल , "हमारे स्वाथ्य में मोटे अनाज की भूमिका",अप्रैल 2023
2. वर्मा मनीषा, "सेहत का खजाना",योजना जनवरी :2023
3. ओझा जितेंद्र, शाह उमा शुक्ला , सिंह सुमित "मोटे अनाजों का संक्षिप्त परिचय एवं उनका स्वास्थ्य लाभ", रिसर्च गेट, सितंबर 2023.
4. भारत: "पोषण के साथ महिला सशक्तिकरण", 15 मार्च 2022 यूए समाचार
5. रावत लक्ष्मी, जोशी उदित, कुकरेती अक्षत, "मोटे अनाज वर्तमान परिपेक्ष में महत्व एवं उपयोगिता",रिसर्च गेट ,जुलाई 2021
6. नैनवाल कंचन, मोटे अनाज की खेती पर उत्तराखंड विस्तृत रिपोर्ट।
7.कौर किरणदीप, झा आलोक, "स्वास्थ्य और पोषण में मोटे अनाज का महत्व: एक समीक्षा", जनवरी 2012

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

Women's Empowerment in India: Constitutional Promises, Structural Constraints and the politics of Gender Equality

Dr. Haqnawaz Ahmad
Assistant Professor, Department of Political Science
Norbuling Rigter College, Bhutan
E-mail: alignawaz@gmail.com

Abstract
Women's Empowerment in India reflects a paradox of normative and policy advances with persistent structural constraints of the Indian state, based on constitutional guarantees of equality and a wide range of legal reforms, has gradually expanded women's rights in family law, labor, political representation, and protection against violence. Educational attainment has increased considerably; health indicators reveal selective improvements and targeted programs that range from livelihood missions and microfinance to Beti Bachao Beti Padhao and Mission Shakti have tried to enhance the capabilities and agency of women in the last few decades. However, precarious female labor force participation despite its increase, the relatively low ranking of India on the Global Gender Gap Index, and the sustained prevalence of gender-based violence continue to exhibit the limitations of formal equality and scheme-based interventions. Locating the historical evolution of women's empowerment in India, this paper tries to capture the constitutional and legal architecture, sectoral dynamics across education, health, economy, and politics, the role of social movements, digital technologies, and the intersectional hierarchies based on caste, class, region, and religion drawing from liberal, socialist, and capability-based theoretical perspectives. The analysis suggests that although the Nari Shakti Vandan Adhiniyam and local-level reservations might mark an opening for more inclusive political spaces, transformative empowerment in reality requires a redistributive approach to unpaid care work, economic security, access to justice, and sustained normative change through the continuous salience of movements and civil society.

Key words: *Women Empowerment, gender equality and patriarchy, economic participation-labour markets, political representation and reservation, gender-based violence.*

Introduction:

Historical Evolution:

While constitutional guarantees, legal reforms, economic schemes, and grassroots mobilization have considerably advanced women's empowerment in India, entrenched patriarchy, gender-based violence, labor market exclusion, and intersectional inequalities continue to check substantive equality. Although India ranks 131 out of 148 countries in the Global Gender Gap Index 2023, it has made advances in education and local political representation, which shows that progress is being made. However, there are still gaps in economic and political empowerment, so there is still much work to be done in India to ensure gender equality. As early as the 19th century, women in India began to see their rights and opportunities expanded significantly because of the actions of many people, including the social reform leaders Raja Ram Mohan Roy, who led a campaign against sati, and Ishwar Chandra Vidyasagar who advocated for the remarriage of widows as well as education for women. The national independence movement further mobilized women through Gandhi's mass campaigns, enabling their public presence and generating pressure for post-1947 constitutional guarantees of equality and universal adult suffrage. Over the following year there has been a shift from welfare oriented policies to rights based approaches particularly after the rise of autonomous women's movement in the 1970's and 80's against dowry deaths, custodial rapes and domestic violence. Analytically, women empowerment in India is often examined through liberal, socialist, and capability-based frameworks. Liberal approaches stress formal legal equality and non-discrimination; socialist feminism foregrounds the interaction of patriarchy and capitalism in structuring women's work and unpaid care; the capability framework, influenced by Amartya Sen and Martha Nussbaum, focuses on expanding women's real freedoms in health, education, agency, and participation. Recent empirical studies operationalise empowerment through indicators of decision-making autonomy, mobility, access to assets, control over income, and exposure to violence, revealing substantial inter-state variation and persistent urban–rural gaps.[1]

Constitutional and Legal Framework

The Indian Constitution articulates a strong normative regime for gender equality, principally through Article 14 (equality before the law), Article 15(1) (prohibition of discrimination on grounds of sex), and Article 15(3), which authorizes special measures for women and children. Directive Principles, including Article 39 (ensuring equal pay for equal work and safeguarding the health and strength of workers), further substantiate policy approaches committed to gender justice. Over time, a broad spectrum of statutes has sought to operationalize these constitutional commitments into enforceable rights. In the domain of family and property law, the Hindu Marriage Act (1955) and the Hindu Succession (Amendment) Act (2005) strengthen daughters' coparcenary rights. In the realm of labor and remuneration, the Equal Remuneration Act (1976) now subsumed under the Code on Wages and the Maternity Benefit Act (1961), amended in 2017, expand paid maternity leave. Legislative action to combat lawlessness by women and children includes: The domestic violence legislation (2005), Amendments concerning criminal law and Legislation designed to prevent sexual harassment against women in the workplace (2013). Recently, the Constitution Amendment (106) Act (2023) also known as the Nari Shakti Vandan

Adhiniyam, which also states that there will be 33 per cent quota for women in the Lok Sabha and State Legislative Assemblies once a delimitation exercise is conducted following the census of 2027.[2]

Education and Health Foundations

Education has been the most salient driver of women's empowerment in India, as indicated by the increase in female literacy from about 8.9% in 1951 to over 70% by 2025. Policy interventions like Sarva Shiksha Abhiyan, Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan, Kasturba Gandhi Balika Vidyalaya, and targeted scholarships for girls from the most disadvantaged communities have sharply reduced gender gaps at the levels of primary and upper-primary enrollments. Concerns remain about education quality and secondary school drop-outs, particularly regarding STEM enrollment. India's gender parity for education is around 97% according to the Global Gender Gap Report 2025. The health of women and children has also improved but there is significant inequity in accessing these benefits. On account of initiatives such as the Janani Suraksha Yojana, Janani Shishu Suraksha Karyakram etc., Institutional deliveries have increased and maternal mortality has decreased but there are still continuing deficits in the area of women's bodily integrity, accessibility to quality healthcare services and with this, a high prevalence of anemia and malnutrition, as well as inadequate sexual and reproductive health services and a wide range of interstate differences related to these.

Economic Empowerment and Labour Markets

The Economic Empowerment of Women is the weakest pillar. While there have been some improvements in recent times as seen through headline indicators published by government sources, there is still significant room for growth for women in this area. For example, the most recent data from the Periodic Poor Labour Force Survey show that the female labour force participation rate (FLFP) increased from 23.3% in 2017–18 to just below 40% between 2023–24. The majority of the increase was due to a rise in self-employed women (mostly in informal sectors) and women engaged in family unpaid work along with low-wage informal employment, particularly in the agricultural and home-based sectors. According to a report published by Reuters in 2025, it will likely take decades for the participation rates of Indian women in the workforce to reach those of their G20 counterparts because of pre-existing structural barriers such as caregiving responsibilities, social attitudes towards women participating fully in the workforce, and limited access to formal employment opportunities. In order to close this gap, the government has implemented numerous policies and programs aimed at providing credit, skills training, and the establishment of collective organizations to women throughout India. The National Rural Livelihood Mission and Self-Help Groups at the State level (e.g., Kudumbashree and Jeevika) provide women in rural areas access to credit, capacity building, collective bargaining power, and other assistance. Other programs, such as Stand-Up India, Mudra loans for women, and the "Lakhpati Didi" programme, are attempting to convert members of Self-Help Groups into micro-entrepreneurs. The government estimates that by 2025 there would be over 2 crore "Lakhpati" female entrepreneurs in India. Notwithstanding these interventions, substantial gender wage gaps

persist, women retain disproportionate representation in informal and precarious employment, and unpaid care and domestic labor substantially constrain time and mobility for them. Analysts caution that the apparent rise in female labour force participation rate (FLFPR) may partly reflect distress-driven employment in low-productivity activities rather than a shift toward decent, dignified work.[3]

Political Empowerment and Representation:

In India, there is a major difference between how women are politically represented at lower levels of government compared to higher levels. After the 73rd and 74th Amendments to the Indian Constitution passed, every state will have to reserve at least one-third of its seats for women in rural local bodies (village councils) and urban local bodies (municipal governments). Some states have gone above this minimum requirement by offering 50% of their seats to women, which has resulted in more than one million elected female representatives. Research has shown that when women hold positions of leadership (Sarpanch) in a village, they are more likely than male leaders to prioritize drinking water, sanitation, education, health, and other public goods, and over time, women's leadership in villages leads to increased acceptance of female leadership and decreased levels of discrimination against women. While some women's power has been formally recognized, this does not mean that women can exercise their autonomy independently from male family members ("Sarpanch-Pati"). On the national level, the representation of women in the Parliament is slowly improving; currently, it is between 14-15% of Lok Sabha (the lower house) members. However, the Indian Parliament will experience some major structural changes when the amendment to provide for the reservation for women in the Parliament becomes law, which is scheduled to take place in 2023. The majority of political parties in India remain led by men, and their candidate selections and money allocations favour men, making it necessary for them to reform their internal party practices and provide training and funding to provide opportunities for real political empowerment for women.[4]

Violence, Law, and Access to Justice:

In India, gender-based violence is a significant barrier to the empowerment of women. The term gender-based violence applies to any act of violence towards an individual based on their gender. As stated in the National Crime Records Bureau (NCRB) report titled "Crime in India 2022," there have been 445,256 incidents of crimes committed against women that have been recorded by the NCRB (e.g., rape, domestic violence, dowry related murders, harassment). This number is estimated to represent a 4 percent increase from 2021. The NCRB further states that they believe there is still a large amount of underreporting of violence against women. Following the December 2012 Delhi gang rape, there were widespread demonstrations throughout India and the formation of the Justice Verma Commission which eventually led to the enactment of the Criminal Law (Amendment) Act 2013. This legislation expanded the definitions of sexual offences, increased the penalties associated with these crimes and created fast-track courts in which to hear these cases. Furthermore, this law builds upon the protection of women from domestic violence, which became part of the 2005 Domestic Violence Act. The 2005 act takes a civil rights approach to providing

women with the means to remedy and protect themselves from domestic violence. Under the 2005 act, a woman may suffer domestic violence in many different ways, including physical assault, emotional manipulation, sexual abuse, verbal harassment, and financial oppression. Due to inadequate numbers of enforcement officers, as well as limited resources available to women who seek protection and legal remedies, the enforcement of this law continues to present challenges for these women. The stigma associated with being a victim of domestic abuse also acts as a significant deterrent to women seeking help from law enforcement, in addition to the inconsistency of responses from law enforcement. While many women's rights and civil society organisations exist to assist women, offers of free legal aid, support to survivors of domestic violence and community mediation programmes provide an avenue for many women to obtain the protection and remedies available to them under Indian law.[5]

Intersectionality: Caste, Region, Religion:

The empowerment and oppression of women are influenced by caste, class, location (region), religion, and disability in India in a combination of these many above factors to create an oppressive environment that varies among the different groups of women in the country. Women of the Dalit, Adivasi, and Muslim communities are particularly affected by these combinations. They encounter overlapping modes of oppression in the form of occupational segregation, lack of proper socialisation (no landownership), limited access to health and education, and heightened vulnerability to violence and crime. The NFHS composite indices used to analyse the state performance, indicate that southern and portions of western India are typically performing better than northern and central state with regards to their performance indicators of education, health, and Autonomy; this is indicative of the early investment/commitment in the social development sector and land reform legislation. The predominant physical environment in which rural women function, is very different than that of urban women, thus creating a situation where rural women are typically more heavily burdened with unpaid domestic labour, mobility restrictions hindering their ability to access wage paid employment, and a greater reliance on public schemes and social power dynamics at the local level for their economic participation. The necessity calls for an Intersectional approach in the development/provisioning of policies, which ensures the fair allocation of resources and programmes to women at the margins of society as opposed to maintaining existing advantages enjoyed by already privileged groups of women.[6]

Digital and Technological Dimensions:

Emerging digital technologies represent an opportunity for empowering women through technology in India. Programs under the Digital India initiative and the JAM (Jan Dhan - Aadhaar – Mobile) initiative provide women with a real-time way to receive money directly into their bank accounts, and they have also allowed for women's self-help groups (SHGs) to maintain books electronically, thereby improving their financial inclusion as well as increasing transparency. Digital platforms allow for women to receive online training, participate in e-commerce and gig-work opportunities, providing women with the chance to earn an income from home, or at least to have flexible working schedules. The problem remains that there are still large gender-based gaps

in access to devices, connectivity to the internet and digital skills, particularly for women living in rural areas and low-income households. Additionally, the incidence of online harassment, stalking and the non-consensual distribution of photos, disproportionately affects women and often acts as a barrier to their participation in online public life. Closing this gap will require investment in affordable connectivity, community-based training in digital skills, safe online communities and the creation of realistic and effective policies that govern platforms with respect to gender-based violence in cyberspace.[7]

Government Schemes and Policy Initiatives:

There are a number of different types of programs run by the government aimed specifically or indirectly towards empowering women. Some examples of these programs are Beti Bachao Beti Padhao (BBBP) which was developed to combat the decline in female child, and Beti Padhao which focuses on the education of girls; both programs have contributed to improvements in the Sex-Ratio at Birth (SRB) and to enrollment of girls into schools, however evaluations indicate an unequal distribution of resources and an over-allocation of funding for advertising compared to actual programmatic implementation. The Mission Shakti's program combines safety and security (Sambal) with women empowerment and inclusion (Samarthya) and includes One Stop centres, women's helpline, and shelter homes. Additionally, there are economic programs that have been targeting women entrepreneurs including Stand-Up India, Mudra, and Pradhan Mantri Ujjwala Yojana which provide women with different forms of financial support to reduce the workload on them and to improve their overall standard of living. All these programs represent a movement away from strictly viewing women as beneficiaries of services and support, such as employment and economic development, and towards viewing women as future leaders of growth and development as well as leaders in government decision making and policy creation. In addition to being presented as future leaders, continual monitoring and evaluations continue to expose consistent gaps in successful execution across the country, instances of elite capture, and unequal state ability to implement such programs.[8]

Norm Change, Movements, and Civil Society:

Women in India are empowered not just through the implementation of laws and policies but also through the ongoing activism of civil society. Both autonomous grassroots women's organisations and non-governmental organisations have successfully campaigned against dowry, violence, and discriminatory laws, as well as advocating for women's rights to property, rights to work, environmental justice, and more. Recent social movements, such as the #MeToo movement, have attracted public and institutional attention to sexual harassment in the workplace and media and have catalysed increased public discussion of these issues. Through their grassroots networks of self-help groups, trade unions, ASHAs (accredited social health activists), Anganwadi workers and community-based organisations, women are working collectively to demand better wages and working conditions, and the recognition of care work. Research has demonstrated that the exposure of young women to empowered leadership and role models has the potential to change norms regarding son preference, education for girls, and the age at which women marry over time.[9]

Directions for Policy and Research:

According to the latest composite indicators, India is faced with an array of challenges in terms of gender equality. The Global Gender Gap Report 2025 shows India is ranked 131 out of 148 countries for gender parity (about 64.1%) with significant improvements in educational attainment and modest Improvement in Health and survival but face significant challenges related to Economic Participation and Political Empowerment. Female Labour Force Participation continues to increase but has primarily been characterized by Informal Employment and Low earnings, while women's access to Senior and Managerial Roles continues to be limited. However, the passage of the Constitution Amendment in 2020 for the reservation of Seats for Women in State Legislative Assemblies and continued growth of Local Bodies will enable a structured and Inclusive Political Landscape within the next 10 years. Scholars and policy analysts urge the need for Transformational Strategies to enhance women's access to Economic and Political Power. Some recommended areas of improvement are: Development and Professionalization of Care Infrastructure such as Childcare Facilities, Eldercare services, Community health workers for Redistribution of Unpaid Care Work, and Enhanced Access for Women to Paid Work and Politics; Development of Enhanced Financial Inclusion through Financial Products designed for Gender-sensitive consumption, Accessible processes for Grievance Redressal, and Social Security for Informal Workers including Pension and Health Insurance and Maternity benefits. To enhance the quality of Gender Responsive Budgeting (GRB) provided by State and Union Governments, it is imperative to incorporate a robust framework for Outcome Tracking, while ensuring that gender-disaggregated data provides the foundation for informing Gender Responsive Budgeting Policies (e.g. through public disclosure). Targeted Gender-Sensitive Policies, as well as scholarly analysis and increasing use of a combination of both qualitative and quantitative methods will advance our understanding of how Political Quotas, Conditional Cash Transfers (CCTs), Digital Inclusion, and other interventions impact women's empowerment. Mixed Method/Quasi-Experimental Models & Longitudinal Analysis are becoming more common practice among researchers-evidence suggests that these methodologies will provide rich opportunities for both developing additional knowledge and for helping to shape future policies to improve gender equity outcomes democratically.[10]

Conclusion:

Women’s empowerment is currently at a tipping point in India. The Constitution, laws and policies creating opportunities for women to participate politically at all levels of government, advancements made in education, and many other grassroots movements for women’s rights have laid the groundwork for women’s empowerment, but women’s freedom and potential are still subject to limitations created by the economic structure, deeply entrenched patriarchal systems of oppression, ongoing violence against women, and the intersectional impacts of inequality against many different categories of women. Achieving true equality between men and women will take beyond simply continuing to create legal frameworks and related policies to support the advancement of women through education and entrepreneurship. For long-term impact, it will necessitate a substantial investment to end the gender-based power dynamics established by our

societal norms. This involves working with organisations in their accountability to make these systemic changes as well as providing opportunities for women from diverse backgrounds within the society to be promoted into positions of leadership.[11]

References:

1.Vajiram & Ravi. (2025, June 12). India slips to 131st in Global Gender Gap Index 2025: Progress and challenges.https://vajiramandravi.com/current-affairs/india-slips-to-131st-in-global-gender-gap-index-2025-progress-and-challenges

2.Bhat, B. A. (2024). Empowerment of Indian women: An inter-state comparative analysis. Pragati: Journal of Indian Economy, 11(2). https://doi.org/10.17492/jpi.pragati.v11i2.1122401

3.CEDA. (2025, March 4). Too good to be true? Steadily rising female labour force participation rates in India. Centre for Economic Data and Analysis. https://ceda.ashoka.edu.in

4. Drishti IAS. (2025, June 12). Global Gender Gap Report 2025. https://www.drishtiias.com/daily-updates/daily-news-analysis/global-gender-gap-report-2025

5. National Crime Records Bureau. (2022). Crime in India 2022. Ministry of Home Affairs.

6. Next IAS. (2025, November 12). Women empowerment, gender equality in India. https://www.nextias.com/blog/women-empowerment

7. Anhad Law. (2025, August 23). Understanding legal frameworks: Women's rights in India. https://www.anhadlaw.com/post/understanding-legal-frameworks-women-s-rights-in-india

8. Government of India. (2016). Schemes/programmes for empowerment of women and development of children (PIB Release). Press Information Bureau.

9. Government of India. (2025, August 14). Nari Shakti se Naya Bharat (Factsheet). Press Information Bureau. https://www.pib.gov.in/FactsheetDetails.aspx?Id=149234

10. Zafar, S., & colleagues. (2024). Women's empowerment in India: State-wise insights from the National Family Health Survey. PLOS Global Public Health, 4(7). https://pmc.ncbi.nlm.nih.gov/articles/PMC11346798/

11. Singh, S. (2020). Women empowerment in India: A critical analysis. Graduate Women International Working Papers. https://graduatewomen.org/wp-content/uploads/2020/08/Article-written-by-Seema-Singh-BRPID-project-findings.pdf

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

अवलोकन की प्रासंगिकता का समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ0 मनोज कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर समाजशास्त्र, समाज विज्ञान विद्याशाखा
उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविधालय,प्रयागराज

सारांश

सामाजिक अनुसन्धान में अवलोकन तथ्य संकलन की एक लोकप्रिय प्रविधि है। अवलोकन का शाब्दिक अर्थ है–आँखों द्वारा निरीक्षण करना। नित्य दिन हम अवलोकन करते रहते हैं और इससे अपने ज्ञान में वृद्धि करते हैं। प्राकृतिक विज्ञानों के सिद्धान्त मुख्यत अवलोकन पद्धति की ही देन हैं. चाहे वह अवलोकन प्राकृतिक क्षेत्र में किया गया हो या प्रयोगशाला में। प्राकृतिक विज्ञान की तरह सामाजिक विज्ञान में भी अवलोकन तथ्य–सकलन एवं ज्ञान–संग्रह है। एक्स–रे, न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त आदि का प्रारम्भ इसी सामान्य अवलोकन से हुआ और अन्ततः अवलोकन के आधार पर ही विभिन्न वैज्ञानिक सिद्धान्तों का सत्यापन भी होता है। गुडे एवं हाट ने इस सम्बन्ध में सही कहा है कि विज्ञान अवलोकन से प्रारम्भ होता है और अपने अंतिम सत्यापन के लिए वह पुन अवलोकन का ही आश्रय लेता है।

अवलोकन विधि किसी विषय के व्यवहार का अवलोकन और वर्णन करने की एक विधि के रूप में वर्णित किया जाता है, और इसमें किसी घटना को तब तक देखते रहने की मूल तकनीक शामिल होती है जब तक कि कोई पूर्वाभास या अंतर्दृष्टि प्राप्त न हो जाए। हम निरंतर अवलोकन में लगे रहते हैं। यह हमारे आसपास की दुनिया के बारे में जानकारी प्राप्त करने की हमारी मूल विधि है। आजकल, शोधकर्ता कैमरा, वीडियो–कैमरा, टेप–रिकॉर्डर आदि जैसे कई उपकरणों का उपयोग कर रहे हैं। वस्तुतः, अवलोकन को अधिकांश लोगों के दैनिक सामाजिक जीवन का आधार माना जा सकता है; हम व्यवहारों और भौतिक परिवेश के परिश्रमी पर्यवेक्षक हैं। हम देखते हैं, मूल्यांकन करते हैं, निष्कर्ष निकालते हैं, और अंतःक्रियाओं और संबंधों पर टिप्पणी करते हैं। हालाँकि, अवलोकन को वैज्ञानिक पद्धति का दर्जा दिया जाना चाहिए और इसे व्यवस्थित, उद्देश्यपूर्ण और वैज्ञानिक आधार पर किया जाना चाहिए जिज्ञासा और आकर्षण भी इसके अत्यंत महत्वपूर्ण घटक है। शोधपत्र आँकड़ा संग्रह पद्धति के अर्थ और उद्देश्य पर चर्चा करता है। अवलोकन की योजना बनाते समय उसके तरीके, प्रकार पर प्रकाश डालना और इसके लाभ हानियां को प्रदर्शित किया जाना होता है इन तकनीक वस्तुओं से अवलोकन करने में सहूलियत होती है क्योंकि कभी–कभी हमने किसी घटना या वस्तु का प्रत्यक्ष अवलोकन तो कर लिया लेकिन जब हम घटना के अंतिम निष्कर्ष पर पहुंचाना चाहते हैं तो तकनीकी वस्तु में कैद घटना का दोबारा अवलोकन करना पड़ता हैं जिससे विश्लेषण का कोई पक्ष छुटने न पाये ।

मुख्यशब्द – अवलोकन विधि, वैज्ञानिक पद्धति, व्यवस्थित, उद्देश्यपूर्ण, आँकड़ा संग्रह, डेटा संग्रह, सामाजिक विज्ञान, समाजशास्त्र।

भूमिका

सामाजिक विज्ञान में अवलोकन विधि का प्रयोग डेटा संग्रह के लिए किया जाता है किसी सामाजिक घटना को समझने के लिए हमे सर्वप्रथम उसे घटना का अवलोकन करना पड़ता है जिससे घटना की समझ को विकसित करने तथा उसे एक अंतिम निष्कर्ष तक पहुंचना ही अवलोकन होता है। सामाजिक घटनाओं को समझने में प्राकृतिक विज्ञान के अनुभववादी–प्रत्यक्षवादी तरीकों को लागू करने का प्रयास करने वालों और ऐसे प्रयासों का विरोध करने वालों के बीच बहस देखी गई। सामाजिक घटनाओं को प्राकृतिक घटनाओं के बराबर मानने वाले विरोधियों का तर्क है कि सामाजिक क्रिया गतिशील है और सामाजिक कर्ता केवल प्रतिक्रिया नहीं करते बल्कि सामाजिक स्थितियों का निर्माण, परिवर्तन और पुनर्निर्माण करते हैं। इस प्रकार उत्तरार्द्ध मानवीय अंतःक्रियाओं में सामाजिक गतिशील की प्रकृति को समझने के लिए एक पद्धति विकसित करने का तर्क देते हैं। इस तरह की बहस के प्रमुख परिणामों में से एक घटनात्मक पद्धति का उदय है जो अनुसंधान प्रक्रिया में कर्ताओं के दृष्टिकोण को विशेषाधिकार देता है। अवलोकन की ज्ञानमीमांसा का आधार, सामाजिक क्रिया को उसकी स्वाभाविक रूप से घटित होने वाली स्थिति में समझना है। सामाजिक कर्ताओं के बीच अंतःक्रिया का सिद्धांत शोधकर्ता के एजेंडे का केंद्रबिंदु है। इन मूलों से अवलोकन की विधि का उदय जो हुआ समाजशास्त्र और नृविज्ञान में सबसे व्यापक रूप से प्रयुक्त विधि मनी जाती है। मानवविज्ञानियों द्वारा सरल समाजों के अवलोकन से जो शुरुआत हुई, समय के साथ उसका दायरा शहरी, जटिल औपचारिक संगठनात्मक क्षेत्रों तक विस्तृत रूप मे फैल गया।

समाजशास्त्र के पिता अगस्त कॉम्टे (Auguste Comte) जब समाजशास्त्र की रूपरेखा बना रहे थे, तब उन्होंने यह अनुभव किया कि यदि समाज को वैज्ञानिक आधारों का विषय बनाना है तो अवलोकन विधि द्वारा उसकी विषय–वस्तु का अध्ययन होना चाहिए,प्रत्यक्ष अवलोकन (Direct Observation) द्वारा सामाजिक घटनाओं के अध्ययन पर बल दिया। तभी से अवलोकन विधि समाजशास्त्र की महत्वपूर्ण विधि बन गई सम्भवतः इससे पूर्व भी सामाजिक विज्ञानों में इस प्रविधि का प्रयोग होता आया है।

अवलोकन एक परिचय

सामाज वैज्ञानिक अनुभवजन्य आँकड़े सफलतापूर्वक एकत्र करने के लिए अवलोकन को एक पद्धतिगत उपकरण के रूप में उपयोग करते रहे हैं। अवलोकन, सामाजिक विज्ञान अनुसंधान में आँकड़े एकत्र करने का सबसे महत्वपूर्ण उपकरण रहा है। शोधकर्ता अध्ययनाधीन समुदाय या समूह की सांस्कृतिक दुनिया में खुद को डुबो लेता है और व्यवस्थित रूप से जानकारी दर्ज करता है। आमतौर पर क्षेत्र स्थल अपेक्षाकृत छोटे होते हैं, लेकिन समुदाय के सदस्यों के साथ संपर्क की अवधि लंबी होती है। यह एक स्वाभाविक जाँच है जिसमें शोधकर्ता गहन और दीर्घकालिक अंतःक्रिया के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप से जानकारी प्राप्त करता है। अवलोकन का प्राथमिक आँकड़ा क्षेत्र हैं। अवलोकन के अलावा, शोधकर्ता क्षेत्र कार्य के दौरान साक्षात्कार अनुसूची, गणना या नमूनाकरण जैसी अन्य विधियों का भी उपयोग करता है। अनौपचारिक साक्षात्कार, प्रमुख सूचनादाताओं के साथ बातचीत करते समय शोधकर्ता द्वारा व्यापक रूप से उपयोग की जाने वाली तकनीक है। इसी प्रकार, गणना और नमूनाकरण शोधकर्ता को अध्ययन किए गए लोगों के सामाजिक–आर्थिक पहलुओं के बारे में जानकारी प्राप्त करने में सक्षम बनाता है। कुछ शोधकर्ता लोगों की जनगणना भी करते हैं। इससे यह संकेत मिलता है कि अवलोकन विधि का हमेशा अलग से उपयोग नहीं किया जाता है, बल्कि, जब इसे अन्य तकनीकों के साथ प्रयोग किया जाता है, तो यह व्यापक परिणाम प्रदान करती है। यह मॉड्यूल अवलोकन के अर्थ, महत्व और विभिन्न प्रकारों पर चर्चा करता है, और मुख्य रूप से अवलोकन पर केंद्रित है, जो सामाजिक

विज्ञान अनुसंधान में सबसे व्यापक रूप से प्रयुक्त तकनीक है। यह अवलोकन के सूक्ष्म विवरणों और इसके लाभों व सीमाओं की व्याख्या करता है। जब कि मानव इतिहास में कुछ सबसे महत्वपूर्ण वैज्ञानिक खोजें अवलोकनों के कारण ही हुई हैं। चार्ल्स डार्विन ने गैलापागोस द्वीप समूह के पशु और समुद्री जीवन के अवलोकनों का उपयोग अपने विकासवाद के सिद्धांत को गढ़ने में किया, जिसका वर्णन उन्होंने अपनी पुस्तक "ऑन द ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़" (On the Origin of Species) में किया है। आज, समाजशास्त्री, प्राकृतिक वैज्ञानिक, इंजीनियर, कंप्यूटर वैज्ञानिक, शैक्षिक शोधकर्ता और कई अन्य लोग अवलोकनों को एक प्राथमिक शोध पद्धति के रूप में उपयोग करते हैं।

शोध में अवलोकन विधि में डेटा एकत्र करने के लिए व्यवहार, घटनाओं या घटनाओं का व्यवस्थित रूप से अवलोकन और दस्तावेज़ीकरण शामिल है। यह अध्ययन के तहत विषयों के बारे में वास्तविक समय की जानकारी प्राप्त करने के लिए उपयोग की जाने वाली तकनीक है। शोधकर्ता अंतर्दृष्टि प्राप्त करने और निष्कर्ष निकालने के लिए जो कुछ देखते हैं उसे रिकॉर्ड करते हैं। अवलोकन विधि को विभिन्न क्षेत्रों में लागू किया जा सकता है, जैसे कि सामाजिक विज्ञान, नृविज्ञान, मनोविज्ञान, और बहुत कुछ। यह प्राकृतिक मानव व्यवहार का अध्ययन करने और समझने का अवसर प्रदान करता है और अवलोकन लगभग किसी भी विषय पर किए जा सकते हैं, और आप किस प्रकार के अवलोकन करेंगे यह आपके शोध प्रश्न पर निर्भर करता है। आप परिसर में यातायात या पार्किंग पैटर्न का अवलोकन करके यह अनुमान लगा सकते हैं कि क्या सुधार किए जा सकते हैं। आप बादलों, पौधों या अन्य प्राकृतिक घटनाओं का अवलोकन कर सकते हैं। यदि आप लोगों का अवलोकन करना चुनते हैं, तो आपको कई अतिरिक्त बातों पर विचार करना होगा, जिसमें यह भी शामिल है कि आप उनका अवलोकन किस प्रकार करेंगे और उनकी सहमति कैसे प्राप्त करेंगे। यदि आप लोगों का अवलोकन कर रहे हैं, तो आप अवलोकन का सामान्य तरीका चुन सकते हैं सहभागी अवलोकन समाजशास्त्र और मानव विज्ञान में नृवंशविज्ञान अनुसंधान का एक सामान्य तरीका है। इस प्रकार के अवलोकन में, एक शोधकर्ता सहभागियों के साथ अंतःक्रिया कर सकता है और उनके समुदाय का हिस्सा बन सकता है।

सहभागी अवलोकन

समाज वैज्ञानिक सहभागी अवलोकन को इस प्रकार परिभाषित करते हैं कि इसमें शोधकर्ता उन व्यक्तियों की गतिविधियों में संलग्न होता है जिनका वह अध्ययन कर रहा है। सहभागी अवलोकन एक शोध दृष्टिकोण है जिसमें प्रमुख गतिविधि की विशेषता विषयों के साथ उस स्थान पर लंबे समय तक संपर्क में रहना है जहाँ वे सामान्यतः अपना समय व्यतीत करते हैं। प्रसिद्ध मानवविज्ञानी **मार्गरेट मीड** ने जिन समुदायों का अध्ययन किया था, उनमें लंबे समय तक रहकर और उनके साथ अंतःक्रिया करते हुए बिताया। हालाँकि अधिकांश परिस्थितियों में लोगों को स्वेच्छा से अनुसंधान में सहभागी बनना पड़ता है, कुछ मामलों में सहभागियों को यह न बताना स्वीकार्य है कि आप उनका अवलोकन कर रहे हैं। **श्रीनिवास** सहभागी अवलोकन को संक्षेप में इस प्रकार बताते हैं कि इसमें एक अच्छी तरह से प्रशिक्षित मानवविज्ञानी का अपनी पसंद के क्षेत्र या लोगों के पास जाना, उनके साथ काफी लंबा समय बिताना, आमतौर पर 12 से 18 महीने, मूल निवासियों के समान परिस्थितियों में रहना, उनसे उनकी अपनी भाषा में बात करने में सक्षम होना, लोगों की मित्रता जीतना, जनगणना सर्वेक्षण करने, वंशावली संबंधी जानकारी एकत्र करने, प्रश्नावली का चयनात्मक उपयोग करने, अनौपचारिक और गहन साक्षात्कार जैसी प्रसिद्ध मानवशास्त्रीय तकनीकों के उपयोग के माध्यम से जानकारी एकत्र करना और सबसे बढ़कर, लोगों की धार्मिक और धर्मनिरपेक्ष गतिविधियों में भागीदारी के माध्यम से जानकारी एकत्र करना शामिल है।

सहभागी अवलोकन के लिए अवलोकनों को रिकॉर्ड करने के लिए एक विशेष दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है, जो फ़ील्ड वर्क के माध्यम से किया जाता है। नृवंशविज्ञानियों मनुष्य के जीवन संस्कृति, रीति रिवाज, परंपरा, समाज, भाषा, और विकास के लिए फ़ील्ड वर्क महत्वपूर्ण हैं क्योंकि सर्वेक्षण शोधकर्ता द्वारा साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से एकत्र किए गए डेटा महत्वपूर्ण हैं। सहभागी अवलोकन एक ऐसी विधि है जिसमें एक पर्यवेक्षक संस्कृति के स्पष्ट और मौन पहलुओं को जानने के साधनों के रूप में अध्ययन किए जा रहे लोगों की दैनिक गतिविधियों, अनुष्ठानों, अंतःक्रियाओं और घटनाओं में भाग लेता हैं।

सहभागी अवलोकन पर बहस दो महत्वपूर्ण मुद्दों को उठाती है भागीदारी की डिग्री, और डेटा संग्रह में अवलोकन। भागीदारी में भावनात्मक जुड़ाव शामिल होता है जबकि अवलोकन के लिए अलगाव की आवश्यकता होती है। अवलोकन, अपने सख्त अर्थ में, शोधकर्ता को क्रियाओं और व्यवहारों से दूर करने का प्रयास करता है ताकि शोधकर्ता पर स्थिति का प्रभाव कम हो सके। दूसरी ओर, भागीदारी को मूल निवासी बनना और घटना बन जाना है। अवलोकन विभिन्न प्रकार की भागीदारी के बीच अंतर करते हैं। गैर–भागीदारी है जिसमें किसी विशेष सांस्कृतिक संदर्भ के बारे में जानकारी बिना भागीदारी के प्राप्त की जा सकती है। यह टेलीविजन देखने, समाचार पत्र पढ़ने या डायरी या उपन्यास पढ़ने से प्राप्त होती है। स्प्रेडली एक अन्य प्रकार की सहभागिता की भी पहचान करते हैं जिसे पूर्ण सहभागिता कहा जाता है। इसमें शोधकर्ता उस समूह का सदस्य बन जाता है जिसका अध्ययन किया जा रहा है। उदाहरण के लिए, उस स्थान पर निवास करने वाले निवासियों की भूमिका निभाना या उस समूह या समुदाय की अन्य भूमिकाएँ निभाना जहाँ अध्ययन किया जा रहा है।

असहभागी अवलोकन

सहभागी अवलोकन के विपरीत, असहभागी अवलोकन में शोधकर्ता अध्ययन किए जाने वाले सामाजिक समूह या समुदाय का हिस्सा बनने का प्रयास नहीं करता। शोधकर्ता सामाजिक समूह या समुदाय के सांस्कृतिक दायरे से बाहर रहता है और फिर भी एक पर्यवेक्षक की भूमिका निभाता है, ठीक वैसे ही जैसे सहभागी अवलोकन में शोधकर्ता निभाता है। अध्ययन किए जा रहे समुदाय के सदस्य भी शोधकर्ता की स्थिति से अवगत होते हैं। असहभागी अवलोकन को अर्ध–सहभागी अवलोकन कहा जाता है। असहभागी अवलोकन अनुसंधान परिवेश में शोधकर्ता पूरी अध्ययन अवधि के दौरान एक बाहरी व्यक्ति बना रहता है। शोधकर्ता की यह स्थिति उसे अवलोकनों को दर्ज करने में वस्तुनिष्ठ होने की अनुमति देती है। यह भी संभव है कि अध्ययन किए जा रहे समूह के सदस्य बाहरी शोधकर्ता की संगति में स्वतंत्र महसूस करें। हालाँकि, यह तकनीक शोध स्थितियों को समझने के लिए सीमित गुंजाइश प्रदान करती है। समूह या समुदाय के सदस्यों की घटनाओं, कार्यों का व्यावहारिक सामाजिक–सांस्कृतिक विवरण असहभागी पद्धति से प्राप्त करना कठिन होता है।

नियंत्रित अवलोकन

नियंत्रित अवलोकन में, अवलोकनों को रिकॉर्ड करने में शोधकर्ता के प्रभाव को न्यूनतम करने का प्रयास किया जाता है। यह एक व्यापक धारणा है कि सामाजिक वैज्ञानिक, चाहे वे अपने मूल्यों, विचारों और विश्वासों को अवलोकन में थोपने से कितना भी बचने की कोशिश करें, सामाजिक वास्तविकता को वस्तुनिष्ठ रूप से समझने में विफल रहते हैं। इसलिए, शोधकर्ता की सामाजिक पृष्ठभूमि के अध्ययनाधीन सामाजिक समूह पर उसके अवलोकनों के प्रभावों को अलग–थलग करने के प्रयास किए गए हैं। किसी घटना या क्रिया को रिकॉर्ड करने के लिए कैमरा, टेप रिकॉर्डर, मानचित्र, तस्वीरें, समाज–मापी पैमाने आदि जैसे सावधानी पूर्वक तैयार किए गए अनुसूचियों और उन्नत उपकरणों का उपयोग अवलोकन में वस्तुनिष्ठता को बढ़ा सकता है। हालाँकि, सख्त

अर्थों में कहें तो, नियंत्रित अवलोकन विधियों और सटीक उपकरणों का उपयोग करने वाला एक समाजशास्त्री, प्राकृतिक आवास का अध्ययन करने वाले प्राणी विज्ञानी या वनस्पतिशास्त्री से अलग नहीं है। इसलिए सामाजिक अनुसंधान में नियंत्रित अवलोकन करना कठिन है। हालाँकि, व्यवस्थित अवलोकन काफी हद तक पर्यवेक्षक के पूर्वाग्रह को सीमित करता है।

अवलोकन में नैतिकता

समाज वैज्ञानिकों पर अक्सर अपने अध्ययन की वस्तुओं के साथ एक शिकारी संबंध रखने का आरोप लगाया जाता है, खासकर जहाँ ये वस्तुएँ अपेक्षाकृत शक्तिहीन, निम्न स्तर के गरीब लोग, या जातीय अल्पसंख्यकों के सदस्य होते हैं। इस प्रकार, अवलोकन विधि कई नैतिक प्रश्न उठाती है। विशेष रूप से, सहभागी अवलोकन सभी सामाजिक विज्ञान अनुसंधान विधियों में एक बहुचर्चित विधि है। ऐसा इसलिए है क्योंकि शोधकर्ता अपेक्षाकृ त लंबे समय तक अध्ययन किए जा रहे लोगों के साथ रहता है, उनकी दिन–प्रतिदिन की गतिविधियों में भाग लेता है, उन्हें करीब से देखता है, और लोगों के सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन के अंतरंग पहलुओं तक पहुँच प्राप्त करता है। साथ ही, उसका कार्य प्रेक्षित घटनाओं, परिघटनाओं, गतिविधियों को विश्वसनीय तरीके से दर्ज करता भी है। बर्नार्ड का सुझाव है कि अनौपचारिक बातचीत के दौरान जिसे स्पष्ट रूप से गपशप माना जा सकता है, वह शोधकर्ता के लिए आँकड़े बन सकता है। इस प्रकार के मुद्दे सामाजिक विज्ञान अनुसंधान की नैतिकता का हिस्सा बन जाते हैं। अक्सर यह प्रश्न उठाया जाता है कि क्या शोधकर्ता आँकड़े संग्रह के लिए जिन लोगों के साथ बातचीत करता है, उन्हें ऐसी जानकारी के उपयोग के बारे में सूचित नहीं करता है।

एकत्र किये गए आकडो के माध्यम से एकत्रित जानकारी के प्रकाशन के संबंध में नैतिकता यह होती है कि किसी भी उत्तरदाताओं की जानकारी लोगों में साझा करने से बचना चाहिए। प्रतिभागी अवलोकन के बारे में एक और नैतिक चिंता यह है कि फील्ड वर्क के दौरान शोधकर्ता द्वारा उत्तरदाताओं या सूचनादाताओं के साथ किस हद तक लगाव विकसित होता है। नृवंशविज्ञान का उपयोग करने वाले कई मानवविज्ञानियों ने बताया है कि उन्होंने किसी समुदाय या समूह में अध्ययन किए गए लोगों तक पहुँच और उनका विश्वास हासिल करने के लिए काल्पनिक रिश्तेदारी संबंध स्थापित किए हैं। यह कहा जा सकता है कि अक्सर ऐसे संबंधों ने शोधकर्ता के व्यक्तिगत समय और ऊर्जा की कीमत पर, कुशल डेटा संग्रह को सक्षम बनाया।

समाजशास्त्र में अवलोकन की प्रासंगिकता

- समाजशास्त्र में अवलोकन की प्रासंगिकता इसलिए है क्योंकि यह शोधकर्ताओं को सामाजिक यथार्थ को प्रत्यक्ष रूप से देखने, समझने और विश्लेषण करने में सक्षम बनाता है, जिससे ठोस, वास्तविक दुनिया के डेटा के आधार पर सिद्धांत और परिकल्पनाएँ विकसित की जा सकती हैं। अवलोकन विभिन्न अनुसंधान विधियों का आधार बनता है, सामाजिक व्यवहार की गहराई से अध्ययन करने में मदद करता है, और वास्तविक जीवन की स्थितियों में सूक्ष्म और अप्रत्याशित घटनाओं को उजागर करता है जो केवल अवलोकन के माध्यम से ही पहचानी जा सकती हैं।
- समाजशास्त्र में अवलोकन की प्रासंगिकता इसलिए है क्योंकि यह शोधकर्ताओं को सामाजिक यथार्थ को उसके प्राकृतिक परिवेश में प्रत्यक्ष रूप से समझने,मानव व्यवहार और संस्कृति के सूक्ष्म पहलुओं का अध्ययन करने और सिद्धांत निर्माण के लिए अनुभवजन्य साक्ष्य प्राप्त करने में सक्षम बनाता है.यह घटनाओं को उनकी स्वाभाविक संरचना में देखता है, विस्तृत जानकारी एकत्र करता है, और

सूचनादाताओं की भावनात्मक प्रतिक्रियाओं को पहचानने में मदद करता है, खासकर जब अन्य विधियां अनुपयोगी हों।

- समाजशास्त्र में अवलोकन की प्रासंगिकता इस तथ्य में निहित है कि यह शोधकर्ताओं को सामाजिक यथार्थ को उसकी प्राकृतिक स्थिति में समझने, घटनाओं को प्रत्यक्ष रूप से अनुभव करने, और असहभागी तरीकों की तुलना में मानव व्यवहार पर अधिक गहन अंतर्दृष्टि प्राप्त करने की अनुमति देता है, जिससे सिद्धांत निर्माण और सूचित निर्णय लेने में मदद मिलती है।
- समाजशास्त्र में अवलोकन की प्रासंगिकता इस तथ्य में निहित है कि यह शोधकर्ताओं को प्राकृतिक परिस्थितियों में लोगों के व्यवहार और सामाजिक अंतःक्रियाओं का प्रत्यक्ष और व्यवस्थित अध्ययन करने की अनुमति देता है, जिससे उन्हें मानवीय व्यवहार की गहराई से समझा जाता है। और सैद्धांतिक निर्माण में मदद मिलती है। यह एक मौलिक गुणात्मक अनुसंधान विधि है जो गहन क्षेत्र–कार्य के माध्यम से सामाजिक दुनिया की जटिलताओं को समझने के लिए महत्वपूर्ण है।
- समाजशास्त्र में अवलोकन की प्रासंगिकता इस तथ्य में निहित है कि यह शोधकर्ताओं को सीधे प्राकृतिक परिवेश में घटनाओं और मानव व्यवहारों का अध्ययन करने, सामाजिक वास्तविकता को समझने और सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि उत्पन्न करने की अनुमति देता है। यह एक लचीली और खुली प्रक्रिया है जो लोगों के अनुभवों की गहराई से समझ प्रदान करती है, खासकर उन समूहों के लिए जहाँ अन्य विधियाँ भयभीत या संदिग्ध हो सकती हैं। अवलोकन समाजशास्त्रीय सिद्धांतों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जैसे कि जॉर्ज सिमेल, गॉफमैन ने मानव व्यवहार और संस्कृति पर अपने सिद्धांतों के लिए अवलोकन का उपयोग किया।

निष्कर्ष

सभी शोध, चाहे प्राकृतिक विज्ञानों में हों या सामाजिक विज्ञानों में, अवलोकन शामिल होता है। इसका उपयोग प्रेक्षित घटनाओं, चाहे वे प्राकृतिक हों या सामाजिक, पर सार्थक निष्कर्ष निकालने के लिए एक वैज्ञानिक पद्धति के रूप में किया गया है। हालाँकि, अवलोकन विधि का उपयोग करके डेटा संग्रह उतना सरल नहीं है जितना प्रतीत होता है। मानकीकृत प्रक्रियाओं और स्थापित प्रथाओं का पालन किए बिना प्राकृतिक या सामाजिक घटनाओं का अवलोकन निष्कर्ष निकालने के लिए मान्य नहीं माना जा सकता है। यहां तक कि अगर कोई निष्कर्ष निकालने का प्रयास करता है, तो उसे वैधता की कसौटी पर खरा उतरना होगा। अवलोकन के निष्कर्षों की सत्यता के साथ समस्याओं को दूर करने के लिए शोधकर्ता कुछ प्रक्रियाओं को अपनाते हैं इसलिए यह कहा जा सकता है कि सामाजिक घटनाओं का अवलोकन निर्धारित उद्देश्यों से व्यवस्थित एव संगठित रूप मे रिकॉर्डिंग एवं वैज्ञानिक तरीके से किए गए अवलोकन वैज्ञानिक बन जाते है। अवलोकन में शोधकर्ता घटनाओं या परिघटनाओं को प्रत्यक्ष रूप से देखता या अनुभव करता है। शोधकर्ता घटना या परिघटना की व्याख्या करने में अपनी इंद्रियों के प्रभाव पर निर्भर करता है। अवलोकन सामाजिक यथार्थ को उसके अस्तित्व के अनुसार पकड़ने में सक्षम बनाता है। अवलोकन में वस्तुनिष्ठता अध्ययन में अपनाए गए सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य द्वारा निर्देशित घटनाओं या परिघटनाओं के वैचारिक क्रम के माध्यम से प्राप्त की जाती है। शोधकर्ता का अवलोकन एक आम व्यक्ति के अवलोकन से इस आधार पर भिन्न होता है कि शोधकर्ता एक स्पष्ट सिद्धांत या परिकल्पनाओं के समूह के साथ अवलोकन की क्रिया में संलग्न होता है। विभिन्न समाजशास्त्रियों ने सिद्धांत निर्माण में अवलोकन पर भरोसा किया है।

सन्दर्भ

- महाजन ओ. पी. सामाजिक अनुसंधान सर्वेक्षण एंव सांख्ययिकी, शिक्षा साहित्य प्रकाशन, मेरठ,1984
- मुखर्जी रवीन्द्रनाथ, सामाजिक शोध व सांख्यिकी विवेक प्रकाशन दिल्ली,1992
- यादव, राम जी, 'भारत में ग्रामीण विकास', अर्जुन पब्लिक हाऊस, नई दिल्ली, 2013
- जैन. वी. एम., शोध प्रविधि एंव क्षेत्रीय तकनीकि रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर,1990
- मदान जी. आर. भारतीय सामाजिक समस्यायें, विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली,1992
- नाथ, राम पारस, अनुसंधान परिचय, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा,1985
- डॉ0 ए0आर0 एन0 श्रीवास्तव डॉ0 आनन्द कुमार सिन्हा,सामाजिक अनुसन्धान शेखर प्रकाशन, इलाहाबाद 2008
- Ahuja, Ram ,Research Methods Jaipur Rawat 2001
- Bernard, H R.,Research Methods in Anthropology. Qualitative and Quantitative Approaches Thousand Oaks Sage.2006
- Bhandarkar, PL and Wilkinson. Methodology and Techniques of Social Research Mumbai Himalaya 1998
- Cohen, Louis Research Methods in Education 8th ed., Routledge, 2018
- Dwivedi, R.S,Research Methods in Behavioural Sciences Macmillan India Limited, New Delhi 1997
- Goode, William J. and Hatt, Paul K., Methods in Social Research Auckland McGraw Hill 1981
- Goswami, Inder Mohan,(ed), Research Methodology in Library Science. New Delhi Commonwealth 1995
- Handarkar, PL and Wilkinson,TS, Methodology and Techniques of Social Sciences. Mumbar Himalaya 1998
- Khanna, J. K.,Handbook of Research in Library and Information Science. New Delhi Crest 2001
- Krishna Kumar. Research Methods in Library and Information Science New Delhi: Har-Anand 1992
- Krishna Swamı, O R., Methodology of Research in Social Sciences Mumbai Himalaya 1993
- Kumar R,Research Methodology New Delhi Dorling 2006

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

युवाओं में बढ़ती नशाखोरी की प्रवृत्ति: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

शिवम सिंह
शोध छात्र , समाजशास्त्र विभाग
महाराज बलवन्त सिंह पी०जी० कॉलेज गंगापुर, वाराणसी (उ०प्र०)
प्रो० आलोक कुमार कश्यप
विभागाध्यक्ष- समाजशास्त्र विभाग
महाराज बलवन्त सिंह पी०जी० कॉलेज गंगापुर, वाराणसी(उ०प्र०)

शोध सार

नशाखोरी एक गंभीर समस्या है जो युवाओं में बढ़ती जा रही है। गांवों का देश कहा जाने वाला भारत ,जहां की अधिकतर युवा आबादी गांवों मे निवास करती है। युवाओं में नशे का प्रभाव फैशन की भांति तीव्र गति से फैल रही है ,जिसकी मकड़जाल में युवा वर्ग स्वयं को समर्पित करता जा रहा है। नशीली दवाओं का अवैध, गैर-चिकित्सा उपयोग, जिनमें से अधिकांश दवाओं में किसी व्यक्ति की मानसिक स्थिति को बदलने के गुण होते हैं, जिन्हें सामाजिक मानदंडों और कानून द्वारा उपयोगकर्ता के जीवन में बड़े पैमाने पर समाज के लिए अनुचित, अवांछनीय, हानिकारक माना जाता है। शराब, हेरोइन, कोकीन, अफीम, मरिजुआना, कुछ ऐसी नशीली दवाएं हैं जिनका दुरुपयोग किया जाता है। आम तौर पर, युवा इस नशीली दवाओं के खतरे और इसके दुरुपयोग का शिकार बनते दिख रहें हैं। जिज्ञासा, साथियों का दबाव, सिगरेट और शराब जैसी दवाओं की उपलब्धता युवाओं में नशीली दवाओं के दुरुपयोग के तात्कालिक कारण हैं। बुरे साथियों की संगत में, दोस्तों पर विशेष रूप से वरिष्ठ हाई स्कूलों में नशीली दवाओं के सेवन के लिए दबाव डाला जाता है। हमारे टेलीविजन स्टेशनों और हमारे रेडियो स्टेशनों पर, शराब, सिगरेट और अन्य गैर-औषधीय दवाओं का "नग्न" विज्ञापन होता है। ये हानिकारक दवाएं हैं जिन्हें प्रदर्शन बढ़ाने के लिए अच्छा बताया जा रहा है। इन दवाओं को जनता को रोचक के रूप में भी दिखाया जाता है और सबसे कष्टप्रद बात यह है कि इन दवाओं को बड़ी मात्रा में कहाँ से खरीदा जा सकता है, इसकी घोषणा जनता के सामने की जाती है। युवाओं और समाज के लिए नशीली दवाओं की यह उपलब्धता समाज के लिए एक कारण और कैंसर साबित होती है।

आज के युवा बहुत जिज्ञासु हैं। वे जो कुछ भी देखते और सुनते हैं, उसकी प्रभावकारिता का परीक्षण करना चाहते हैं। यह जिज्ञासा कई बार मौत के बिंदु तक घातक हो जाती है। कुछ लोग अपनी जिज्ञासा के कारण नशीली दवाओं के संपर्क में आ जाते हैं और इसके आदती हो जाते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में नशे की खतरों के कारणों, प्रभावों और नियंत्रण का पता लगाना हैं तथा नशीली दवाओं के दुरुपयोग से सामाजिक और सांस्कृतिक पहलुओं को भी उजागर करना हैं।

मुख्य शब्द : नशीली दवाओं का दुरुपयोग, साथियों का दबाव, गलत संगत , नग्न विज्ञापन

प्रस्तावना :-

किसी भी राष्ट्र की सच्ची शक्ति वहाँ के युवाओ के कंधों पर होता हैं। युवाओं द्वारा ही बदलाव आता है, युवा वर्ग ही अपनी उत्साह ,उमंग,और ऊर्जा से देश के इतिहास की धारा को नया मोड़ देते हैं | *गांधी जी का मानना* है कि जिस प्रकार भोजन के पकने में नमक की भूमिका होती है, ठीक उसी प्रकार राष्ट्र निर्माण में युवाओं की अति महत्वपूर्ण भूमिका होती है | वर्तमान समय में नशाखोरी युवाओं के लिए फैशन सा बन चुका है, युवा वर्ग और नाशाखोरी का चोली दामन जैसा साथ हो गया है | कई बार युवा तनाव ,दबाव या जिज्ञासा के कारण नशे की तरफ़ आकर्षित होते हैं। इसके अलावा साथियों का दबाव और गलत संगति भी नशाखोरी को बढ़ावा देती है। नशे कि लत से यूआवाओं की पढ़ाई-लिखाई और पारिवारिक जीवन प्रभावित होता है। युवा आजकल बहुत जल्दी अपना सब्र खो देते हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि वे डिप्रेशन में चले जाते हैं , और फिर वे नशे की गिरफ्त में फंस जाते हैं। अपने जीवन में कई बार लोग लगातार मिल रही असफलताओं से घबरा जाते हैं, और इस कारण वे भविष्य में मिलने वाली सफलताओं की संभावना को भी खो देते हैं। फिर भाग्य और समय को दोष देते हैं। गलत संगत में पड़कर नशे को फैशन मान लेना युवा वर्ग की सबसे बड़ी दुर्बलता है। दूसरों की देखा-देखी में भी युवा नशा करने लग जाते हैं। अपने आपको आधुनिक बनाने के लिए नशे का सहारा लेने लगते हैं, जो कि गलत है। इसके लिए जरूरी है कि युवा अपने आपको मजबूत बनाएं और गलत संगति से बचें। कोई भी परेशानी अपने माता-पिता के साथ या अपने सखा साथियों या ऐसा कोई सम्बन्धी दिखे जो हमें समझ सके सही और गलत में फ़र्क बता सके उनसे साझा जरूर करें।

नशे की शुरुआत पहले मज़े और मित्रों के साथ जश्न से होती है। धीरे – धीरे युवा नशाखोरी की मकड़ जाल में फंसता चला जाता है ,और अंततः उससे कभी निकल नहीं पाता। जब पहली बार वह नशा करता है, तो उसे पता नहीं चलता है कि यह कब धीरे-धीरे आदत में बदल जाता है, वह अपने जीवन के सारे लक्ष्य को भूलकर एक नसेड़ी जीवन की तरफ अग्रसर हो जाता है। नशे के कारण इंसान सही और गलत का फर्क भूल जाता है, और अपने परिवार से मानसिक और जज़्बाती तौर पर कोसों दूर चला जाता है बहुत सारी बातें अपने परिवार से छुपाता हैं।

युवा पीढ़ी अपनी गम को भूलने के लिए नशे का सहारा लेते हैं सिगरेट, तम्बाकू, शराब अदि से वह दोस्ती करते हैं। अत्यधिक नशे से इंसान को गंभीर समस्याएं भी होती है। आज के समय में कई प्रकार के ड्रग्स इंसान को मानसिक, शारीरिक और आर्थिक रूप से जीर्ण – शीर्ण बना रहा है। देश की युवा पीढ़ी यदि गलत रास्ते पर चले तो इसमें नुकसान केवल उन युवा पीढ़ी का ही नहीं होता बल्कि इसमें देश का भी नुकसान होता है। युवा पीढ़ी के गलत राह पर चले जाने से देश की तरक्की रुक जाती है, क्योंकि इन्हीं से तो देश की तरक्की है। लेकिन आज की युवा पीढ़ी नशे के राह पर जा रही हैं। अगर एक व्यक्ति जब नशा करना शुरू कर देता है तो उसका घर परिवार सबके जीवन में अंधेरा छा जाता है। दुख तो इस बात का है कि यह सब जानने के बावजूद भी युवा पीढ़ी नशे का सेवन करना नहीं छोड़ रहे हैं।

उद्देश्य :-

1. युवाओ में नशाखोरी की प्रवृति के कारणों को पहचान करना |
2. नशाखोरी की प्रवृति की दुष्परिणामों का विश्लेसण करना |
3. नशाखोरी की समस्या का समाधान करने के लिए जागरूकता अभियान , परिवार और समाज की भूमिका , स्वस्थ गतिविधियों को बढ़ावा देने , सरकारी और गैर – सरकारी प्रयासों पर बल देना |

युवाओं में नशाखोरी के कारण :

नशे की लत एक जटिल समस्या है, जिसके कई कारण हैं। ये कारण सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक और पर्यावरणीय कारकों से जुड़े हैं। विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि युवा पीढ़ी इन कारकों से सबसे अधिक प्रभावित होती है।

सामाजिक और साथी दबाव (Peer Pressure):- साथियों का प्रभाव: युवा अक्सर दोस्तों के दबाव में नशा शुरू करते हैं। यदि कोई दोस्त नशा करता है, तो दूसरा भी उसे आजमाने की कोशिश करता है, ताकि वह ग्रुप में फिट हो सके। एक अध्ययन में पाया गया कि 67% युवा 19 वर्ष से कम आयु में नशा शुरू करते हैं, मुख्यतः साथियों के वजह से ।

सोशल मीडिया और सेलिब्रिटी प्रभाव: सोशल मीडिया पर नशे को ग्लैमराइज किया जाता है, जिससे युवा आकर्षित होते हैं। सेलिब्रिटी या भाई-बहन का नशा करना भी एक कारण बन जाता है।

परिवारिक वातावरण: यदि परिवार में कोई सदस्य नशा करता है, तो युवा उसे कॉपी कर सकते हैं। असामाजिक व्यवहार या अभिभावकों का नशा एक रोल मॉडल बन जाता है।

आर्थिक और सामाजिक-आर्थिक कारक:-

बेरोजगारी और गरीबी: भारत में युवा बेरोजगारी की दर ऊंची है, जो तनाव पैदा करती है। गरीब युवा नशे को अपनी कठिनाइयों से बचने का साधन मानते हैं। सामाजिक तनाव, आर्थिक गतिशीलता की कमी और गरीबी प्रमुख कारण हैं।

शहरीकरण और औद्योगीकरण: संयुक्त परिवारों का विघटन और शहरी जीवन की अकेलापन युवाओं को नशे की ओर धकेलता है। बदलती सामाजिक व्यवस्था और उच्च आकांक्षाएं भी योगदान देती हैं।

नशीले पदार्थों की आसान उपलब्धता: शैक्षणिक संस्थानों के पास ड्रग पेडलर्स (अवैध रूप से नशीली दवा बेचना), ऑनलाइन डार्कनेट और फार्मेसी से बिना प्रिस्क्रिप्शन दवाएं मिलना एक बड़ा कारण है।

मनोवैज्ञानिक और विकासात्मक कारक :-

तनाव और चिंता: आधुनिक जीवन की दबाव, पढ़ाई का बोझ और मानसिक स्वास्थ्य समस्याएं युवाओं को नशे की ओर ले जाती हैं। यह एक अस्थायी राहत प्रदान करता है लेकिन लत बन जाता है।

जिज्ञासा और प्रयोग: युवा नई चीजें आजमाने की उत्सुकता में नशा शुरू करते हैं। किशोरावस्था (12-17 वर्ष) में यह सबसे अधिक होता है।

जैविक कारक: कुछ युवाओं में आनुवंशिक प्रवृत्ति या मस्तिष्क की संरचना नशे के प्रति संवेदनशील बनाती है।

मानसिक स्वास्थ्य विकार: चिंता, अवसाद, ADHD, और आघात के बाद के तनाव विकार (PTSD) से जूझ रहे युवाओं में नशे का सेवन एक तरीका हो सकता है।

साथियों का दबाव: दोस्तों के बहकावे या उनके साथ फिट होने की कोशिश में युवा नशा शुरू कर सकते हैं।

परिवारिक और सामाजिक कारण: कठिन पारिवारिक परिस्थितियाँ, माता-पिता की देखरेख की कमी, या घर में तनाव नशे का एक कारण बन सकता है।

प्रारंभिक और नियमित उपयोग: कम उम्र में नशे की शुरुआत से मस्तिष्क के विकास पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जिससे नशे की लत लगने की संभावना बढ़ जाती है।

तनाव से मुक्ति का माध्यम: कुछ युवा तनाव, चिंता या भावनात्मक उथल-पुथल से निपटने के लिए नशीले पदार्थों का सहारा लेते हैं।

संयुक्त राष्ट्र रिपोर्ट (2020) भारत मे नशीले पदार्थों के दुरुपयोग और तस्करी संबंधी गंभीर चुनौती का सामना कर रहा है, जो लाखों लोगों विशेषकर युवाओं के स्वास्थ्य, कल्याण और सुरक्षा को प्रभावित करता है|

विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट ने अपनी रिपोर्ट मे यह पाया की भारतीय विश्वविद्यालयों मे 10%पूर्ण रूप से नशे के लत मे फँसे छात्र है| 50% छात्र कम से कम एक बार किसी न किसी नशीले पदार्थों का सेवन कर चुके है|

वर्ल्ड ड्रग रिपोर्ट (2022) भारत मे 2020 मे जब्त की गयी अफ़ीम की चौथी सबसे बड़ी मात्र 5.2 टन है, और उसी वर्ष जब्त की गई मार्फीन की तीसरी सबसे बड़ी मात्रा 0.7 टन थी |

युवाओं में बढ़ती नशाखोरी एक गंभीर समस्या है जिसके समाधान के लिए सरकार, समाज और परिवार को मिलकर काम करना होगा। समस्या के मूल कारणों को दूर करने, नशीले पदार्थों की आपूर्ति रोकने, जागरूकता बढ़ाने, पुनर्वास केंद्रों की संख्या बढ़ाने, परामर्श और शिक्षा के साथ रचनात्मक गतिविधियों को बढ़ावा देने की आवश्यकता है। विश्व के देशों में भारत सबसे अधिक युवा पीढ़ी वाला देश है। युवा पीढ़ी पर ही देश की तरक्की होती है। लेकिन जब युवा पीढ़ी गलत राह पर चली जाएं तो फिर देश की तरक्की कैसे हो सकती है। आज नशा इस कदर युवा पीढ़ी को बर्बाद कर रहा है, जैसे एक दीमक लकड़ी को बर्बाद कर देता है। नशा नाश के समान होता है और आज भारत की युवा पीढ़ी बहुत तेजी से नशाखोरी की प्रवृत्ति अपना रही है। आजकल लड़कियाँ भी नशा करने लगी है। आजकल के युवाओं को नशे करने की बहुत सारे कारण मौजूद है, जैसे कि नशे को फैशन समझना, तनाव को कम करने का माध्यम बनाना, गलत संगत में पड़ना, संस्कार की कमी, नशीली पदार्थों का अत्याधिक प्रचार और प्रसार। यदि आज के युवा वर्ग को नशीली पदार्थों के सेवन से बचाना है, उन्हें नशे की राह पर जाने से रोकना है, तो नशीली पदार्थों की बिक्री पर कठोरता से रोक लगानी पड़ेगी। जब नशीले पदार्थो का बिक्रय नहीं होगा तो युवा उसका सेवन ही नहीं करेंगे।

आज सरकारी और गैर-सरकारी संस्थाएं इतना अधिक हो गयी है, जो युवा पीढ़ियों को नशा से मुक्त कराने के लिए महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। इसके साथ-2 युवा पीढ़ी को भी समझने की जरूरत है कि वह पढ़े लिखे हैं, अच्छे बुरे की पहचान भली-भांति कर सकते हैं। इसीलिए नशे को अपना लत ना बनाएं।

सुझाव :-

- नशा मुक्त भारत अभियान: सरकार 'नशा मुक्त भारत अभियान' चला रही है, जिसके तहत लोगों को नशाखोरी के दुष्प्रभावों के बारे में जागरूक किया जा रहा है।
- जागरूकता और आउटरीच: नशा मुक्त भारत अभियान के तहत बड़ी संख्या में स्वयंसेवकों को प्रशिक्षित किया जा रहा है, जो समुदाय में जागरूकता फैलाते हैं।
- सरकारी सहायता केंद्र: सरकार देश भर में मुफ्त पुनर्वास और उपचार केंद्र चला रही है, जहाँ नशा प्रभावित लोगों को परामर्श और देखभाल मिलती है।
- सामुदायिक भागीदारी: समुदायों को नशा विरोधी गतिविधियों में शामिल किया जा रहा है, जैसे कि छात्रों और युवाओं को नशीली दवाओं के खिलाफ जागरूकता पैदा करने और जीवन कौशल सिखाने के लिए प्रशिक्षित करना।
- मानसिक स्वास्थ्य सहायता: युवाओं को मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं से निपटने में मदद करने के लिए शुरुआती और प्रभावी सहायता प्रदान करना महत्वपूर्ण है, जो नशे की लत को रोक सकता है।
- सशक्त कानूनी प्रावधान: भारत में नशीली दवाओं के गैर-चिकित्सीय उपयोग को रोकने और प्रभावित व्यक्तियों को इलाज के लिए छूट देने के लिए सख्त कानून (नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1985) है।
- शौक व मनोरंजन के लिए नशे का प्रयोग ना करें क्योंकि शौक व मनोरंजन कभी-कभी घातक हो जाता है।
- गलत संगत से बचें और जो बात गलत हो उसका विरोध करें निःसंकोच और नशे के लिए प्रेरित करने वाले को स्पष्ट शब्दों में मना करें।

नशे पर रोकथाम के लिए सरकार द्वारा चलाई जाने वाली योजनाएं :-

- संयुक्त राष्ट्र द्वारा मार्च 1961 में नशीले ड्रग्स पर एक संधि द्वारा नशीले ट्रक एवं तस्करी के खतरे के उन्मूलन का प्रयास आरंभ हुआ था, तत्पश्चात इस संधि के प्रस्ताव को संशोधित करने हेतु मार्च 1972 में एक विज्ञप्ति अपनाई गई थी, इस सभी संधियों का भारत हस्ताक्षरी है।
- भारत के संविधान का अनुच्छेद-47 यह आदेश देता है कि राज्य स्वास्थ्य को हानि पहुंचाने वाले नशीले पदार्थ एवं ड्रग्स के उपयोग को शिवाय उन ड्रग्स के जो दावों के औषधीय प्रयोजनों हेतु प्रयुक्त होते हैं। निषेध करने के बारे में प्रयास करेगा।
- विश्व तंबाकू निषेध दिवस 31 मई को विश्व भर में मनाया जाता है, विश्व स्वास्थ्य संगठन ने विश्व तंबाकू निषेध दिवस के अवसर पर सभी देशों में तंबाकू उत्पादों पर कर बढ़ाने की अपील की है, ताकि नए लोगों को तंबाकू सेवन का आदी होने से बचाया जा सके।
- सरकार ड्रग्स तस्कर, अफीम, गांजा, चरस आदि प्रमुख नशा के साथ पकड़े जाने पर सरकार द्वारा दंडात्मक कार्यवाही करने का विधान है।
- भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी जी ने नशा मुक्ति के खिलाफ मुहिम की शुरुआत की है मोदी जी ने अपने रेडियो संबोधन मन की बात में देश को नशा मुक्त बनाने के लिए भावनात्मक अपील की और सरकार नशा मुक्ति के लिए हेल्पलाइन स्थापित करने के प्रस्ताव पर हस्ताक्षर कर दिया है।
- सरकार द्वारा टीवी रेडियो जगह-जगह पोस्टर पंपलेट अखबारों में इश्तिहार के माध्यम से नशा कितना घातक है मानव जीवन के लिए समझने का प्रयास किया जाता है।

निष्कर्ष :

नशाखोरी एक गंभीर समस्या है जो युवाओं के भविष्य को प्रभावित करती है। इस अध्ययन के परिणामों से पता चलता है कि नशाखोरी के कारण युवाओं स्वास्थ्य ,शिक्षा और सामाजिक जीवन प्रभावित होता है। नशाखोरी के कारणों में सामाजिक दबाव ,आर्थिक दबाव और व्यक्तिगत समस्याएं शामिल हैं। नशीली दवाओं और पदार्थों का दुरुपयोग एक ऐसी घटना है जो पूरी दुनिया में होती है और युवाओं में आम है। नशीली दवाओं और पदार्थों का दुरुपयोग एक ऐसा लक्षण है जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि यह उस देश को नुकसान पहुँचाता है जो हमेशा प्रगति के लिए मानव संसाधनों की गुणवत्ता पर निर्भर करता है। नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग के कारकों में विशिष्ट विशेषताएं होती हैं जिन्हें कभी-कभी पहचानना आसान होता है । नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग का शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक पर नकारात्मक प्रभाव देखा गया है, चाहे वह अल्पकालिक हो या दीर्घकालिक । इसलिए, नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग और इसके प्रभावों में योगदान देने वाले कारकों को समझना और पहचानना नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग से निपटने और रोकने के लिए एक आवश्यकता है। नशाखोरी कि रोकथाम के लिए सामुदायिक प्रयास आवश्यक है। सरकार ,समाज और परिवार को मिलकर नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग की घटना को कम करना, युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य और जीवन और उनके भविष्य को सुनिश्चित करने का एक प्रयास भी है। नशीली दवाओं के दुरुपयोग के कारकों और प्रभावों को समझकर, परामर्शदाताओं के लिए आवश्यक है कि नशाखोरी संलिप्त युवाओं को उचित हस्तक्षेप और रोकथाम प्रदान करने में मदद करना अतिमहत्वपूर्ण है, ताकि नशीली दवाओं और पदार्थों के दुरुपयोग की दुनिया में शामिल होने या फिर से शामिल होने से उबरने की प्रक्रिया में मदद मिल सके। परामर्शदाताओं को इस घटना से निपटने में सबसे अच्छे और सबसे प्रभावी कारण खोजने की कोशिश करनी

चाहिए। इसके अलावा , युवाओं को वैकल्पिक गतिविधियों में शामिल करना भी आवश्यक है ,जैसे कि खेल,संगीत और अन्य शौक। इससे नशाखोरी से दूर रखने में मदद मिल सकती है।

REFERENCE :-

- https://www.patrika.com.
- DRUG from Wikipedia the free encyclopedia Jump to : navigation, search
- https:ijrar.com
- www.gisrrj.com vol-7 2024
- डॉ० सचदेवा, डी०आर०: "भारत में समाज कल्याण प्रशासन" किताब महल, 22 ए , सरोजनी नायडू मार्ग, इलाहाबाद
- Jayaswal, R. (1992), ``Modernization and Youth in India", Rawat Publications, Jaipur, P. 203.
- Chaubey, Madhuri (1995), Status of Deprived Tribal Youth, Shiva Publications, Udaipur
- http://www.eavedurgs.com/childhood-disorders.html
- www.grugabuse.gov
- http://www.ecoindia.com|viewsdrugs.html
- Nair, P.S. (1989), Indian Youth – A Profile, New Delhi, Mittal Publications.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

महात्मा गाँधी का सामाजिक समरसता में योगदान का समाजशास्त्रीय अध्ययन

प्रो0 डॉ सत्य प्रकाश गुप्त
का0 सु0 साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
अयोध्या, उत्तर प्रदेश।
विवेक शरण
शोधार्थी, का0 सु0 साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
अयोध्या, उत्तर प्रदेश।

अमूर्त -
यह शोध पत्र भारत में जातीय और धार्मिक समरसता पर गांधीजी के दृष्टिकोण को प्रस्तुत करता हैं। सामाजिक ताना-बाना जाति और धार्मिक आधारित असमानताओं, हिंसा और भेदभाव से ग्रसित है। गांधी ने इन मुद्दों पर भारत के लोंगों को सोचने के दृष्टिकोण को परिवर्तित करने का प्रयास किया, जो सहानुभूति, आपसी सामंजस्य और सामुदायिक जुड़ाव की आवश्यकता पर ज़ोर देता है। पूरे विश्व में सामाजिक न्याय से प्रेरित आधुनिक आंदोलनकर्ता अक्सर गांधी के सिद्धांतों से प्रेरणा लेते हैं, एक ऐसे समाज की वकालत करते हैं जहाँ विविधता में एकता का सम्मान किया जाता है, और हर व्यक्ति की स्वतंत्रता को महत्व दिया जाता है। महात्मा गाँधी अनुसूचित जातियों के उत्थान और हिंदू मुस्लिम शांतिपूर्ण सहअस्तित्व के लिए अपनी सीमाओं में रहकर गहन कार्य किया दलित अधिकारों, सामाजिक न्याय और हिंदू मुस्लिम एकता के पक्ष में गांधी सदा खड़े नज़र आये।2

मुख्य शब्द - सामाजिक समरसता,अनुसूचित जातियों के उत्थान, हिंदू मुस्लिम शांतिपूर्ण सहअस्तित्व

प्रस्तावना - दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गांधी द्वारा 11सितंबर,1906 को ट्रांसवाल एशियाई पंजीकरण अधिनियम के विरोध में 'सत्याग्रह' की शुरुआत की। यह अहिंसक और सत्य पर आधारित भेदभावपूर्ण नीतियों के खिलाफ आंदोलन था। इस आंदोलन ने दक्षिण अफ्रीका में रहने वालें भारतीयों को राहत दिलाई, साथ ही गाँधी को उनके अहिंसक प्रतिरोध के लिए विश्व भर प्रसिद्ध कर दिया। दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह कि सफलता बाद महात्मा गाँधी 1915 में भारत आये I भारत में अंग्रजों के शोषण को देख अपने देशवासियों को आज़ादी दिलाने के प्रयास शुरू किये लेकिन भारतीय समाज जातियों और धर्मों के अतिरिक्त भी कई मुद्दों पर विभाजित था स्वतंत्रता हासिल करने के लिए लोगों को एकजुट करना आवश्यक था I सामाजिक समरसता की कसौटी यही है कि हर व्यक्ति विशिष्ट है परंतु एक-दूसरे से जुड़ा हुआ है। समाज के विभिन्न वर्गों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध हो। यह सामाजिकता ही समसरता को मजबूत करने वाली नींव है।

गांधी के जाति पर विचार उनके जीवनकाल में कई बार बदले। लुई फिशर के अनुसार, गांधी की जाति की अवधारणा एक तर्कसंगत विकास से गुज़र रही थी, जो धीरे-धीरे 1920 में एक रूढ़िवादी रुख से 1930 के दशक में अधिक उदारवादी विचारों की ओर बढ़ रही थी, और उनके जीवन के अंत में एक कट्टरपंथी स्थिति में परिणत हुई।"1 शुरुआत में महात्मा गाँधी ने समकालीन भारतीय सामाजिक मापदंडों के अनुसार परंपराओं की व्याख्या करने की कोशिश की। वह व्यक्ति जों चार वेद, उपनिषद, पुराण और दो महान महाकाव्य (रामायण

और महाभारत) में विश्वास करता हैं। हिंदू धर्मशास्त्रों विशेष रूप से वेदों को ईश्वर का वचन मानता है, उन्हें सनातनी माना जाता है और गांधी ने खुद को एक सनातनी हिंदू घोषित किया था ।1 अधिकांश दलित चिंतको का तर्क है कि गांधी जाति व्यवस्था में विश्वास करने का कारण उनका ब्राह्मणवादी दृष्टिकोण में व्यक्तिगत विश्वास था, जो उन्हें एक उच्च जाति के हिंदू परिवार में जन्म लेने के कारण विरासत में मिला था। उनके अनुसार, उन्होंने हिंदू समाज की मूल सामाजिक संरचना में किसी भी बदलाव का प्रयास नहीं किया, और वह ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने जाति व्यवस्था का बचाव किया और उसे वैध ठहराया, जब उसकी वैधता को गंभीर चुनौती दी जा रही थी और उसका अस्तित्व अनिश्चित लग रहा था। कंचा इलाइया लिखते हैं, " गांधी का जन्म एक बनिया परिवार में हुआ था और वे उत्पीड़क और शोषण करने वाली उच्च जातियों के पक्ष में खड़े थे।"1उन्होंने ब्राह्मणवादी कट्टरपंथ में अपने मूल विश्वास को कभी नहीं छोड़ा, जो वर्णाश्रम, राम-राज्य और न्यासिता के उनके लगातार ज़िक्र से साफ़ ज़ाहिर होता है।1 हिंदू समाज में विवाह और भोजन के बारे में कई नियम थे। एक जाति के सदस्य दूसरी जाति के साथ खाना नहीं खा सकता, न ही उन्हें निम्न जाति के किसी व्यक्ति द्वारा बनाया गया खाना खाना चाहिए था। लेकिन जब गांधी ने वर्धा के पास से गांव में रहना शुरू किया, तो गोविंद, जो जाति से अछूत था, आमतौर पर उनके लिए खाना बनाता था।1

1933 में, उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा, "मैं मंदिरों में नहीं जाता। मुझे मंदिरों में जाने की कोई ज़रूरत महसूस नहीं होती; इसलिए मैं वहां नहीं जाता।"1 मूर्ति पूजा के प्रति उनका दृष्टिकोण भी ऐसा ही था। उन्होंने अपनी प्रार्थनाओं में कभी भी मूर्तियों या छवियों का उपयोग नहीं किया। उन्होंने एक बार कहा था, "एक मूर्ति मुझमें श्रद्धा की कोई भावना पैदा नहीं करती।"1 1935 में, गांधी ने लिखा, 'जाति को खत्म होना ही होगा।' उन्होंने यह भी कहा, 'वर्णाश्रम में अंतर-जातीय विवाह और साथ में खाना खाने पर कोई रोक नहीं थी और न ही होनी चाहिए।'1 1946 में, गांधी ने हरिजन में लिखा, 'अगर मेरा बस चलता, तो मैं अपने प्रभाव में आने वाली सभी सवर्ण हिंदू लड़कियों को हरिजन पति चुनने के लिए मनाता। यह बहुत मुश्किल है, यह मैं अनुभव से जानता हूँ।'1

उद्देश्य

इस अध्ययन का उद्देश्य महात्मा गाँधी के द्वारा सामाजिक समरसता को स्थापित करने के लिए किये गए प्रयासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन करना है।

पद्धति

वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति सहित मिश्रित विधि का उपयोग चयनित द्वितीयक स्त्रोतों में महात्मा गाँधी के दर्शन में सामाजिक समरसता के तत्वों की पहचान करने के लिए किया है।

विमर्श

गाँधी और अनुसूचित जातियों के उत्थान -

जाति और छुआछूत पर गाँधी जी के विचार सामाजिक न्याय और समानता पर आधारित है, आज भी प्रासंगिक हैं। जाति की जड़ें भारतीय समाज गहराई तक समायी हैं, जिसका आधार वर्ण व्यवस्था में हैं, जिसमे लोगों को चार वर्णों में विभाजित किया था: ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। समय के साथ, यह वर्गीकरण कठोर होता गया, जिससे कई उप-जातियों और एक जटिल पदानुक्रम का उदय हुआ। छुआछूत, एक सामाजिक कुरीति है, जो दलितों को "अशुद्ध" मानकर उनके साथ भेदभाव करती थी और उन्हें "अछूत" कहा जाता था। 1 कुल मिलाकर, यह प्रथा खुद को 'अशुद्ध' होने से बचाने के लिए कुछ खास समूहों के साथ शारीरिक संपर्क से बचने के इर्द-गिर्द घूमती थी। वंशानुगत पेशे जाति व्यवस्था की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता हैं। हर जाति को एक खास तरह का काम सौंपा जाता है, और हर हिंदू से उम्मीद की जाती है कि वह अपने वंशानुगत पेशे को अपनाए।1 इस प्रथा के कारण लाखों लोगों को गंभीर सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक अभाव और मनोवैज्ञानिक आघात झेलना पड़ा।

गांधी के समय में जाति-आधारित भेदभाव बहुत गहराई में समां चुका था। गांधी ने महसूस किया कि भारत को सच्ची स्वतंत्रता हासिल जिस एकजुटता की आवश्यकता है, उसे जाति और छुआछूत से पैदा होने वाले नैतिक और सामाजिक संकटों को दूर करके ही संभव बनाया जा सकता है।2 1931 में महात्मा गांधी ने 'अछूत', 'अस्पृश्य', या 'अंत्यज' के स्थान पर हरिजन शब्द का इस्तेमाल किया। 2 उनका मानना था कि यह शब्दावली समाज द्वारा हाशिए पर धकेले गए लोगों को ऊपर उठाने और उन्हें सशक्त बनाने में मदद करेगी। गांधी ने ऐतिहासिक रूप से सताए गए लोगों में गरिमा की भावना पैदा करने की कोशिश की। गांधी ने हरिजनों को मुख्यधारा के समाज में शामिल करने की वकालत की। 2

जाति और छुआछूत को खत्म करने के लिए गांधी के दृष्टिकोण में आध्यात्मिक और व्यावहारिक दोनों पहलू शामिल थे। उन्होंने सामाजिक सद्भाव को बढ़ावा देने के लिए जो रणनीतियाँ अपनाईं उनमें गांधी का सत्याग्रह और अहिंसक प्रतिरोध का दर्शन, जातिगत भेदभाव के खिलाफ उनके अभियान सम्मिलित थे। उन्होंने दमनकारी प्रथाओं को चुनौती देने के लिए विरोध प्रदर्शन और आंदोलन आयोजित किए, और लोगों से हिंसा का सहारा लिए बिना अन्याय का विरोध करने का आग्रह किया। गांधी संवाद और सामुदायिक मेलजोल की शक्ति में विश्वास करते थे। उन्होंने अक्सर उच्च जाति के लोगों को हरिजनों के साथ जुड़ने के लिए प्रोत्साहित किया, जिससे समझ और सहानुभूति बढ़ी। उनका लक्ष्य व्यक्तिगत बातचीत के माध्यम से बाधाओं को तोड़ना, पूर्वाग्रहों को खत्म करना और आपसी सम्मान को बढ़ावा देना था।

गांधी ने अक्सर छुआछूत के खिलाफ अपने तर्कों को नैतिक और धार्मिक शब्दों में प्रस्तुत किया। उन्होंने व्यक्तियों की नैतिक चेतना से अपील की, और उनसे अपने कार्यों और विश्वासों पर विचार करने का आग्रह किया। साझा धार्मिक मूल्यों का आह्वान करके, उन्होंने विविध समुदायों के बीच एकता की भावना पैदा करने की कोशिश की। जातिविहीन समाज के लिए गांधी के दृष्टिकोण का भारतीय समाज पर गहरा और स्थायी प्रभाव पड़ा है। अहिंसा और सामाजिक समानता के उनके सिद्धांत विश्व स्तर पर न्याय और मानवाधिकारों के आंदोलनों को प्रेरित करते रहते हैं। भारत में, जाति-आधारित भेदभाव के खिलाफ संघर्ष विकसित हुआ है, जिसमें कई सामाजिक आंदोलन और राजनीतिक पहलें इन मुद्दों को सुलझाने की कोशिश कर रही हैं। 1950 में बना भारतीय संविधान, गांधी के कुछ आदर्शों को दिखाता है, खासकर छुआछूत को खत्म करने और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के प्रावधानों में। 2

गाँधी और हिन्दू मुस्लिम शांतिपूर्ण सहअस्तित्व -

सांप्रदायिक सद्भाव के प्रति गांधी जी की असीम प्रतिबद्धता थी। वे जाति, पंथ और धर्म की परवाह किए बिना सभी मनुष्यों के प्रति सम्मान के पक्षधर थे। आपसी संदेह और घृणा को दूर करने के लिए वे सभी स्तरों पर समुदायों के बीच मेलजोल के समर्थक थे। 5 महात्मा गांधी सभी धर्मो का सम्मान करते थे। वे हिन्दू धर्म के अतिरिक्त अन्य धर्मो की अच्छे विचारों का चयन कर उन्हें अपने दैनिक जीवन में उनका प्रयोग करते थे। सामाजिक समरसता स्थापित करने के लिए उन्होंने विभिन्न धर्मो के नियमों को अपने जीवन में अपनाया। महात्मा गांधी अपनी सभाओं की शुरुआत विभिन्न धार्मिक ग्रंथों के अंशों का पाठ करते हुए सर्वधर्म प्रार्थना से करते थे। वे बाइबल के नए नियम को पढ़ कर प्रभावित हुए और उन्हें विशेष रूप से यह विचार पसंद आया कि 'यदि कोई आपको दाहिने गाल पर थप्पड़ मारे, तो अपना बायां गाल आगे कर दें।'3 विभिन्न धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन से ही उन्हें यह विचार प्राप्त हुआ था कि बुराई का मुकाबला बुराई से नहीं, बल्कि अच्छाई से करना चाहिए। 3

धार्मिक अल्पसंख्यकों के प्रति नफरत की शुरुआत इतिहास के सांप्रदायिक स्वरूप को पेश करके पैदा की गई है, जो मध्ययुगीन सुल्तानों और बादशाओ के धर्म के इर्द-गिर्द रचा गया है। सांप्रदायिक ताकतों द्वारा प्रचारित इतिहास के सांप्रदायिक संस्करण के विपरीत, गांधी जी को भारतीय इतिहास की तर्कसंगत समझ थी, और इसी समझ के कारण वे शांति और एकता की बात कर सके।5 मुस्लिम सांप्रदायिक विचारकों का दावा हैं कि भारत में मुस्लिम राष्ट्र मोहम्मद बिन कासिम के समय से अस्तित्व में है, जिन्होंने 8वीं शताब्दी में सबसे पहले

सिंध पर विजय प्राप्त की थी। हिंदू सांप्रदायिक विचारक दावा करते हैं कि यह अनादि काल से एक हिंदू राष्ट्र रहा है और मुसलमान विदेशी हैं। वे मुस्लिम सुल्तानों और बादशाओ के अत्याचारों की बात करते हैं और हिंदू-मुस्लिम राजाओं के बीच के सत्ता संघर्ष को हिंदू-मुस्लिम धर्म युद्ध के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इसके विपरीत, गांधी तर्कसंगत, गैर-सांप्रदायिक और समावेशी विचारों का प्रसार करते हैं। हिंद स्वराज में वे लिखते हैं,मुस्लिम शासकों के अधीन हिंदू और हिंदू शासकों के अधीन मुसलमान फले-फूले। अंग्रेजों के फूट डालों राज करों की नीतियों के फलस्वरूप झगड़े फिर से शुरू हो गए।5

ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन काल में राजनीतिक लाभ के लिए धार्मिक मतभेदों को जानबूझकर के उभारा गया। ब्रिटिश सरकार की 'फूट डालो और राज करो' की नीति ने सामुदायिक संघर्षों को न केवल बढ़ाया बल्कि परिस्थितियों को और भी बदतर बना दिया। 4 गांधी जी इस छल से भलीभांति परिचित थे और उन्होंने सांप्रदायिक सद्भाव को बढ़ावा देकर तथा औपनिवेशिक शासन के विरोध में भारतीयों की एकजुटता की आवश्यकता पर बल देकर इसे विफल करने का प्रयास किया। 4 साम्प्रदायिक हिंसा की धार्मिक व्याख्या की महात्मा गांधी ने आलोचना की थी। उनका स्पष्ट मत था कि धर्म का इस्तेमाल राजनीतिक उद्देश्यों या हिंसा के लिए नहीं किया जाना चाहिए। उन्होंने लिखा, "हिंदू सोचता है कि मुसलमान से झगड़ा करके वह हिंदू धर्म को लाभ पहुंचा रहा है, और मुसलमान सोचता है कि हिंदू से लड़कर वह इस्लाम को लाभ पहुंचा रहा है। लेकिन दोनों ही अपने-अपने धर्म को नुकसान पहुंचा रहे हैं।" (यंग इंडिया, 27 जनवरी 1927, पृष्ठ 31)5

साम्प्रदायिक सद्भाव प्राप्त करने के गांधी जी ने खिलाफत आंदोलन (1919-1924) को समर्थन दिया, जिसने ब्रिटिश औपनिवेशिक नियंत्रण के विरोध में हिंदू-मुस्लिम एकजुटता की आवश्यकता पर ध्यान आकर्षित किया। 4 उन्होंने धार्मिक आस्था और भारतीय राष्ट्रवाद में सामंजस्य स्थापित किया। उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति के धर्म का सम्मान करते हुए यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया कि भारतीय राष्ट्रवाद ही उस व्यक्ति की सर्वोपरि पहचान बने। "राष्ट्रवाद सांप्रदायिकता से श्रेष्ठ है। और इस अर्थ में, हम सबसे पहले भारतीय हैं, और इसके बाद हिंदू, मुसलमान, पारसी, ईसाई हैं।" (यंग इंडिया, 26 जनवरी, 1922) 5

1940 के दशक के सांप्रदायिक दंगों पर गांधी जी की प्रतिक्रिया विभिन्न समुदायों के बीच सद्भाव को बढ़ावा देने के प्रति उनके समर्पण को दर्शाने वाली थी। 4 गांधी जी का सांप्रदायिक सद्भाव का दृष्टिकोण मात्र एक राजनीतिक रणनीति नहीं, बल्कि मानवीय गरिमा, सम्मान और सार्वभौमिक बंधुत्व की भावना पर आधारित एक गहन दार्शनिक दृष्टिकोण था। 4 गांधी ने देखा कि हिन्दू मुस्लिम झगड़े के दो प्रमुख कारण थे, मुसलमानों द्वारा गायों को मारना और हिन्दुओं के द्वारा मस्जिदों के आसपास संगीत बजाना (जिसे मुस्लिम समुदाय द्वारा ईशनिंदा माना जाता था)।7 उन्होंने कहा कि गाय के नाम पर हुए दंगों ने एक भी गाय को नहीं बचाया, बल्कि मुसलमानों को और ज़्यादा कट्टर बना दिया। दूसरी विडंबना यह थी कि जिन हिंदुओं के पास गायें थीं, वे स्वयं ही उनके साथ सबसे क्रूर व्यवहार करते थे। उन्होंने देखा कि एकमात्र समय जब कई गायों को मारे जाने से बचाया गया था, वह असहयोग आंदोलन के दौरान था, जो स्वयं मुसलमानों के स्वैच्छिक और उदार प्रयासों का नतीजा था। उन्होंने लिखा कि गौ-रक्षा समितियों को सांप्रदायिक कलह भड़काने के स्थान पर अपने-अपने क्षेत्रों में गायों की उचित देखभाल पर ध्यान देना चाहिए।7

गांधी ने मस्जिदों के पास संगीत बजाने या आरती करने के मुद्दे पर भी ऐसी ही प्रतिक्रिया थी। जैसे हिंदू मुसलमानों को गाय मारने से रोकने के लिए जबरदस्ती नहीं कर सकते थे, वैसे ही मुसलमान भी हिंदुओं को तलवार की धार पर संगीत या आरती रोकने के लिए मजबूर नहीं कर सकते थे। वे सिर्फ हिंदुओं की समझदारी से ही संभव था। इसके लिए समुदायों के बीच संवाद और आपसी समझ का होना बहुत ज़रूरी है। उन्होंने कहा, "धमकी या हिंसा के इस्तेमाल के आगे झुकना अपने आत्म-सम्मान और धार्मिक विश्वास का समर्पण है," लेकिन जो व्यक्ति कभी धमकी के आगे नहीं झुकेगा, वह हमेशा नाराज़गी पैदा करने वाले अवसरों को कम करेगा, और अगर हो सके तो उनसे दूर रहेगा।7

गांधी और उनके साथियों के सांप्रदायिक संघर्ष का सामाजिक और राजनीतिक समाधान निकालने के प्रयासों के बावजूद, अगले कुछ सालों में भारत के अलग-अलग हिस्सों में हिंदू-मुस्लिम दंगों का सिलसिला जारी रहा। गांधी आम नागरिकों से अपील करके और दोषी समूहों को कड़ी फटकार लगाकर, कभी-कभी उपवास रखकर, प्रभावित इलाकों में (जहाँ भी संभव हो) जाकर और वहाँ के निवासियों से मिलकर सांत्वना देने और आत्मविश्वास बढ़ाने, स्थानीय समुदाय के नेताओं के साथ व्यक्तिगत बातचीत करके और दुश्मनी को खत्म करने और सामाजिक सद्भाव के टूटे हुए ताने-बाने को बहाल करने के बड़े उद्देश्य के लिए जाने-माने व्यक्तियों और सार्वजनिक हस्तियों को एकजुट करके सांप्रदायिक शांति के लिए एक दृढ़ अभियान चला रहे थे।7

16 अगस्त, 1946 को, मोहम्मद अली जिन्ना के नेतृत्व में मुस्लिम लीग द्वारा "पाकिस्तान की प्राप्ति के लिए सीधी कार्यवाही" करने के लिए बुलाए गए 'डायरेक्ट एक्शन डे' के दिन, कलकत्ता में बड़े पैमाने पर दंगे और नरसंहार हुए, जिसने भारत में अभूतपूर्व पैमाने पर सांप्रदायिक हिंसा के दौर की शुरुआत कर दी। हिंसा का विस्तार बंगाल के दो पूर्वी जिलों - नोआखली (अब बांग्लादेश में) और टिप्पेरा (अब त्रिपुरा, भारत)। 25 अक्टूबर,1946 में बिहार तक हो गया। गाँधी और उनके साथियों के अतिरिक्त खान अब्दुल गफ्फार खान (फ्रंटियर गाँधी), इंडियन नेशनल आर्मी के शाह नवाज खान और गुजरात की समाज सेविका मृदुला साराभाई ने मिलकर दंगो को रोकने के प्रयास किये।

अगस्त 1947 में पंजाब साम्प्रदायिक हिंसा की चपेट में आ गया, तो कोलकाता में साम्प्रदायिक हिंसा भड़क उठी तो गाँधी कोलकाता में ही रुक गए। 31अगस्त 1947 आक्रामक हिन्दुओं की भीड़ ने उस घर पर ही हमला कर दिया जंहा गांधीजी रह रहे थे, और उस दिन गाँधी जी बाल बाल बचे। साम्प्रदायिक हिंसा रोकने के लिए गांधीजी 2 सितम्बर को उपवास पर बैठ गए। 4 सितंबर की शाम को मुस्लिम लीग, हिंदू महासभा, सिख समुदाय और अन्य संगठनों के नेताओं का एक प्रतिनिधिमंडल उनसे अनशन खत्म करने की विनती करने आया। जब उन्होंने आगे सांप्रदायिक हिंसा को रोकने के लिए अपनी जान देने का वादा किया, तभी गांधी ने अनशन खत्म किया। उस दौरान कलकत्ता में और कोई सांप्रदायिक हिंसा नहीं हुई,7 यह देख कर वायसराय लॉर्ड माउंटबेटन ने बंगाल में दंगे रोकने के लिए गांधी को 'वन मैन बाउंड्री फोर्स' कहकर उनकी तारीफ़ की, जबकि पंजाब में कई रेजिमेंट ऐसा करने में नाकाम रही थीं।7

अपने जीवन के अंतिम तीन दिनों के दौरान गांधी ने अपनी दैनिक प्रार्थना सभाएं आयोजित कीं, भाईचारे और अहिंसा की वकालत करते रहे, 30 जनवरी को, अपनी रोज़ाना की प्रार्थना सभा में जाते समय, गांधी को एक हिंदू कट्टरपंथी (उनकी अपनी भविष्यवाणी) नाथूराम गोडसे ने बहुत करीब से गोली मार दी।7 गांधी की हत्या देश की संघर्षरत लोगों के लिए एक मानसिक आघात की तरह थी, हुमायूं कबीर ने कहा, इसका "एक शुद्ध करने वाला प्रभाव पड़ा और पूरे भारत में लोगों ने सदमे के साथ महसूस किया 7 डेविड हार्डिमन लिखते हैं, "गांधी की मृत्यु ने खुद ही वह हासिल कर लिया जिसके लिए वह अपने जीवन के उन अंतिम महीनों में प्रयास कर रहे थे।"7 उनकी मृत्यु का तात्कालिक प्रभाव यह हुआ कि, दिल्ली के मुसलमानों ने खुद को सुरक्षित महसूस किया और अपने पहले के जीवन जीने के तरीके पर लौटने में सक्षम हुए। दिल्ली के काज़ी जलील अब्बासी ने बाद में आँखों में आँसू लिए कहा, "गांधीजी ने मुसलमानों के लिए भारत में रहना संभव बनाया।"7

निष्कर्ष -

सांप्रदायिक सद्भाव के प्रति गांधी जी की असीम प्रतिबद्धता थी। वे जाति और धर्म की परवाह किए बिना सभी मनुष्यों के प्रति सम्मान के पक्षधर थे। आपसी संदेह और घृणा को दूर करने के लिए वे सभी स्तरों पर सभी समुदायों के बीच मेलजोल के समर्थक थे, महात्मा गांधी सभी धर्मो का सम्मान करते थे गांधी की तर्कसंगत, गैर-सांप्रदायिक और समावेशी समझ के कारण गांधी जी अपनी सीमाओं को भलीभांति जानते थे 1924 वायकोम के मंदिरों में दलितों के प्रवेश पर वहां के पुजारियों से टकराव, कोलकाता में साम्प्रदायिक हिन्दुओं द्वारा उस घर पर हमला जहां वे रह रहे थे और दलितों के हितों में चलाये जा रहे अभियान के दोरान उन्हें सनातनी हिन्दुओ द्वारा दिल्ली,

दक्षिण कनारा और बेलारी में कई स्थानों पर काले झंडे दिखाए गए और गाँधी 'गो बेक' के नारे लगाये गए के कारण, गाँधी अपनी सीमाओं में रहते हुए भारतीयों की एकजुटता का प्रयास किया और भारत में सामाजिक समरसता स्थापितं करने में सफल हुए। इन घटनाओं के बाद डॉ भीमराव अम्बेडकर के मन में महात्मा गांधीजी के प्रति कड़वाहट कम हो गयी क्योंकि वे भी गांधीजी की सामाजिक सीमाओं कों समझ गए थे I

संदर्भ सूची -

1. Sarkar,Anil Kumar Gandhi and Caste System: The Vision of Social Harmony

2.Kusum Solanky, Gandhi's Vision of Social Harmony : Rethinking Caste and Untouchability www.oiirj.org ISSN 2249- 9598

3.Pandey Sandeep, Gandhi's contribution to Communal Harmony - OCTOBER 2, 2021 https://sabrangindia.in/content-author/sandeep-pandey-3934/

4. Dr Alam Mosharraf, Mahatma Gandhi's Vision of Communal Harmony and Peaceful Coexistence in Communal Harmony 28.10.2024

5.Gandhi and Communal Harmony,https://janataweekly.org/gandhi-and-communal-harmony/

6. M K Gandhi on Religion and Caste: Economic and Political Weekly (Engage).

7. Pandey Malabika, Gandhi on Religion and Social Harmony Gandhi Marg, Vol. 34, No. 2 & 3, July-December 2012 https://www.mkgandhi.org/articles/religion-and-social-harmony.html

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

ग्रामीण विकास में महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005 की प्रासंगिकता : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. सुधा कुमारी ,
पोस्ट डॉक्टरोल फेलो ,(आई.सी एस.एस आर.)
समाजशास्त्र विभाग,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,वाराणसी

सारांश –
ग्रामीण विकास से तात्पर्य गाँवों के विकास साथ ही लोगों का सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं शैक्षिणक रूप से सशक्त होना है। ग्रामीण विकास एक बहुआयामी प्रक्रिया है, गाँवों का विकास विभिन तरीके से प्राचीन समय से ही होता रहा है, तपश्च्यात स्वतंत्रता के बाद से विभिन ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के माध्यम से विकास को गति प्रदान होता रहा। जिसमे मुख्यतः प्रारंभिक स्तर पर सामुदायिक विकास कार्यक्रम से विकास की शुरुआत हुई इसी क्रम में कार्यक्रमों की लम्बी क्रमबधता रही जिसमे से रोजगार एवं गरीबी को ध्यान मे रखते हुए भारत सरकार ने गरीबी उन्मूलन एवं रोजगार मुहया करने के लिए ग्रामीण स्तर पर रोजगार के तौर पर राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम (नरेगा) को सितम्बर 2005 को अधिसूचित किया गया था। बाद में इसके नाम में परिवर्तन करके महात्मा गाँधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) कर दिया गया प्रारंभ के पहले चरण में मनरेगा 2 फरवरी 2006 को देश के 200 पिछड़े जिलों में क्रियान्वित किया गया और बाद में 1 अप्रैल 2007 में अन्य 113 एवं 15 मई 2007 से 17 जिलों में इसका विस्तार किया गया। तत्पश्चात् 7 अप्रैल 2008 से देश के शेष जिलों को भी सम्मिलित किया गया। वर्तमान में मनरेगा 644 जनपदों में लागू किया गया है। मुख्यतः मनरेगा का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार प्रदान करना तथा ऐसे प्रत्येक परिवार जिनके घर का वयस्क सदस्य शारीरिक श्रम करना चाहते हैं उन्हें वर्ष में कम से कम 100 दिनों का गारंटी, रोजगार उपलब्ध कराते हुए आजीविका को सुरक्षा प्रदान कराता है। मनरेगा द्वारा ग्रामीण विकास से जुड़े वे सभी कार्य संपन करवाया जाता है, जिससे गाँवों की मूलभूत संरचनाओं में परिवर्तन हो सके साथ ही गाँवों में सुविधाए सभी लोगो को प्राप्त होती रहे। इस योजना में मुख्य रूप से सडक निर्माण, भूमि सुधार, तालाबो का निर्माण एवं देख रेख, वृक्षारोपण, चक रोड का निर्माण, नहरों की सफाई, जल संचय इत्यादि कार्य सम्पन करए जाते है जिसके परिणाम स्वरुप मनरेगा से ग्रामीण क्षेत्रों के समस्त लोगों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। ग्रामीण विकास में मनरेगा की भूमिका कैसी है और किस स्तर तक ग्रामीण विकास का स्वरुप मनरेगा द्वारा बदलता नजर आ रहा है साथ ही मनरेगा द्वारा ग्रामीण विकास में किस स्तर तक महत्त्व प्रदान किया है।

प्रस्तावना– ग्रामीण विकास एक व्यक्तिपरक एवं मूल्य आधारित संकल्पना है अर्थात ग्रामीण विकास के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले एवं बाद में अनेक प्रयास किए जा रहें है, सन 1950 में क्रम्बंधित विकास प्रारंभ होने से ही प्रत्येक क्षेत्र में विशिष्ट स्थाई निधि पर आधारित एकीकृत स्थानीय क्षेत्र योजनाओं के माध्यम से विकास करने का आवश्यकता महसूस की गई थी। स्वतंत्रता के पूर्व रविन्द्रनाथ टैगोर योजना, गुडगाव योजना, गांधीवादी योजना, भारतीय ग्राम सेवा योजना, नीलो खेडी योजना, इटावा प्रायोगिक योजना इत्यादि तथा पश्चात् सामुदायिक विकास कार्यक्रम के विकास को गति मिली साथं ही पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण विकास को समय–समय पर गति प्रदान होती रही है। 73 वें और 74 संविधान संसोधन के माध्यम पंचायती राज संस्था के द्वारा राष्ट्रीय, राज्य एवं स्थानीय स्तरों पर विकास कार्य किए जा रहें जिसकी रिपोर्ट अशोक मेहता समिति एवं जी. के. वी. राव समिति के माध्यम से प्रस्तुत की गई। ग्रामीण विकास एवं संरक्षण के सरकार द्वारा समय समय पर योजनाओ की एक लम्बी श्रृंखला रही है, यदि वर्तमान संदर्भ में मनरेगा, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, राष्टीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, प्रधानमंत्री आवास योजना एवं प्रधानमंत्री उज्वला योजना इत्यादि योजनाओं के माध्यम से विकास का क्रम निरन्तर है।

महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005 योजना ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार के तौर पर प्रारंभ की गई। ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा संचालित मनरेगा गरीबो के रोजगार से सीधा जुड़ा है जिसके माध्यम से ग्रामीण विकास को प्रोत्साहन देता है। यह अधिनियम विश्व का ऐसा पहला अधिनियम है, जिसके तहत अभूतपूर्व के तौर पर रोजगार की गारंटी दी जाती है इसका मुख्य उदेश्य ग्रामीण क्षेत्र के परिवारों की आजीविका के सुरक्षा को बढ़ावा देना है। इसके तहत प्रत्येक घर के एक वयस्क सदस्य को एक को एक वित वर्ष में कम से कम 100 दिनों का रोजगार का गारंटी प्रदान करता है। इसके तहत टिकाऊ परिसम्पतियो का सर्जन किया जाता है तथा इस अधिनियम के माध्यम से सूखे जंगलो के काटन, मृदा क्षरण जैसे कारणों से उत्पन निर्धनता की समस्या से सामना करना है क्योकि रोजगार में लगातार वृद्धि होती रहें, इस अधिनियम के तहत समयबद्ध तरीके से रोजगार की गारंटी और 15 दिन के अन्दर मजदूरी का भुगतान किया जाता है तथा इसके इस योजना में किया जाने वाला खर्च 90 प्रतिशत केंद्र तथा 10 प्रतिशत राज्य द्वारा किया जाता है। यह अधिनियम के तहत रोजगार शारीरिक श्रम आधारित होता है, जिसमें ठेकेदारी और मशीनों का प्रयोग मना है और इसमे महिला सशक्तिकरण को ध्यान रखते हुए महिलाओ के लिए 33 प्रतिशत श्रम भागीदारी सुनिश्चित किया गया है।

अध्ययन की समस्या– मनरेगा अर्थात महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के प्रारंभ से ही ग्रामीण विकास के आधार के रूप में यह योजना प्रस्तुत है। मनरेगा द्वारा ग्रामीण विकास से जुड़े वे सभी कार्य संपन करवाये जाते हैं, जिससे गाँवों की मूलभूत संरचनाओं में परिवर्तन हो सके साथ ही गाँवों में सुविधाए सभी लोगो को प्राप्त होती रहे । जिसमे मुख्य रूप से सडक निर्माण भूमि सुधार, तालाबो का निर्माण एवं देख रेख वृक्षारोपण, चक रोड का निर्माण, नहरों की सफाई, जल संचय इत्यादि कार्य सम्पन करए जाते है जिसके परिणाम स्वरुप मनरेगा से ग्रामीण क्षेत्रों के समस्त लोगों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। ग्रामीण विकास में मनरेगा की भूमिका कैसी है और किस स्तर तक ग्रामीण विकास का स्वरुप मनरेगा द्वारा बदलता नजर आ रहा है साथ ही मनरेगा का ग्रामीण विकास में किस स्तर तक महत्त्व प्रदान किया है।

भारत सरकार द्वारा संचालित ग्रामीण विकास के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार, आवास एवं स्वास्थ्य के साथ ही पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान, कृषि के विकास कार्य में आने वाली समस्याओं के समाधान के लिए नियोजित कार्यक्रम बनाया गया। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा)

उपर्युक्त समस्याओं के समाधान के लिए पारित किया गया जिससे ग्रामीण विकास के साथ ही ग्रामीण लोगों को एवं महिलाओ को ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार का अवसर मिल सके, विशेषकर महिलाओं के विकास के अवसर के रूप में 33 प्रतिशत आरक्षण उपलब्ध है, मनरेगा के तहत निम्न कार्य संपन्न कराए जाते हैं।

मनरेगा से ग्रामीण सर्वांगिण विकास में सम्मिलित भूमि विकास, बाढ़ नियंत्रण एवं सुरक्षा कार्य, जलभराव वाले इलाके में जल निकासी का कार्य, प्रत्येक मौसम में ग्रामीण संपर्क बनाए रखने वाले कार्य, जलसंरक्षण, नवीकरण की तालाबों की खुदाई एवं सफाई का कार्य, सिंचाई सुविधा, बागवानी अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति के परिवारों को स्वामित्व वाली भूमि पर, इंदिरा आवास योजना के तहत लाभार्थी को लाभ, गरीबी रेखा नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों का भूमि विकास, सिंचाई नहरें सूक्ष्म एवं लघु उद्यम कार्य, जल संरक्षण एवं जल संग्रहण, वनीकरण, वृक्षारोपण और सूखे की रोकथाम के संबंध कार्य सड़क निर्माण, पुलिया का निर्माण इत्यादि कार्य संपन्न कराए जाते है। मनरेगा के अंतर्गत सीमेंट एवं कंक्रीट की सड़क का निर्माण का नहीं किया जा सकता है, इसके अंतर्गत प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना वाली सड़क का निर्माण कार्य भी नहीं हो सकता है। अनुसूचित जातियों या जनजातियो एवं महिलाओ को वरीयता प्रदान की जाती है, श्रमिकों में इसी वर्ग की संख्या सर्वाधिक है। ग्रामीण क्षेत्रों में मांग के आधार पर प्रत्येक परिवार को एक वित्तीय वर्ष में गारंटी युक्त रोजगार के रूप में कम से कम 100 दिनों का अकुशल शारीरिक श्रम कार्य उपलब्ध कराना, जिसके फलस्वरूप निर्धारित गुणवत्ता और स्थाई स्वरूप की उत्पादनकारी परिसंपत्तियों का सृजन करता है–

1. निर्धन परिवारों एवं महिलाओं को अजीविका या संसाधन आधार के रूप से सुदृढ बनाना है।
2. सरकारी रूप से ग्रामीण सामाजिक समावेश सुनिश्चित करना ।
3. पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़ बनाना ।

अध्ययन की प्रासंगिकता –

- ग्रामीण क्षेत्र के लोगों एवं महिलाओं में अवसंरचना सुविधाओं का विकास करने वाले कार्यों में मजदूरी रोजगार के अवसर उपलब्ध कराकर ग्रामीण गरीबों की आजीविका को सुरक्षा प्रदान करना है।
- ग्रामीण क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों को पुनः बढ़ावा देना तथा पर्यावरण संरक्षण प्रदान करना है।
- ग्रामीण क्षेत्र के गरीब लोगों एवं महिलाओं को सुरक्षा तंत्र उपलब्ध कराकर स्थानीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देना ।
- महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित करना, जिससे महिलाओं के विकास को एक अवसर प्रदान हो सके, जिससे परिवारिक आर्थिक सहयोग एवं बच्चों का पालन पोषण आसानी से कर सकें।
- ग्रामीण क्षेत्र के अन्तर्गत जमीनी स्तर पर लोकतांत्रिक संस्थाओं का सुदृढीकरण करना।

उदेदश्य

1. ग्रामीण विकास एवं संरक्षण में मनरेगा के योगदान से हुए परिवर्तन का अध्ययन करना।
2. मनरेगा के तहत ग्रामीण लोगो में रोजगार के अवसरों में वृद्धि एवं महिला सशक्तिकरण का अध्ययन करना।

शोध प्रश्न–

1. क्या ग्रामीण विकास एवं संरक्षण के लिए मनरेगा के माध्यम से हुए हुआ है?
2. क्या मनरेगा में तहत ग्रामीण लोगो में रोजगार के अवसरों एवं महिला सशक्तिकरण हुई है?

अवधारणात्मक व्याख्या–

ग्रामीण विकास– ग्रामीण विकास से तात्पर्य सर्वंगीण विकास करना है तथा ग्रामीण क्षेत्र के अंतर्गत संसाधनों की उचित व्यवस्था का प्रबंध उपलब्ध हो। ग्रामीण लोगो का सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिणिक एवं राजनैतिक विकास निश्चित दिशा में होता रहें और संसाधनो, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार के अवसर एवं न्याय तक पहुच सुनिश्चित हो ।

ग्रामीण संरक्षण– ग्रामीण संरक्षण से तात्पर्य विकास से सम्बंधित संसाधनों की सुरक्षा करना है और ग्रामीण लोगों के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिणिक एवं राजनैतिक विकास की दिशा प्रदान करना है। ग्रामीण विकास योजनाओ के माध्यम से संपन कराए जाने वाले कार्यो का रक्षा करना है साथ ही मनरेगा में द्वारा मुख्य रूप से सडक निर्माण भूमि, सुधार या सम्थालीकरण तालाबो का, निर्माण एवं देख रेख, वृक्षारोपणचक, रोड का निर्माण नहरों, की सफाई जल, संरक्षण इत्यादि कार्य सम्पन करवाए जाते है। जिसके माध्यम से ग्रामीण विकास के साथ ही ग्रामीण संरक्षण सम्बंधित कार्य संचालित होते है।

महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005 (मनरेगा)– ग्रामीण स्तर पर रोजगार के तौर पर राष्ट्रीय रोजगार गांरटी अधिनियम (नरेगा) को सितम्बर को अधिसूचित किया गया था। 2005 बाद में इसके नाम परिवर्तन करके महात्मा गाँधी गांधी राष्ट्रीय रोजगार गांरटी अधिनियमकर (मनरेगा) दिया गया प्रारंभ के पहले चरण मे मनरेगा पिछड़े 200 को देश के 2006 फरवरी 2 जिलों में क्रियान्वित किया गया और बाद में 15 एवं 113 में अन्य 2007 अप्रैल 1 2008 अप्रैल 7 जिलों में इसका विस्तार किया गया। तत्पश्चात् 17 से 2007 मई से देश के शेष जिलों को भी सम्मिलित किया गया। वर्तमान में मनरेगाका विस्तार रूप से जनपदों अर्थात् सभी जनपदों में ल 644 0 लागू किया गया है। मुख्यतः मनरेगा का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार प्रदान करना तथा ऐसे प्रत्येक परिवार जिनके घर का वयस्क सदस्य शारीरिक श्रम करना चाहते हैं उन्हें वर्ष में कम से कम 100 दिनों का गारंटी, रोजगार उपलब्ध कराते हुए आजीविका को सुरक्षा प्रदान कराता है।

अध्ययन क्षेत्र– प्रस्तुत शोध पत्र का उत्तर प्रदेश के वाराणसी जनपद के सदर ब्लाक या विकासखंड के जलाली पट्टी ग्राम पंचायत के ... भुल्लनपुर ग्राम का चयन किया गया है।

समग्र एवं न्यायदर्श का चयन– प्रस्तुत अध्ययन 25 ईकाइयों का चयन सरल दैव निदर्शन पद्धति के उद्देशपूर्ण प्रणाली के माध्यम से किया गया है एवं तथ्यों के संकलन व अवलोकन के लिए साक्षात्कर अनुसूची का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन पद्धति– प्रस्तुत अध्ययन पद्धति अन्वेषणात्मक एवं सह वर्णात्मक शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है।

तथ्य संकलन के स्रोत– प्रस्तुत शोध को पूर्ण करने हेतु प्राथमिक एवं दैतीयक दोनों प्रकार के तथ्यों का प्रयोग संकलन के लिए किया गया है।

तथ्य संकलन के उपकरण एवं विधि– प्रस्तुत शोध पत्र में तथ्य संकलन के लिए अनुसूचि एवं साक्षात्कार विधि का प्रयोग किया गया है।

वर्गीकरण, सारणीयन एवं उपकरण एवं विधि– प्रस्तुत शोध पत्र में उतरदाताओं से प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण को सूचीबद्ध किया गया है तथा सारणी के तथ्यों के विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष प्रदान करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में सारणीवार तथ्यों की विवेचना निष्कर्ष सहित इस प्रकार प्रस्तुत है।

उतरदाताओं के आयु के आधार पर स्थिति
सारणी संख्या–1.1

प्रतुतर (वर्षो में)	आवृति	प्रतिशत
18–26	8	32.00
27–35	12	48.00
36–40	3	12.00
41 से अधिक	2	08.00
योग	**25**	**100.00**

उपरोक्त सारणी से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषल से स्पष्ट होता है कि 48.00 प्रतिशत सर्वाधिक लोगों उतरदाता 27–35 वर्ष, 32.00 प्रतिशत उतरदाता 18–26 वर्ष 12.00 प्रतिशत उतरदाता 36–40 वर्ष एवं 08.00 प्रतिशत उतरदाता 41 वर्ष से अधिक के पाए गए।

अतः निष्कर्ष के रूप में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 48.00 प्रतिशत उतरदाता 27–35 वर्ष, के अंतर्गत जो मनरेगा में कार्य करते है।

मनरेगा के अंतर्गत पंजीकृत के आधार पर
सारणी संख्या–1.2

मनरेगा के अंतर्गत पंजीकृत	आवृति	प्रतिशत
हॉ	20	80.00
नहीं	05	20.00
योग	**25**	**100.00**

उपरोक्त सारणी से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषल से स्पष्ट होता है कि 80 प्रतिशत उत्तरदाताओ ने स्वीकार किया कि मनरेगा के अंतर्गत पंजीकृत है तथा 20 प्रतिशत उत्तरदाता मनरेगा के अंतर्गत पंजीकृत नहीं है।

अतः निष्कर्ष के रूप में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि 80 प्रतिशत उत्तरदाताओ ने स्वीकार किया कि मनरेगा के अंतर्गत पंजीकृत है।

मनरेगा में कार्य के दौरान किसी भी प्रकार का भेदभाव के आधार पर विवरण
सारणी संख्या–1.3

मनरेगा के कार्य के दौरान किसी भी प्रकार का भेदभाव	आवृति	प्रतिशत
हॉ	3	12.00
नहीं	17	68.00
कह नहीं सकते हैं	5	20.00
योग	**25**	**100.00**

उपरोक्त सारणी से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषल से स्पष्ट होता है कि 68 प्रतिशत उत्तरदाताओ अनुसार मनरेगा में कार्य के दौरान किसी भी प्रकार का भेदभाव नही होता है, 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार

किया कि कह नही सकते है उतर प्रदान किया और वही पर 12 प्रतिशत उत्तरदाताओं में ज्यादातर महिलाओं ने स्वीकार किया कि मनरेगा में कार्य के दौरान भेदभाव होता है

अतः निष्कर्ष के रूप में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि 68 प्रतिशत उत्तरदाताओ ने स्वीकार किया कि मनरेगा में कार्य के दौरान किसी भी प्रकार का भेदभाव नही होता है, अर्थात ग्रामीण विकास एवं महिला सशक्तिकरण के परिणामतः समनता के अवसर प्रदान हो रहें है।

मनरेगा के संचालन के पश्चात् गरीबी में कमी के आधार पर

सारणी संख्या–1.4

मनरेगा के संचालन के पश्चात् गरीबी में कमी	आवृति	प्रतिशत
हाँ	20	80.00
नहीं	2	8.00
कह नहीं सकते हैं	3	12.00
योग	**25**	**100.00**

उपरोक्त सारणी से प्राप्त तथ्यों के विश्लेशण से स्पष्ट होता है कि 80 प्रतिशत उतरदाताओं का मानना है रोजगार के तौर पर मनरेगा का संचालन के पश्चात गरीबी में कमी आयी है, 12 प्रतिशत उतरदाताओं ने कह नहीं सकते है में उत्तर नही प्रदान किए तथा 8 प्रतिशत उतरदाताओं ने बताया कि मनरेगा के संचालन के पश्चात् गरीबी में कोई विशेष कमी नहीं आयी है।

अतः निष्कर्ष के रूप में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 80 प्रतिशत उतरदाताओं ने स्वीकार किया कि रोजगार के तौर पर मनरेगा का संचालन के पश्चात गरीबी में कमी आयी है और ग्रामीण विकास हुए साथ ही रोजगार का अवसर प्राप्त हुआ है।

मनरेगा के क्रियान्वन के पश्चात् प्रवास में कमी के आधार पर विश्लेषण

सारणी संख्या–1.5

मनरेगा के क्रियान्वन के पश्वात् प्रवास में कमी	आवृति	प्रतिशत
हाँ	17	68.00
नहीं	3	12.00
कह नहीं सकते हैं	5	20.00
योग	**25**	**100.00**

उपरोक्त सारणी से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 68 प्रतिशत उतरदाताओं का कहना है कि मनरेगा के क्रियान्वन के पश्चात् प्रवास में कमी आयी है, क्योकि जो लोग गावों से बहार रोजगार करने जाते थे इससे राहत मिला है जबकि वही पर 20 प्रतिशत उत्तरदाता प्रवास के स्थिति पर कह नहीं सकते है में जवाब दिए एवं 12 प्रतिशत उतरदाताओं ने स्वीकार किया कि मनरेगा के क्रियान्वन के पश्चात् प्रवास में कमी नहीं आयी है।

अतः निष्कर्ष के रूप में प्राप्त तथ्यों से स्पष्ट है कि ज्यादातर 68 प्रतिशत उतरदाताओं का कहना है कि मनरेगा के क्रियान्वन के पश्चात् प्रवास में कमी आयी है क्योंकि स्थानीय स्तर पर ही रोजगार मिलने से प्रवास की स्थिति में बहुत बड़ा बदलाव हुआ है ।

मनरेगा से परिवार पर प्रभाव के आधार पर विश्लेषण

सारणी संख्या–1.6

मनरेगा से परिवार का प्रभाव	आवृति	प्रतिशत
हॉ	21	84.00
न्हीं	2	8.00
कह नहीं सकते हैं	2	8.00
योग	**25**	**100.00**

उपरोक्त सारणी से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषल से स्पष्ट होता है कि 84 प्रतिशत उतरदाताओं का मानना है कि मनरेगा से परिवार पर प्रभाव पड़ा है जबकि 8 प्रतिशत लोगो का कहना है कि परिवार पर कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा है और 8 प्रतिशत लोगो ने कह नहीं सकते है में जवाब दिया है।

अतः परिणामतः कहा जा सकता है कि सर्वाधिक तौर पर 84 प्रतिशत उतरदाताओं का मानना है कि मनरेगा से परिवार पर प्रभाव पड़ा है।

मनरेगा से महिला सशक्तिकरण के आधार पर

सारणी संख्या–1.7

मनरेगा से महिला सशक्तिकरण	आवृति	प्रतिशत
हॉ	21	84.00
न्हीं	1	4.00
कह नहीं सकते हैं	3	12.00
योग	**25**	**100.00**

उपरोक्त सारणी से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है है 84 प्रतिशत उतरदाताओं ने स्वीकार किया कि मनरेगा से महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा मिला है, 12 प्रतिशत उतरदाताओं का मानना है कि वे स्पष्ट जवाब नहीं दे पाए बल्कि कह नहीं सकते में उतर दिए और वही पर 4 प्रतिशत उतरदाताओं ने कहा कि मनरेगा से महिला सशक्तिकरण में कोई खास बदलाव नही हुआ है।

अतः परिणामतः कहा जा सकता है कि सर्वधिक तौर पर 84 प्रतिशत उतरदाताओं ने स्वीकार किया कि मनरेगा से महिला सशक्तिकरण में तेजी से हो रहा उसके पीछे मुख्य वजह मनरेगा के साथ वर्त्तमान में संचालित अन्य विकास योजनाओं का भी प्रभाव है।

मनरेगा में कार्य के दौरान ग्राम प्रधान का व्यवहार के आधार पर

सारणी संख्या–1.8

मनरेगा में कार्य के दौरान ग्राम प्रधान का व्यवहार	आवृति	प्रतिशत
अति उत्तम	14	56.00
उत्तम	5	20.00
सामान्य	4	16.00
महिला एवं पुरुष में असमानता	2	08.00
योग	**25**	**100.00**

उपरोक्त सारणी से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि है 56 प्रतिशत उतरदाताओं का मानना है कि मनरेगा में कार्य के दौरान ग्राम प्रधान का व्यवहार अति उतम है, 20 प्रतिशत उतरदाताओं के अनुसार उतम, 16 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार सामान्य तथा 08 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार कही न कही पर महिला एवं पुरुष में असमानता व्याप्त है ।

अतः परिणामतः कहा जा सकता है कि 56 प्रतिशत उत्तरदाताओं का कहना है कि मनरेगा में कार्य के दौरान ग्राम प्रधान का व्यवहार अति उत्तम है मनरेगा में कार्य के दौरान कोई खास प्रकार की समस्या नही होती है यदि किसी भी प्रकार की कठिन परिस्थियों में सहायता प्रदान करते है।

निष्कर्ष–

ग्रामीण संरक्षण के रूप में, ग्रामीण विकास एक बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं शैक्षिणक रूप से सशक्त करने के विकास कार्यक्रमों का संचालन होता रहा है। रोजगार के तौर पर मनरेगा 2005 में अस्तित्व में आया जिससे ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार और गावों का विकास हो सके, योजना के इतने लम्बे अन्तराल के बाद स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है। मनरेगा के द्वारा रोजगार, ग्रामीण विकास के साथ ही महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा मिल रहा है। मनरेगा के सार्थकता को देखे तो सामजिक आर्थिक व्यवस्था के निम्न स्तर के व्यक्ति या महिलाओं को विकास के तरफ बढ़ने की रह दिखाई है एवं साथ ही मनरेगा को सार्थक अर्थो में ग्रामीण भारत के निर्धनता एवं बेरोजगारी की सामाजिक–आर्थिक प्रगति के वाहक के आधार के रूप में देखा जा सकता है। वर्तमान संदर्भ में देखें तो मनरेगा के द्वारा 13 करोंड परिवारों के लगभग 28 करोंड कामगारों के पास जॉब कार्ड उपलब्ध है। नेशनल काउंसिल ऑफ अप्लिड इकनोमिक रिसर्च (NCAER) के रिपोर्ट के अनुसार मनरेगा के प्रारंभ से पहले 42 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे थी। मनरेगा के प्रारंभिक दौर के बाद इसमें ग्रामीण गरीब जनसंख्या के 30 प्रतिशत भागीदारी रही है। मनरेगा के सफलता का ही परिणाम है कि जिससे ग्रामीण श्रम बाजार में मजदूरी दर में वृद्धि हुई है तथा श्रमिकों द्वारा मोलभाव करने की क्षमता भी बढ़ी है। मनरेगा से जुड़ें लोगों द्वारा संगठित क्षेत्र से रुपये प्राप्त करने के दर में वृद्धि हुआ है। जिससे साहूकारों पर निर्भरता में कमी है और निम्न वर्ग में आत्मनिर्भरता बढ़ी है। (NCAER) के रिपोट से स्पष्ट होता है कि गरीब एवं सामाजिक रूप से कमजोर वर्गों में जैसे मजदूर, आदिवासी, दलित एवं छोटे सीमांत कृषकों के बीच गरीबी एवं बेरोजगारी कम करने में मनरेगा के महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. गजराज, पदम सिंह, (2019), 'मनरेगा अनुसूचित जातियों एवं जनजाति का विकास एवं सशक्तिकरण, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
2. वसावा, रेखा डी., (2018), 'मनरेगा एवं ग्रामीण विकास जे.टी.एस. पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।
3. कोरेथ जार्ज, बडेहरा किरण (2017), 'ग्रामीण महिला सशक्तिकरण उपलब्धि अभिप्रेरणा के माध्यम से सूक्ष्म उद्यम' सेज प्रभा, प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. राय अरुणा व डे निखिल, (अगस्त 2019), 'नरेगा एक नया और बड़ा धरातल' प्रतियोगिता दृष्टि, नई दिल्ली पृ. 40
5. मिश्रा, महेंद्र कुमार, (2011), 'दलित अधिकार एवं व्यवहार' एजुकेशन पब्लिशर्स और डिसटीब्यूटर्स, नई दिल्ली।

6. यादव, चंद्रभान, (2010), 'मनरेगा और पंचायती राज' कुरुक्षेत्र, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली।
7. राजगढ़िया, विष्णु, (2013), 'मनरेगा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. मोहम्मद, रहमान, (2013), 'रूरल डेवलपमेंट एंड रूरल वर्कर', कामनवेल्थ पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
9. कश्यप, मंजूलता. (2014), 'ग्रामीण विकास एवं मनरेगा', शताब्दी प्रकाशन, रायपुर।
10. शर्मा, रेखा, (2012), 'ग्रामीण विकास एवं नियोजन', रावत पब्लिक प्रकाशन, नई दिल्ली।
11. 'मनरेगा समीक्षा रिपोर्ट', (2012), ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार, द्वारा प्रकाशित नई दिल्ली।
12. सिंह, एस.के., (अगस्त 2010), 'महा नरेगा की समीक्षा', प्रतियोगिता दृष्टि, नई दिल्ली।
13. कुमार, उमेश, (अक्टूबर 2014), 'ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार योजनाओं पर एक नजर', कुरुक्षेत्र, सूचना प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, पृ. 20
14. महिपाल, (2016), 'ग्राम नियोजन', राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली।
15. बंसल, डी.के. (2013), 'ग्रामीण विकास अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां', सिंगचर बुक्स इंटरनेशनल, दिल्ली।
16. डेसमंड एंकर, एल.डब्ल्यू. ग्रामीण विकास समस्याग्रस्त रणनीतियाँ, अंतर्राष्ट्रीय, श्रम समीक्षा।
17. देशा, स्टोबलम और जॉन, फोरिंगटन (2008), 'भारतीय राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम : क्या यह गरीबी कम करेगा और आर्थिक विकास को बढ़ावा देगा, नई दिल्ली।
18. http://hrega.raj.nic.in.
19. www.nrega.nic.in

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

अज्ञेय के काव्य में प्रतीक– विधान

डॉ० लालजीत राम
असिस्टेंट प्रोफेसर –हिन्दी
पं० रामलखन शुक्ला राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
आलापुर अंबेडकर नगर उत्तर प्रदेश

शोध सारांश

आधुनिक हिन्दी कविता के विकास में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' का महत्वपूर्ण योगदान है। अज्ञेय ने अपनी काव्य–रचना में भाषा, शैली और अभिव्यक्ति के नवीन प्रयोगों के साथ–साथ प्रतीकों के माध्यम से गहन भावबोध और दार्शनिक चिंतन को अभिव्यक्त किया है। उनके काव्य में प्रतीक केवल अलंकारिक तत्व नहीं हैं, बल्कि वे मानव जीवन, प्रकृति, अस्तित्व और आत्मानुभूति के जटिल भावों को प्रकट करने का सशक्त माध्यम बनते हैं।

इस शोध का मुख्य उद्देश्य अज्ञेय के काव्य में प्रयुक्त प्रतीकों के स्वरूप, अर्थ और उनके दार्शनिक तथा सांस्कृतिक संदर्भों का विश्लेषण करना है। अज्ञेय के काव्य में प्रकृति से जुड़े प्रतीक जैसे– नदी, दीप, आकाश, वन आदि–मानव जीवन की आंतरिक अनुभूति, एकांत, स्वतंत्रता और अस्तित्ववादी चिंतन को व्यक्त करते हैं। उनके काव्य में प्रतीकात्मकता के माध्यम से व्यक्ति की आत्मचेतना, सामाजिक यथार्थ तथा आधुनिक जीवन की जटिलताओं को भी अभिव्यक्ति मिलती है।

अज्ञेय की काव्य–दृष्टि में प्रतीक विधान का प्रयोग अत्यंत सूक्ष्म और बहुआयामी है। उनके काव्य–संग्रहों जैसे– हरी घास पर क्षण भर, बावरा अहेरी तथा इत्यलम् में प्रतीकों के माध्यम से कवि ने जीवन, प्रकृति और अस्तित्व के गूढ़ अर्थों को उद्घाटित किया है। इस प्रकार अज्ञेय की काव्य–भाषा में प्रतीक विधान न केवल काव्य की सौंदर्यात्मकता को समृद्ध करता है, बल्कि पाठक को गहरे चिंतन के लिए भी प्रेरित करता है।

अतः यह शोध अज्ञेय के काव्य में प्रतीकों के विविध आयामों–प्राकृतिक, दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक का अध्ययन करते हुए यह स्पष्ट करने का प्रयास करता है कि उनकी प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति आधुनिक हिन्दी कविता को एक नई संवेदनात्मक और बौद्धिक दिशा प्रदान करती है।

मूल शब्द– आक्रान्ताओं, अग्रदूत, निर्मम, संवत्सर, व्याध, छरहरी, मुलम्मा, ताजगी, अन्वेषण।

हिंदी साहित्य का काल विभाजन में आधुनिक काल एक नयी आवाज एवं जिस विचारधारा को लेकर आया उसमें राष्ट्रीय स्वतंत्रता, सामाजिक विषमता, अव्यवस्था और विदेशी आक्रांताओं के विरोध की आवाज थी। उस समय के साहित्यकारों, पत्रकारों, समाजसेवियों ने जिसमें सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीयता का भाव प्रबल रहा, साथ ही नवजागरण एवं पुनर्जागरण काल सभी तरह समस्याओं को लेकर अग्रदूत के रूप में सामने आया। राष्ट्रीय आंदोलन के माध्यम से भारतीय संस्कृति की रक्षा एवं जनमानस को जागृत किया, साथ ही छायावाद जैसी स्वच्छंद विचारधारा का आगमन हुआ और आगे बढ़ते

हुए जमीनी धरातल पर प्रगति चेतना का स्वर समाज में व्याप्त अनेक बुराइयों एवं विषमताओं के विरोध में प्रबल हुआ जो साम्राज्यवाद, सामंतवाद एवं पूंजीवाद के विरुद्ध था। अज्ञेय एक ऐसे काल को जन्म दिया जो प्रयोगवाद के रूप में जाना गया और प्रयोगवादी विचारधारा से संवेदनाओं के प्रति प्रेरित करने वाले शिल्पगत चमत्कारों को लेकर तार सप्तक 1943 में आते हैं। जिसे उनकी दृष्टि में प्रयोगवाद अपने आप में कोई ईश्वर नहीं है, वरन वह साधन है, वह सत्य को जानने का साधन है, जिसे कवि प्रेरित करता है। शमशेर सिंह ने दूसरा तारसप्तक की भूमिका में कवि कर्म की व्याख्या करते हुए लिखा है कि 'अज्ञेय प्रयोगवाद के प्रतिनिधि कवि हैं। जिनके अथक प्रयास से प्रयोगवाद का जन्म हुआ और विकसित होकर विभिन्न रूप में पल्लवित हुआ। नई कविता का जन्म प्रयोगवाद से हुआ जो समकालीन युवा कवियों के विरोध के स्वरों से समाज में व्याप्त विसंगतियों का रूप सामने आया। तार सप्तक के कवियों के वैचारिक मतभेद के बावजूद भी प्रयोगवाद ने ही सभी को एक जगह साहित्यिक पटल पर लाने का काम किया आगे की पंक्तियां हैं–

''वह क्षण–भर और
लंबे सर्जना के क्षण कभी भी हो नहीं सकते
बूंद स्वाती की भले हो बेधती है मर्म सीपी का उसी निर्मम
त्वरा से
वज्र जिससे फोड़ता चट्टान को।'' 1

अज्ञेय की संवेदना उनकी जागरूकता और अभिव्यंजना के रूप में स्वीकार्य हैं और यह अनुभव उनके प्रतीकों में नई संवेदना और अभिव्यक्ति के रूप में आती है। अज्ञेय परंपरागत प्रतीकों में नवीन अर्थो की संयोजना और दूसरा बिल्कुल नवीन प्रतीकों का सृजन। इसी कारण पूर्ण रूप से स्वीकार्य है की इनका प्रतीक योजना सफल और सार्थक है। अज्ञेय अपनी पुस्तक 'संवत्सर' में अनुभव किया था कि पौराणिक प्रतीकों की समकालीन अर्थव्यवस्था छिन्न–भिन्न हो रही है। 'जरा व्याध' का अनुभव के माध्यम से कवि कहना चाहता है कि –

कृष्ण! मैंने मारा नहीं तुम्हें।
मैंने अपने को बांधा है तुम्हारे साथ।
और तुम भी मेरे साथ बॅधे हो।
मेरे साथ व्याध के।''२

अज्ञेय अपने काव्यानुभूति के माध्यम से उन सामंतवादियों के प्रति विद्रोह का भाव व्यक्त करते हैं।

अज्ञेय का मानना है कि अनुभूति को अनुभावक से अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि अनुभूति स्वयं व्यक्ति की सोची–समझी विचारधारा से आती है यह दूसरों की नहीं हो सकती। इसी का आधार मानकर 'सागर' और 'मछली' को प्रतीक द्वारा व्यक्त किया गया है। अज्ञेय प्रयोगवाद कवि होने के नाते उनके काव्य की अभ्यंजन ही उनकी संवेदना के प्रति जागरूक बनाती है, इसी कारण वे नवीन प्रतीक का सृजन करते हैं वे पुराने प्रतीक को समाज के नवीन विकास में बाधक तो नहीं मानते लेकिन भविष्य की सृजनशीलता में विकास भी नहीं मानते अपनी कविता ''कलगी बाजरे की'' के माध्यम से कवि बताना चाहता है कि–

''हरी बिछली घास!
दोलती कलगी छरहरी बाजरे की।
अगर मैं तुम को ललाती सॉझ के नभ की अकेली तरीका
अब नहीं कहता,

या शरद के भोर की नीहार–न्हायी कुॅई,
कटकी कली चंपे की,
वगैरह, तो
नहीं कारण कि मेरा हृदय उथला या कि सूना है,
या कि मेरा प्यार मैला है।
बल्कि केवल यही
ये उपमान मैले हो गए हैं।
देवता इन प्रतीकों के कर गये हैं कुच।''३

कवि का प्रतीक विधान इस प्रकार है कि वह अपने प्रेयसी को पुराने प्रतीकों से अलग मानता है वह चंद्रमा, चंपा, जूही, कली आदि जैसी उपमा न देकर वह छरहरी एवं दुबली–पतली बाजरे के समान बताता है और इस तरह पुराने उपमानों का आकर्षण अब समाप्त हो गया। नायिका को हरी बिछी घास के रूप में देखना चाहता है पुराने प्रतीकों को ठीक वैसे ही बताता है जैसा बासन को बार–बार मॉजने से उसका मुलम्मा छूट जाता है।

प्रयोगवादी कवि अज्ञेय के कवि कर्म का ही संघर्ष है की भाषा को उन्होंने विषय की हैसियत प्रदान की और उनके प्रभाव से ही रामस्वरूप चतुर्वेदी, डॉ० देवराज जैसे– आलोचकों की 'काव्य भाषा' को अपना विषय बनाना पड़ा। अज्ञेय के शब्द मौन और स्मृति पर गहन चिंतन करते हुए पाया है कि भाषा की संस्कृति है, स्मृति है, समाज है, मिथक है, परंपरा है, इतिहास है, भाषा की स्मृति से हीन न सृजन हो सकता है, न आलोचना। इस तरह भाषा मानव का अस्तित्व और व्यक्तित्व दोनों है।4 अज्ञेय की विशेषता इस बात में है कि वह एक ही उपमान या प्रतीक का अनेक बार प्रयोग करते हैं और हर प्रयोग में जीवन्तता तथा ताजगी रहती है। दरअसल, अज्ञेय की काव्यशक्ति अद्वितीय है। वह जब भी, जहां भी, जैसा भी, उपमान या प्रतीक लाना चाहते हैं, लाते हैं और उसका प्रयोग भी विशिष्ट अर्थ–संदर्भ में करते हैं। जैसे– भारतीय साहित्य में 'धूप' का उपमान नया नहीं है, लेकिन आगे का प्रयोग वैशिष्ठ अर्थ की सारी संवेदना को एक नई ताजगी से भर देता है–

''धूप
मां की हंसी के प्रतिबिंब–सी शिशु–वदन पर–
हुई भासित
नये चीड़ों से कटीली पार की गई गिरि–श्रृंखला पर।''

कवि जहां प्रकृति को मानवीकृत किया है वहॉं तो वह चेतन है ही, जहॉं उन्होंने जड़ प्रकृति में किसी जीव विशेष की चेतना डाल दी है वहां भी वह सचेतन रुप दिखाई देता है–

'सूप–सूप भर
धूप –कनक
वह सूने नभ में गरीब बिखरः
चौंकाया
बीन रहा है
उसे अकेला एक कुरर।''५

अज्ञेय 'धूप' कविता में प्रतीक के रूप में शिशु के मुख पर पड़ती हुई धूप जो वात्सल्य भाव से पूरी तरह मां की हंसी का प्रतिबिंब प्रस्तुत करती है, जो कवि की दृष्टि से अद्वितीय है। डॉ. रामविलास शर्मा के शब्दों में– 'कविता में सारस्वत शक्तियों की खोज मैंने ही की हो, यह भी दिल पर हाथ रखकर नहीं कर सकता। उक्त मंतव्य को ध्यान में रखकर कहा जा सकता है कि प्रयोगवादी कविता में युग से उत्पन्न अनास्था, शंका, घुटन, कुंठा, भग्नाशा में से एक नये पथ के अन्वेषण की व्याकुल भावना दिखाई पड़ती है। ये कवि एक नए मार्ग का अनुसंधान करने के लिए व्याकुल है।'

अज्ञेय की रचनाओं में व्यक्ति कर्तव्य का आरंभ अस्मिता विलय से होता है इसलिए कवि सबसे पहले व्यक्ति को अस्मिता से मुक्ति पाने की सलाह देता है । अज्ञेय की स्वाधीनता की अवधारणा में व्यक्ति की स्वाधीनता सर्वोपरि है। स्वाधीन व्यक्ति ही स्वाधीन समाज का निर्माण कर सकता है, पराधीन व्यक्ति नहीं। स्वाधीन व्यक्ति ही स्वाधीन चिंतन से स्वाधीनता और सामाजिकता को नया सर्जनात्मक अर्थ–संदर्भ दे सकता है। इसलिए अज्ञेय की स्वाधीनता में अकेला–एकांत नहीं है– बृहत्तर समाज या ममेतर समाज समाया हुआ है। इस तरह स्वाधीनता एक प्रक्रिया भी है और मूल्य भी–एक नैतिक मूल्य। अज्ञेय मानते हैं, ''स्वतंत्रता का आत्म–चेतन दावा ही स्वतंत्रता का वास्तविक दवा है, ''मैं'' के अधिकार का दावा तो एक जैविक प्रेरणा है; ''ममेतर'' का दावा ही मनुष्यता की पहचान है।''6 समाज में कुछ ऐसे व्यक्ति समाज से जुड़े हैं जो समाज को अपने रूप में ढ़ालना चाहते हैं, जिससे राष्ट्र का स्वतंत्र विकास रुक जाता है और कवि ऐसे ढांचाबद्ध समाज का विरोध करता है।

अज्ञेय अपने काव्य में विविध प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग किया है। उनके काव्य में आए हुए प्रतीत प्रकृति, समाज, राजनीतिक, धर्म, दर्शन, पुराण आदि विभिन्न क्षेत्रों से जुड़ा हुआ है। पारंपरिक प्रतीक के साथ नवीन प्रचलित प्रतीक अपेक्षित, गंभीर और आध्यात्मिक प्रतीकों के साथ व्यंग्यपरख एवं सामान्य जन–जीवन से जुड़े हुए अनेक प्रकार के प्रतीक का आधार कवि के रचनाओं में देखा जाता है।

संदर्भ–

1. हिंदी साहित्य का संवेदना का विकास– रामस्वरूप चतुर्वेदी– लोक भारती प्रकाश इन इलाहाबाद पृ० सं० 1।
2. वही० पृ०–75
3. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'– पचास कविताएं– सम्पा० कृष्णदत्त पालीवाल–वाणी प्रकाशन नई दिल्ली– पृ० सं०–31
4. अज्ञेय होने का अर्थ– कृष्णदत्त पालीवाल– वाणी प्रकाशन नई दिल्ली– पृ० सं०–102
5. चालीसोत्तर हिंदी कविता के हीरक हस्ताक्षर–डॉ० इला सुकुमार, भवदीय प्रकाशन अयोध्या, फैजाबाद, उ० प्र० पृ० सं०–50
6. अज्ञेय होने का अर्थ– कृष्णदत्त पालीवाल–वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ०सं०–67

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation,Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

हिंदी सिनेमा एवं डिजिटल युग में युवाओं का बदलता सामाजिक व्यवहार

डॉ अभिषेक कुमार सरोज
असि. प्रोफेसर–समाजशास्त्र
मदनमोहन मालवीय पी जी कॉलेज कालाकांकर प्रतापगढ़।
संबद्ध–प्रो.राजेंद्र सिंह रज्जू भैया विश्वविद्यालय प्रयागराज (उ. प्र.)

सारांश —

हिंदी सिनेमा भारतीय समाज के सांस्कृतिक, नैतिक और सामाजिक मूल्यों का महत्वपूर्ण प्रतिबिंब रहा है। समय के साथ फिल्मों की विषयवस्तु, प्रस्तुति शैली, तकनीकी संरचना तथा दर्शकों की भागीदारी में उल्लेखनीय परिवर्तन देखने को मिले हैं। डिजिटल युग के आगमन ने इन परिवर्तनों को और अधिक तीव्र एवं व्यापक बना दिया है। इंटरनेट, सोशल मीडिया, ओटीटी मंचों और स्मार्टफोन जैसी आधुनिक तकनीकों ने सिनेमा के निर्माण, प्रसार और उपभोग की पारंपरिक प्रणालियों को पूर्णतः परिवर्तित कर दिया है। इन परिवर्तनों का सर्वाधिक प्रभाव युवा वर्ग पर पड़ा है, क्योंकि युवा आधुनिक तकनीकों के सबसे सक्रिय उपयोगकर्ता हैं। डिजिटल माध्यमों के विस्तार ने युवाओं को विविध प्रकार की विषयवस्तु तक सरल पहुँच प्रदान की है, जिससे उनकी सोच, जीवनशैली, अभिरुचियों, सामाजिक संबंधों तथा सांस्कृतिक दृष्टिकोण में महत्वपूर्ण परिवर्तन आए हैं।

यह शोध–पत्र हिंदी सिनेमा और डिजिटल माध्यमों के संयुक्त प्रभाव का युवाओं के सामाजिक व्यवहार पर विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि सिनेमा और डिजिटल प्लेटफॉर्म युवाओं को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, सामाजिक चेतना, रचनात्मकता तथा वैश्विक दृष्टिकोण प्रदान करने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। इसके विपरीत, इन माध्यमों के अत्यधिक प्रभाव से उपभोक्तावादी प्रवृत्ति, आभासी जीवनशैली, सामाजिक अलगाव, सांस्कृतिक असंतुलन तथा मानसिक दबाव जैसी चुनौतियाँ भी उत्पन्न हो रही हैं।

अतः यह आवश्यक है कि युवा वर्ग सिनेमा और डिजिटल माध्यमों का उपयोग संतुलित, जागरूक और सकारात्मक दृष्टिकोण के साथ करे, ताकि सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास को सुदृढ़ बनाया जा सके।
कुंजीभूत शब्दरू हिंदी सिनेमा, डिजिटल मीडिया, युवा व्यवहार, सोशल मीडिया, ओटीटी प्लेटफॉर्म, सामाजिक परिवर्तन सिनेमा केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह समाज की मानसिकता, सांस्कृतिक मूल्यों और जीवनशैली को प्रभावित करने वाला एक सशक्त माध्यम है। यह सामाजिक यथार्थ को प्रस्तुत करने के साथ–साथ लोगों की सोच और दृष्टिकोण को भी आकार देता है। भारत में हिंदी सिनेमा ने समय–समय पर सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विभिन्न ऐतिहासिक चरणों में फिल्मों ने पारिवारिक संबंधों,

देशभक्ति, प्रेम, शिक्षा, महिला सशक्तिकरण, सामाजिक समानता तथा संघर्ष जैसे विषयों को प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया है। डिजिटल क्रांति के बाद सिनेमा के उपभोग की पारंपरिक पद्धतियों में व्यापक बदलाव आया है। पहले जहाँ फिल्में देखने का प्रमुख माध्यम सिनेमाघर हुआ करते थे, वहीं अब युवा वर्ग मोबाइल फोन, लैपटॉप, टैबलेट और स्मार्ट टीवी जैसे डिजिटल उपकरणों के माध्यम से किसी भी स्थान और समय पर फिल्में देख सकता है। ऑनलाइन स्ट्रीमिंग सेवाओं और ओटीटी मंचों ने मनोरंजन की पहुँच को अत्यंत सरल और व्यापक बना दिया है।

इस तकनीकी परिवर्तन का युवाओं के सामाजिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा है। उनकी सोच, भाषा शैली, पहनावा, रहन–सहन, सामाजिक संबंधों की प्रकृति तथा व्यवहार के तरीकों में परिवर्तन स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। डिजिटल माध्यमों ने जहाँ युवाओं को वैश्विक संस्कृति से जोड़ा है, वहीं उनके सामाजिक दृष्टिकोण और जीवनशैली को भी नया स्वरूप प्रदान किया है।

हिंदी सिनेमा का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य –

भारतीय सिनेमा का विकास एक लंबी ऐतिहासिक प्रक्रिया का परिणाम है। प्रारंभिक दौर में फिल्में मूक हुआ करती थीं, जिनमें संवादों के स्थान पर हाव–भाव और दृश्य प्रभावों के माध्यम से कथानक प्रस्तुत किया जाता था। बाद में ध्वनि तकनीक के विकास के साथ बोलती फिल्मों का निर्माण शुरू हुआ, जिसने सिनेमा को व्यापक लोकप्रियता दिलाई। इसी चरण से हिंदी सिनेमा का व्यवस्थित विस्तार आरंभ हुआ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिंदी सिनेमा ने सामाजिक यथार्थ को प्रमुखता से प्रस्तुत करना शुरू किया। इस कालखंड की फिल्मों में समाज सुधार, पारिवारिक संबंध, नैतिक मूल्यों, आदर्शवाद तथा सामूहिक जीवन की भावनाओं को विशेष महत्व दिया गया। फिल्में केवल मनोरंजन का साधन न रहकर सामाजिक चेतना का माध्यम बनने लगीं।

1.स्वर्णिम युग का सिनेमा –

बीसवीं शताब्दी के मध्य काल, विशेष रूप से 1950 से 1970 के बीच का समय, हिंदी सिनेमा के स्वर्णिम दौर के रूप में देखा जाता है। इस अवधि में फिल्मों की कथावस्तु अधिक यथार्थवादी और संवेदनशील रही। सामाजिक असमानता, निर्धनता, वर्ग विभाजन तथा मानवीय संघर्षों को गहन भावनात्मकता के साथ चित्रित किया गया। इस दौर की फिल्मों ने समाज की वास्तविक परिस्थितियों को कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की।

2– व्यावसायिक सिनेमा का दौर –

1970 से 1990 के बीच हिंदी सिनेमा में व्यावसायिकता का प्रभाव बढ़ने लगा। फिल्मों का उद्देश्य व्यापक दर्शक वर्ग का मनोरंजन बन गया, जिसके कारण कथानकों में एक्शन, रोमांस, संगीत और नाटकीय तत्वों की प्रधानता बढ़ी। इस समय फिल्मों में नायक का व्यक्तित्व अधिक प्रभावशाली, साहसी और विद्रोही रूप में प्रस्तुत किया गया। अन्याय और भ्रष्ट व्यवस्था के विरुद्ध संघर्ष करने वाले पात्रों ने दर्शकों, विशेषकर युवाओं, पर गहरा प्रभाव डाला।

3– आधुनिक सिनेमा–

इक्कीसवीं सदी के आरंभ से हिंदी सिनेमा की विषय वस्तु और प्रस्तुति शैली में विविधता आई है। बदलती सामाजिक परिस्थितियों और नई पीढ़ी की अपेक्षाओं के अनुरूप फिल्मों में नवीन विषयों को स्थान दिया जाने लगा। शिक्षा प्रणाली, मानसिक स्वास्थ्य, महिला सशक्तिकरण, सामाजिक समानता, युवा समस्याएँ, शहरी जीवन, तथा बदलते पारिवारिक संबंध जैसे विषय प्रमुखता से उभरकर सामने आए। तकनीकी उन्नति और वैश्विक प्रभाव के कारण फिल्मों की निर्माण शैली और प्रस्तुति में भी आधुनिकता दिखाई देने लगी।

डिजिटल युग का विस्तार और सिनेमा–

डिजिटल तकनीक के विकास ने मनोरंजन जगत, विशेष रूप से सिनेमा, में व्यापक और परिवर्तनकारी प्रभाव डाला है। आधुनिक साधनों ने फिल्म निर्माण, वितरण और प्रचार के तरीकों को पूरी तरह नया रूप दिया है।

1 – इंटरनेट और सोशल मीडिया का प्रभाव– आज इंटरनेट ने फिल्मों के प्रचार–प्रसार को तेज और व्यापक बना दिया है।

YouTube, Instagram vkSj Facebook जैसे मंचों के माध्यम से फिल्म के ट्रेलर, टीजर और गीत कुछ ही समय में करोड़ों दर्शकों तक पहुँच जाते हैं। इससे दर्शकों में फिल्मों के प्रति उत्सुकता तेजी से बढ़ती है और प्रचार की लागत भी कम होती है।

2 – ओटीटी प्लेटफॉर्म का विकास– ऑनलाइन स्ट्रीमिंग सेवाओं ने मनोरंजन देखने के तरीके को पूरी तरह बदल दिया है। NetfliÛ, Amazon Prime Video vkSj Disney+ Hotstar जैसे ओटीटी प्लेटफॉर्म के कारण अब दर्शक घर बैठे फिल्में और वेब–सीरीज देख सकते हैं। इससे युवाओं को विदेशी भाषाओं और अंतरराष्ट्रीय विषयों पर आधारित सामग्री देखने का अवसर मिला है, जिससे उनका दृष्टिकोण अधिक व्यापक हुआ है।

3 – डिजिटल सिनेमैटोग्राफी – आधुनिक डिजिटल उपकरणों ने फिल्म निर्माण को अधिक उन्नत बना दिया है। डिजिटल कैमरे, विजुअल इफेक्ट्स (VFX) और उन्नत संपादन सॉफ्टवेयर की सहायता से फिल्में अधिक आकर्षक और प्रभावशाली बन रही हैं। इन तकनीकों ने युवाओं में रचनात्मकता और तकनीकी कौशल के प्रति रुचि को भी बढ़ावा दिया है।

युवाओं पर हिंदी सिनेमा का सामाजिक प्रभाव–

हिंदी सिनेमा केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं है, बल्कि यह युवाओं के विचारों, व्यवहार, जीवनशैली और सामाजिक दृष्टिकोण को गहराई से प्रभावित करता है। फिल्मों में प्रस्तुत कथानक, पात्र और संवाद युवाओं के मन पर स्थायी छाप छोड़ते हैं।

1– जीवनशैली पर प्रभाव– फिल्मों में दिखाई गई आधुनिक जीवनशैली का युवाओं पर सीधा प्रभाव पड़ता है। वे फिल्मों में प्रदर्शित फैशन, हेयरस्टाइल, पहनावे के तरीके और बोलने की शैली को अपनाने लगते हैं। इसके परिणामस्वरूप सिनेमा युवाओं के व्यक्तित्व निर्माण और आत्म–प्रस्तुति को प्रभावित करता है।

2 – भाषा और संचार शैली– हिंदी फिल्मों के लोकप्रिय संवाद अक्सर युवाओं की रोजमर्रा की भाषा का हिस्सा बन जाते हैं। आधुनिक फिल्मों के प्रभाव से 'कूल' भाषा, नए स्लैंग शब्दों और हिंदी–अंग्रेजी के मिश्रण (हिंग्लिश) का प्रयोग बढ़ा है। इससे युवाओं की संवाद शैली अधिक अनौपचारिक और प्रभावशाली बनी है।

3– प्रेम और संबंधों की धारणा – समकालीन हिंदी सिनेमा ने प्रेम, विवाह और संबंधों के पारंपरिक दृष्टिकोण में परिवर्तन किया है। फिल्मों में दर्शाए गए लिव–इन रिलेशनशिप, डेटिंग संस्कृति और व्यक्तिगत स्वतंत्रता जैसे विचारों को युवा वर्ग तेजी से स्वीकार कर रहा है। इससे रिश्तों को देखने का नजरिया अधिक आधुनिक और व्यक्तिगत हुआ है।

4– करियर और महत्वाकांक्षा – कई प्रेरणादायक फिल्में युवाओं को अपने सपनों का पीछा करने की सीख देती हैं। इन फिल्मों के प्रभाव से युवाओं में खेल, संगीत, अभिनय, उद्यमिता और स्टार्टअप जैसे क्षेत्रों के प्रति आकर्षण बढ़ा है। सिनेमा उन्हें जोखिम लेने और आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है।

5– सामाजिक मुद्दों के प्रति जागरूकता – हिंदी सिनेमा समाज से जुड़े महत्वपूर्ण विषयों को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है। फिल्मों के माध्यम से युवाओं में लैंगिक समानता, शिक्षा का महत्व, पर्यावरण संरक्षण,

मानसिक स्वास्थ्य और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों के प्रति जागरूकता बढ़ी है। सिनेमा सामाजिक परिवर्तन का एक सशक्त माध्यम बन गया है।

डिजिटल मीडिया और युवाओं का व्यवहारिक परिवर्तन–

डिजिटल मीडिया के तीव्र विकास ने युवाओं के व्यवहार, सोचने के तरीके और सामाजिक संबंधों में उल्लेखनीय परिवर्तन किए हैं। इंटरनेट और स्मार्ट उपकरणों के व्यापक उपयोग के कारण युवाओं की जीवनशैली अधिक आभासी और तकनीक–निर्भर होती जा रही है।

1– आभासी सामाजिकता – सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जैसे Instagram] Facebook vkSj WhatsApp ने युवाओं के संवाद के तरीकों को बदल दिया है। अब आमने–सामने बातचीत की अपेक्षा ऑनलाइन चौटिंग और वर्चुअल संवाद अधिक प्रचलित हो गए हैं। इससे संचार तेज हुआ है, लेकिन व्यक्तिगत संपर्क कम हुआ है।

2 –आत्म–अभिव्यक्ति के नए मंच – डिजिटल प्लेटफॉर्म ने युवाओं को अपनी प्रतिभा प्रदर्शित करने के नए अवसर प्रदान किए हैं। वे अपने विचार, कला, संगीत, नृत्य और अभिनय को ऑनलाइन साझा कर सकते हैं। ल्वनज्नइम और प्देजंहतंउ जैसे मंचों ने रचनात्मक युवाओं को पहचान दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

3– त्वरित प्रसिद्धि की चाह – डिजिटल युग में रील्स, शॉर्ट वीडियो और वायरल ट्रेंड्स का प्रभाव तेजी से बढ़ा है। कम समय में अधिक लोकप्रियता पाने की इच्छा युवाओं को आकर्षित करती है। इससे वे लगातार नए और आकर्षक कंटेंट बनाने के लिए प्रेरित होते हैं।

4 –मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव – डिजिटल दुनिया का अत्यधिक उपयोग युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकता है। ऑनलाइन तुलना, लाइक्स और फॉलोअर्स की प्रतिस्पर्धा, तथा ट्रोलिंग जैसी समस्याएँ तनाव, चिंता और अवसाद को बढ़ा सकती हैं। आभासी दुनिया में अधिक समय बिताने से वास्तविक सामाजिक संबंध भी प्रभावित होते हैं।

5– सूचना का अतिप्रवाह – इंटरनेट पर अत्यधिक सामग्री की उपलब्धता के कारण युवाओं का ध्यान आसानी से भटकता है। लगातार डिजिटल सामग्री देखने से उनकी एकाग्रता और अध्ययन क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। जानकारी की अधिकता कभी–कभी मानसिक थकान भी उत्पन्न करती है।

सकारात्मक प्रभाव–

डिजिटल मीडिया और सिनेमा के विकास ने युवाओं के जीवन में अनेक सकारात्मक परिवर्तन लाए हैं। इन माध्यमों ने न केवल मनोरंजन प्रदान किया है, बल्कि शिक्षा, जागरूकता और रोजगार के नए अवसर भी उपलब्ध कराए हैं।

1– सामाजिक जागरूकता में वृद्धि – डिजिटल मीडिया और फिल्मों के माध्यम से युवाओं को समाज से जुड़े महत्वपूर्ण विषयों की जानकारी मिलती है। वे सामाजिक समस्याओं, अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति अधिक जागरूक होते जा रहे हैं।

2– वैश्विक संस्कृति से परिचय– इंटरनेट और ऑनलाइन प्लेटफॉर्म ने युवाओं को विभिन्न देशों की संस्कृति, परंपराओं और जीवनशैलियों से परिचित कराया है। इससे उनका दृष्टिकोण व्यापक हुआ है और वे वैश्विक सोच विकसित कर पा रहे हैं।

3 – रचनात्मकता और नवाचार को प्रोत्साहन – डिजिटल साधनों की सहायता से युवा अपने विचारों को नए और रचनात्मक रूप में प्रस्तुत कर पा रहे हैं। फिल्म निर्माण, वीडियो संपादन, ग्राफिक डिजाइन, संगीत निर्माण और लेखन जैसे क्षेत्रों में नवाचार को बढ़ावा मिला है।

4 –सामाजिक मुद्दों पर खुली चर्चा– डिजिटल प्लेटफॉर्म ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मजबूत किया है। युवा अब शिक्षा, लैंगिक समानता, पर्यावरण संरक्षण और मानसिक स्वास्थ्य जैसे विषयों पर खुलकर अपनी राय व्यक्त करते हैं और चर्चाओं में भाग लेते हैं।

5– नई रोजगार संभावनाएँ– डिजिटल क्रांति के कारण रोजगार के अनेक नए क्षेत्र विकसित हुए हैं। कंटेंट क्रिएशन, डिजिटल मार्केटिंग, एनीमेशन, फिल्म निर्माण, सोशल मीडिया प्रबंधन और ऑनलाइन शिक्षा जैसे क्षेत्रों में युवाओं के लिए नए करियर अवसर उत्पन्न हुए हैं।

नकारात्मक प्रभाव–

1 –उपभोक्तावाद में वृद्धि – आधुनिक मीडिया और विज्ञापन लोगों को अनावश्यक वस्तुएँ खरीदने के लिए प्रेरित करते हैं। इससे जरूरतों की जगह इच्छाएँ बढ़ती हैं और व्यक्ति भौतिकवादी बनता जाता है।

2 – पारिवारिक संवाद में कमी– मोबाइल, टीवी और सोशल मीडिया के अत्यधिक उपयोग से परिवार के सदस्यों के बीच बातचीत कम हो गई है। लोग साथ बैठकर समय बिताने की बजाय स्क्रीन पर अधिक समय देते हैं।

3– हिंसा और आक्रामकता का प्रभाव– फिल्मों, टीवी कार्यक्रमों और वीडियो गेम्स में बढ़ती हिंसा का बच्चों और युवाओं के व्यवहार पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। वे आक्रामक व्यवहार को सामान्य मानने लगते हैं।

4– सांस्कृतिक मूल्यों का क्षरण– पाश्चात्य संस्कृति के अत्यधिक प्रभाव से पारंपरिक रीति–रिवाज, भाषा और नैतिक मूल्य धीरे–धीरे कमजोर हो रहे हैं। लोग अपनी संस्कृति से दूर होते जा रहे हैं।

5–डिजिटल लत और समय की बर्बादी– इंटरनेट, सोशल मीडिया और ऑनलाइन गेम्स की लत से लोग अपने महत्वपूर्ण कार्यों, पढ़ाई और जिम्मेदारियों पर ध्यान नहीं दे पाते, जिससे समय और उत्पादकता दोनों की हानि होती है।

हिंदी सिनेमा, डिजिटल मीडिया और सांस्कृतिक द्वंद्व–

आज का भारतीय युवा पारंपरिक मूल्यों और आधुनिक जीवनशैली के बीच संतुलन बनाने का प्रयास कर रहा है। एक ओर परिवार, संस्कार और परंपराएँ उसके जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, वहीं दूसरी ओर व्यक्तिगत स्वतंत्रता, आधुनिक सोच और नए जीवन के तरीके भी उसे आकर्षित करते हैं। हिंदी सिनेमा और डिजिटल मीडिया इस सांस्कृतिक द्वंद्व को प्रभावी रूप से प्रस्तुत करते हैं। फिल्मों और वेब सामग्री में पारंपरिक पारिवारिक भावनाओं के साथ–साथ आधुनिक विचारधाराओं को भी दिखाया जाता है। इसका युवाओं की सोच, व्यवहार और जीवनशैली पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

इस प्रकार, सिनेमा और डिजिटल माध्यम न केवल मनोरंजन के साधन हैं, बल्कि वे युवाओं के सांस्कृतिक दृष्टिकोण और जीवन मूल्यों को भी प्रभावित करते हैं।

केस अध्ययन (उदाहरण)–

1– युवा प्रेरणा और शिक्षा– 3 Idiots जैसी फिल्मों ने पारंपरिक शिक्षा प्रणाली पर सवाल उठाए। इस प्रकार की कहानियाँ युवाओं को अपनी रुचि, प्रतिभा और क्षमता के अनुसार करियर चुनने के लिए प्रेरित करती हैं। वे यह संदेश देती हैं कि केवल अंक ही सफलता का मापदंड नहीं हैं।

2– महिला सशक्तिकरण– Dangal ने बेटियों को खेलों में आगे बढ़ने और अपने सपनों को पूरा करने की प्रेरणा दी। यह कहानी दर्शाती है कि अवसर और प्रोत्साहन मिलने पर महिलाएँ किसी भी क्षेत्र में उत्कृष्ट प्रदर्शन कर सकती हैं। साथ ही, यह लैंगिक समानता का सशक्त संदेश देती है।

3– सामाजिक समानता– Article 15 जैसी फिल्मों ने समाज में व्याप्त जातिगत भेदभाव और असमानता जैसे संवेदनशील विषयों को उजागर किया। ऐसी प्रस्तुतियाँ युवाओं में सामाजिक जागरूकता बढ़ाती हैं और समानता व न्याय के प्रति सकारात्मक सोच विकसित करती हैं।

शोध पद्धति (संक्षेप में) – यह शोध द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। पुस्तकों, शोध पत्रों, समाचार लेखों, फिल्म समीक्षाओं और डिजिटल मीडिया रिपोर्टों का अध्ययन करके विश्लेषण किया गया है।

निष्कर्ष –हिंदी सिनेमा और डिजिटल युग ने युवाओं के सामाजिक व्यवहार, सोच और जीवनशैली में व्यापक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। आज का युवा पहले की तुलना में अधिक जागरूक, आत्मविश्वासी, अभिव्यक्तिशील और महत्वाकांक्षी बन गया है। वे सामाजिक, शैक्षणिक और समसामयिक मुद्दों पर खुलकर अपने विचार प्रकट करते हैं तथा पारंपरिक मान्यताओं को तर्क के आधार पर परखने का प्रयास करते हैं।

हालाँकि, इन सकारात्मक परिवर्तनों के साथ कुछ चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। डिजिटल माध्यमों के अत्यधिक उपयोग से युवाओं में लत की समस्या बढ़ रही है। आभासी संबंधों की बढ़ती प्रवृत्ति वास्तविक सामाजिक संबंधों को प्रभावित कर रही है। इसके अतिरिक्त सांस्कृतिक असंतुलन, समय की बर्बादी और मानसिक तनाव जैसी समस्याएँ भी देखने को मिल रही हैं।

अतः आवश्यक है कि सिनेमा और डिजिटल मीडिया का उपयोग संतुलित, सजग और सकारात्मक दिशा में किया जाए। शैक्षणिक संस्थानों, परिवारों और नीति–निर्माताओं को समन्वय स्थापित कर युवाओं का उचित मार्गदर्शन करना चाहिए, ताकि वे तकनीक और मीडिया का उपयोग अपने रचनात्मक, बौद्धिक और सामाजिक विकास के लिए प्रभावी रूप से कर सकें।

सुझाव–

1. शैक्षणिक पाठ्यक्रम में मीडिया साक्षरता को शामिल किया जाना चाहिए ताकि विद्यार्थी मीडिया के प्रभाव को समझ सकें और डिजिटल साधनों का जिम्मेदारीपूर्वक उपयोग करना सीखें।
2. युवाओं को डिजिटल संतुलन और मानसिक स्वास्थ्य के प्रति जागरूक करना आवश्यक है, जिससे वे स्क्रीन समय को नियंत्रित कर सकें और तनाव व डिजिटल लत से बच सकें।
3. सामाजिक विषयों पर आधारित सार्थक फिल्मों और डिजिटल सामग्री को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, जो शिक्षा, समानता और नैतिक मूल्यों को बढ़ावा देती हों।
4. परिवारों में आपसी संवाद को बढ़ावा देना चाहिए ताकि युवाओं को उचित मार्गदर्शन और भावनात्मक सहयोग मिल सके।
5. सांस्कृतिक शिक्षा और पारंपरिक मूल्यों के संरक्षण पर ध्यान देना चाहिए, जिससे युवाओं में अपनी संस्कृति के प्रति सम्मान और जुड़ाव बना रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. आहूजा, राम (2014). भारतीय समाज. जयपुररू रावत पब्लिकेशन्स, पृ. 120
2. सिंह, योगेंद्र (2008). भारतीय समाज में सामाजिक परिवर्तन. नई दिल्लीरू रावत पब्लिकेशन्स, पृ. 85
3. दुबे, एस. सी. (1990). भारतीय समाज. नई दिल्लीरू नेशनल बुक ट्रस्ट, पृ. 57
4. गुप्ता, एम. एल. एवं शर्मा, डी. डी. (2011). समाजशास्त्र. आगरारू साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, पृ.120
5. जैन, पी. सी. (2016). समाजशास्त्र के सिद्धांत. नई दिल्लीरू ग्रंथ शिल्पी, पृ. 105
6. कुमार, कीर्ति (2012). जनसंचार माध्यम और समाज. नई दिल्लीरू राजकमल प्रकाशन, पृ. 147.
7. पांडेय, विनोद (2018). मीडिया, युवा और बदलता समाज. नई दिल्लीरू वाणी प्रकाशन, पृ. 80

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

लिव–इन रिलेशनशिप का भारतीय समाज पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. अखिलेश कुमार सरोज
असि. प्रोफेसर– समाजशास्त्र
डॉ .राजेश्वर सेवाश्रम महाविद्यालय ढिंढुई प्रतापगढ़।
संबद्ध– प्रो.राजेंद्र सिंह रज्जू भैया विश्वविद्यालय प्रयागराज (उ. प्र.)

सारांश –

आधुनिक समय में सामाजिक संबंधों और पारिवारिक संरचनाओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। लिव–इन रिलेशनशिप इन्हीं परिवर्तनों का एक उदाहरण है, जिसमें दो वयस्क व्यक्ति बिना विवाह के साथ रहते हैं। भारतीय समाज पारंपरिक रूप से विवाह संस्था को अत्यधिक महत्व देता रहा है, इसलिए लिव–इन रिलेशनशिप का उभरना एक महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन माना जा सकता है। प्रस्तुत शोध–पत्र सेकेंडरी डाटा के आधार पर भारतीय समाज में लिव–इन रिलेशनशिप की अवधारणा, उसके कारणों, सामाजिक प्रभावों तथा समाज की प्रतिक्रिया का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा, शहरीकरण, वैश्वीकरण और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की बढ़ती भावना इस प्रवृत्ति के प्रमुख कारण हैं।

कुंजीभूत शब्द– लिव–इन रिलेशनशिप, भारतीय समाज, विवाह संस्था, सामाजिक परिवर्तन, शहरीकरण, वैश्वीकरण, पारिवारिक संरचना, युवा संस्कृति, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, लैंगिक समानता, आधुनिक जीवनशैली,

भारतीय समाज में विवाह को एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था माना जाता है, जिसका संबंध केवल दो व्यक्तियों से ही नहीं बल्कि परिवार और समाज से भी होता है। परंपरागत भारतीय समाज में विवाह को स्थायी और पवित्र संबंध के रूप में देखा जाता रहा है। किन्तु आधुनिक समय में सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारण पारिवारिक संरचनाओं में भी बदलाव आने लगे हैं। शिक्षा के प्रसार, आर्थिक स्वतंत्रता, शहरीकरण और वैश्वीकरण के प्रभाव से युवाओं की सोच और जीवनशैली में परिवर्तन हुआ है।

इन्हीं परिवर्तनों के परिणामस्वरूप लिव–इन रिलेशनशिप जैसी नई सामाजिक व्यवस्था का उदय हुआ है। इस प्रकार के संबंधों में दो व्यक्ति बिना विवाह के एक साथ रहते हैं और जीवन के विभिन्न पहलुओं को साझा करते हैं। भारतीय समाज में यह अवधारणा अभी भी विवादास्पद मानी जाती है, क्योंकि यह पारंपरिक सामाजिक मूल्यों और विवाह संस्था से भिन्न है। इसलिए समाजशास्त्रीय दृष्टि से इस विषय का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है।

अध्ययन के उद्देश्य–

इस अध्ययन के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित है

1. भारतीय समाज में लिव–इन रिलेशनशिप की अवधारणा का अध्ययन करना।
2. लिव–इन रिलेशनशिप के उदय के सामाजिक कारणों का विश्लेषण करना।
3. भारतीय समाज और परिवार व्यवस्था पर इसके प्रभावों का अध्ययन करना।
4. समाज में इसके प्रति विभिन्न दृष्टिकोणों को समझना।

अनुसंधान पद्धति –

यह अध्ययन सेकेंडरी डाटा (Secondary Data) पर आधारित है। इस अध्ययन में निम्नलिखित स्रोतों से प्राप्त जानकारी का उपयोग किया गया हैकृ समाजशास्त्र से संबंधित पुस्तकें , शोध–पत्र और जर्नल, समाचार पत्र और पत्रिकाएँ, सरकारी और शैक्षणिक रिपोर्ट, इंटरनेट आधारित शैक्षणिक स्रोत। इन स्रोतों के आधार पर लिव–इन रिलेशनशिप से संबंधित जानकारी का विश्लेषण किया गया है।

लिव–इन रिलेशनशिप की अवधारणा–

लिव–इन रिलेशनशिप एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जिसमें दो वयस्क व्यक्ति बिना औपचारिक विवाह के एक साथ रहकर अपना जीवन साझा करते हैं। इस प्रकार के संबंध में पुरुष और महिला एक ही घर में रहते हुए दैनिक जीवन की जिम्मेदारियों, भावनाओं और कई बार आर्थिक संसाधनों को भी साझा करते हैं। यह संबंध पारंपरिक विवाह से भिन्न होता है, क्योंकि इसमें सामाजिक, धार्मिक या कानूनी अनुष्ठानों की अनिवार्यता नहीं होती।

आधुनिक समाज में लिव–इन रिलेशनशिप को एक नए प्रकार के संबंध के रूप में देखा जा रहा है, जो व्यक्तिगत पसंद और स्वतंत्रता पर आधारित होता है। इसमें दोनों व्यक्ति आपसी सहमति और समझ के आधार पर साथ रहने का निर्णय लेते हैं। कई बार लोग विवाह से पहले एक–दूसरे को बेहतर तरीके से समझने के उद्देश्य से भी इस प्रकार के संबंध को अपनाते हैं।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह व्यवस्था सामाजिक परिवर्तन का संकेत देती है। शिक्षा के प्रसार, शहरीकरण, आर्थिक स्वतंत्रता और वैश्वीकरण के प्रभाव से युवाओं की सोच और जीवनशैली में बदलाव आया है। इसके परिणामस्वरूप पारंपरिक संबंधों के साथ–साथ नए प्रकार के संबंध भी विकसित हो रहे हैं। लिव–इन रिलेशनशिप इसी परिवर्तन की एक अभिव्यक्ति है। हालांकि भारतीय समाज में इस व्यवस्था को लेकर विभिन्न मत पाए जाते हैं। कुछ लोग इसे आधुनिक जीवनशैली और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का प्रतीक मानते हैं, जबकि अन्य इसे पारंपरिक सामाजिक मूल्यों और विवाह संस्था के लिए चुनौती के रूप में देखते हैं। इसके बावजूद धीरे–धीरे समाज के कुछ हिस्सों में इस प्रकार के संबंधों के प्रति जागरूकता और चर्चा बढ़ रही है।

इस प्रकार लिव–इन रिलेशनशिप को सामाजिक परिवर्तनों, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और आधुनिक जीवनशैली के संदर्भ में समझा जा सकता है। यह संबंध समाज में उभरती नई सामाजिक प्रवृत्तियों को दर्शाता है और परिवार तथा विवाह से जुड़े पारंपरिक विचारों के साथ एक नए विमर्श को जन्म देता है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण–

लिव–इन रिलेशनशिप जैसी समकालीन सामाजिक प्रवृत्तियों को समझने के लिए विभिन्न समाजशास्त्रीय सिद्धांत महत्वपूर्ण आधार प्रदान करते हैं। ये सिद्धांत सामाजिक परिवर्तन, लैंगिक संबंधों तथा व्यक्तियों के पारस्परिक व्यवहार के विभिन्न आयामों को स्पष्ट करते हैं।

1. आधुनिकीकरण सिद्धांत– आधुनिकीकरण सिद्धांत के अनुसार समाज पारंपरिक संरचनाओं से आधुनिक संरचनाओं की ओर क्रमिक रूप से विकसित होता है। औद्योगीकरण, शहरीकरण, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, शिक्षा का प्रसार तथा आर्थिक विकास इस प्रक्रिया के प्रमुख कारक माने जाते हैं। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप

सामाजिक संस्थाओं, पारिवारिक संरचनाओं और जीवन मूल्यों में भी परिवर्तन दिखाई देता है। पारंपरिक समाजों में विवाह को स्थायी और अनिवार्य सामाजिक संस्था के रूप में स्वीकार किया जाता रहा है, जबकि आधुनिक समाजों में व्यक्तिगत स्वतंत्रता, आत्मनिर्णय और वैकल्पिक जीवन–शैलियों को अधिक महत्व मिलने लगा है। इस संदर्भ में लिव–इन रिलेशनशिप को सामाजिक संरचना में हो रहे व्यापक परिवर्तन का परिणाम माना जा सकता है, जहाँ व्यक्ति पारंपरिक वैवाहिक बंधनों के स्थान पर सहमति और समानता पर आधारित संबंधों को अपनाने लगे हैं।

2. नारीवादी दृष्टिकोण– नारीवादी दृष्टिकोण समाज में लैंगिक असमानता, शक्ति संरचना और पितृसत्तात्मक व्यवस्था का विश्लेषण करता है। इस विचारधारा के अनुसार पारंपरिक विवाह संस्था प्रायः पुरुष–प्रधान सामाजिक संरचनाओं से प्रभावित रही है, जहाँ महिलाओं पर सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रतिबंध अधिक देखे जाते हैं।

लिव–इन रिलेशनशिप को नारीवादी परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की स्वायत्तता और वैयक्तिक स्वतंत्रता से जोड़कर देखा जाता है। इस प्रकार के संबंधों में महिलाओं को निर्णय लेने की अधिक स्वतंत्रता, संबंधों में समान भागीदारी तथा व्यक्तिगत आकांक्षाओं को प्राथमिकता देने का अवसर मिल सकता है। इसके अतिरिक्त, यह व्यवस्था महिलाओं को पारंपरिक वैवाहिक भूमिकाओं और सामाजिक दबावों से आंशिक रूप से मुक्त करने की क्षमता रखती है।

3. प्रतीकात्मक अंतःक्रिया सिद्धांत– प्रतीकात्मक अंतःक्रिया सिद्धांत सामाजिक जीवन को व्यक्तियों के दैनिक व्यवहार, पारस्परिक अंतःक्रियाओं और प्रतीकों के माध्यम से समझने पर बल देता है। इस सिद्धांत के अनुसार समाज कोई स्थिर संरचना नहीं, बल्कि व्यक्तियों के निरंतर सामाजिक संपर्क और अर्थ–निर्माण की प्रक्रिया का परिणाम है। लिव–इन रिलेशनशिप के संदर्भ में यह सिद्धांत स्पष्ट करता है कि संबंधों का स्वरूप केवल सामाजिक नियमों से निर्धारित नहीं होता, बल्कि साझेदारों के बीच होने वाली दैनिक अंतःक्रियाएँ, आपसी समझ, भूमिकाओं की व्याख्या और संबंधों को दिए गए व्यक्तिगत अर्थ अधिक महत्वपूर्ण होते हैं। इस प्रकार, लिव–इन संबंध पारंपरिक वैवाहिक मान्यताओं से हटकर व्यक्तियों द्वारा निर्मित वैकल्पिक सामाजिक वास्तविकता को दर्शाते हैं।

लिव–इन रिलेशनशिप के उदय के कारण–

भारतीय समाज में लिव–इन रिलेशनशिप की बढ़ती प्रवृत्ति अनेक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का परिणाम है। आधुनिक जीवनशैली, व्यक्तिवादी दृष्टिकोण तथा पारंपरिक मान्यताओं में परिवर्तन ने वैकल्पिक संबंधों की स्वीकृति को बढ़ावा दिया है। इसके प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं

1. शिक्षा का प्रसार और आधुनिक सोच– शिक्षा के व्यापक प्रसार ने युवाओं की सोच को अधिक तार्किक, वैज्ञानिक और प्रगतिशील बनाया है। शिक्षित वर्ग पारंपरिक सामाजिक मान्यताओं को बिना प्रश्न स्वीकार करने के बजाय वैकल्पिक जीवन–शैलियों पर विचार करने लगा है। आधुनिक शिक्षा व्यक्तिगत अधिकारों, लैंगिक समानता और स्वतंत्र निर्णय लेने की भावना को सुदृढ़ करती है, जिससे लिव–इन रिलेशनशिप जैसे संबंधों की स्वीकृति बढ़ती है।

2. शहरीकरण और नई जीवनशैली – शहरीकरण ने सामाजिक संरचना और पारिवारिक स्वरूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। महानगरीय जीवन में व्यक्तियों की जीवनशैली अधिक स्वतंत्र, व्यस्त और निजी होती है। संयुक्त परिवारों की अपेक्षा एकल परिवारों की वृद्धि तथा सामाजिक निगरानी में कमी ने युवाओं को अपनी

पसंद के अनुसार जीवन जीने की स्वतंत्रता प्रदान की है। इस परिवेश में लिव–इन रिलेशनशिप को एक सुविधाजनक और व्यावहारिक विकल्प के रूप में देखा जाने लगा है।

3. आर्थिक स्वतंत्रता– आर्थिक आत्मनिर्भरता लिव–इन रिलेशनशिप के बढ़ने का एक महत्वपूर्ण कारक है। जब महिलाएँ और पुरुष दोनों आर्थिक रूप से स्वतंत्र होते हैं, तो वे पारंपरिक विवाह संस्था पर पूर्णतः निर्भर नहीं रहते। विशेषकर कार्यरत महिलाओं के लिए आर्थिक सशक्तिकरण ने संबंधों में समानता और स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता को बढ़ाया है। परिणामस्वरूप, वैवाहिक बंधन के बिना भी सहजीवन संभव हो पाता है।

4. विवाह से पूर्व साथी को समझने की इच्छा– आधुनिक युवाओं में विवाह को आजीवन बंधन के रूप में देखने की प्रवृत्ति के साथ–साथ यह इच्छा भी बढ़ी है कि वे अपने संभावित जीवनसाथी को बेहतर ढंग से समझ सकें। लिव–इन रिलेशनशिप को कई लोग आपसी अनुकूलता, व्यवहार, विचारों और जीवनशैली को परखने के अवसर के रूप में देखते हैं। इससे भविष्य में वैवाहिक जीवन में उत्पन्न होने वाले मतभेदों की संभावना कम हो सकती है।

5. व्यक्तिगत स्वतंत्रता और आत्मनिर्णय– आधुनिक समाज में व्यक्तिवाद की भावना सुदृढ़ हुई है, जिसमें व्यक्ति अपनी इच्छाओं, प्राथमिकताओं और जीवन–लक्ष्यों को महत्व देता है। युवा पीढ़ी पारंपरिक सामाजिक दबावों की अपेक्षा व्यक्तिगत संतुष्टि और स्वतंत्रता को अधिक महत्व देती है। लिव–इन रिलेशनशिप व्यक्तियों को बिना सामाजिक या धार्मिक औपचारिकताओं के संबंध स्थापित करने का विकल्प प्रदान करता है, जिससे आत्मनिर्णय की भावना को बल मिलता है।

भारतीय समाज पर लिव–इन रिलेशनशिप के प्रभाव–

भारतीय समाज में लिव–इन रिलेशनशिप एक उभरती हुई सामाजिक व्यवस्था है, जो पारंपरिक विवाह संस्था के समानांतर विकसित हो रही है। यह व्यवस्था सामाजिक संरचना, पारिवारिक संबंधों, सांस्कृतिक मूल्यों और व्यक्तिगत जीवनशैली को विभिन्न रूपों में प्रभावित करती है। इसके प्रभावों को सकारात्मक और नकारात्मक दोनों दृष्टियों से समझा जा सकता है।

सकारात्मक प्रभाव –

1. व्यक्तिगत स्वतंत्रता और आत्मनिर्णय को प्रोत्साहन– लिव–इन रिलेशनशिप व्यक्तियों को अपनी पसंद के अनुसार जीवन जीने और संबंध स्थापित करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। इसमें पारंपरिक सामाजिक बंधनों की अपेक्षा कम औपचारिकताएँ होती हैं, जिससे व्यक्ति अपने निजी निर्णय स्वयं ले सकते हैं।

2. लैंगिक समानता को बढ़ावा – इस प्रकार के संबंधों में पुरुष और महिला के बीच पारंपरिक भूमिकाओं का दबाव अपेक्षाकृत कम होता है। दोनों साझेदार आर्थिक, सामाजिक और भावनात्मक स्तर पर समान भागीदारी निभाते हैं, जिससे संबंध अधिक संतुलित और सहयोगात्मक बनते हैं।

3. विवाह पूर्व अनुकूलता की जाँच का अवसर – लिव–इन रिलेशनशिप व्यक्तियों को एक–दूसरे के स्वभाव, आदतों, व्यवहार और जीवनशैली को निकटता से समझने का अवसर देता है। इससे दीर्घकालिक संबंधों में सामंजस्य स्थापित करने में सहायता मिलती है।

4. पारिवारिक दबावों में कमी – पारंपरिक विवाह में कई बार परिवार और समाज की अपेक्षाएँ व्यक्तियों पर दबाव उत्पन्न करती हैं। लिव–इन रिलेशनशिप में व्यक्ति अपेक्षाकृत स्वतंत्र वातावरण में संबंध स्थापित कर सकते हैं, जिससे मानसिक तनाव कम हो सकता है।

5. बदलती सामाजिक सोच का संकेत – लिव–इन रिलेशनशिप समाज में आधुनिकता, व्यक्तिवाद और वैकल्पिक जीवन–शैलियों की स्वीकृति को दर्शाता है। यह सामाजिक परिवर्तन और नए सांस्कृतिक मूल्यों के विकास का प्रतीक माना जा सकता है।

नकारात्मक प्रभाव –

1. पारंपरिक वैवाहिक संस्था पर प्रभाव –

भारतीय समाज में विवाह को एक स्थायी और पवित्र संस्था माना जाता है। लिव–इन रिलेशनशिप की बढ़ती प्रवृत्ति इस पारंपरिक व्यवस्था को चुनौती देती है, जिससे सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन देखा जा सकता है।

2. पारिवारिक संरचना में अस्थिरता –

लिव–इन रिलेशनशिप में संबंधों की स्थायित्व–भावना अपेक्षाकृत कम हो सकती है। इससे पारिवारिक संरचना और दीर्घकालिक पारिवारिक दायित्वों के निर्वहन में कठिनाई उत्पन्न हो सकती है।

3. सामाजिक अस्वीकृति –

समाज का एक बड़ा वर्ग अभी भी लिव–इन रिलेशनशिप को पारंपरिक मान्यताओं के विरुद्ध मानता है। ऐसे संबंधों में रहने वाले व्यक्तियों को सामाजिक आलोचना और पारिवारिक विरोध का सामना करना पड़ सकता है।

4. कानूनी जटिलताएँ लिव–

इन रिलेशनशिप विवाह की तरह स्पष्ट कानूनी ढाँचे में पूर्णतः परिभाषित नहीं होते। संपत्ति अधिकार, उत्तराधिकार, संतान की वैधानिक स्थिति तथा अलगाव की स्थिति में कानूनी प्रक्रियाएँ जटिल हो सकती हैं।

5. भावनात्मक असुरक्षा की संभावना –

चूँकि लिव–इन संबंध औपचारिक वैवाहिक बंधन से मुक्त होते हैं, इसलिए संबंधों में प्रतिबद्धता की कमी देखी जा सकती है। संबंध विच्छेद की स्थिति में भावनात्मक तनाव, असुरक्षा और मानसिक आघात की संभावना बढ़ सकती है।

समाज की प्रतिक्रिया –

भारतीय समाज में लिव–इन रिलेशनशिप के प्रति प्रतिक्रियाएँ एकरूप नहीं हैं, बल्कि सामाजिक संरचना, आयु–समूह, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तथा निवास–क्षेत्र के आधार पर भिन्न–भिन्न रूपों में देखने को मिलती हैं। यह विषय पारंपरिक सामाजिक मान्यताओं और आधुनिक जीवनशैली के बीच उभरते वैचारिक परिवर्तन को भी प्रतिबिंबित करता है।

1. युवा वर्ग की दृष्टि – युवा पीढ़ी का एक बड़ा वर्ग लिव–इन रिलेशनशिप को आधुनिक जीवनशैली, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और वैकल्पिक संबंध व्यवस्था के रूप में स्वीकार करता है। शिक्षित और आत्मनिर्भर युवा इसे पारस्परिक समझ, समानता और स्वायत्त निर्णय की अभिव्यक्ति मानते हैं। उनके लिए यह व्यवस्था पारंपरिक वैवाहिक बंधनों से पूर्व संबंधों को समझने का एक व्यावहारिक माध्यम भी है।

2. शहरी समाज का दृष्टिकोण – महानगरीय और शहरी क्षेत्रों में सामाजिक संरचना अपेक्षाकृत उदार और परिवर्तनशील होती है। यहाँ जीवनशैली अधिक व्यक्तिगत, व्यावसायिक रूप से व्यस्त तथा स्वतंत्र होती है। सामाजिक निगरानी अपेक्षाकृत कम होने तथा आधुनिक विचारधाराओं के प्रभाव के कारण शहरी समाज के कुछ वर्ग लिव–इन रिलेशनशिप को सामाजिक परिवर्तन के स्वाभाविक परिणाम के रूप में देखते हैं।

3. **पारंपरिक समाज की प्रतिक्रिया –**

पारंपरिक सामाजिक समूह लिव–इन रिलेशनशिप को स्थापित वैवाहिक मान्यताओं और सांस्कृतिक मूल्यों के विपरीत मानते हैं। उनके अनुसार विवाह केवल दो व्यक्तियों का नहीं, बल्कि दो परिवारों का सामाजिक और धार्मिक बंधन है। इस दृष्टिकोण से लिव–इन संबंधों को सामाजिक अनुशासन और पारिवारिक व्यवस्था के लिए चुनौती के रूप में देखा जाता है।

4. ग्रामीण क्षेत्रों का दृष्टिकोण –

ग्रामीण समाज में पारंपरिक रीति–रिवाज, धार्मिक मान्यताएँ और सामुदायिक नियंत्रण अधिक प्रभावी होते हैं। वहाँ लिव–इन रिलेशनशिप को प्रायः सामाजिक मर्यादाओं के विरुद्ध समझा जाता है। सामाजिक प्रतिष्ठा, पारिवारिक सम्मान और सामूहिक जीवन–पद्धति के कारण ऐसे संबंधों को व्यापक स्वीकृति नहीं मिल पाती।

6. मीडिया और फिल्मों की भूमिका–

जनसंचार माध्यमों ने लिव–इन रिलेशनशिप को सामाजिक विमर्श का महत्वपूर्ण विषय बनाने में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। टेलीविजन, समाचार माध्यमों, डिजिटल प्लेटफॉर्म और सिनेमा के द्वारा इस विषय को व्यापक रूप से प्रस्तुत किया गया है। फिल्मों और धारावाहिकों में ऐसे संबंधों का चित्रण समाज में जागरूकता, बहस और विचार–विमर्श को बढ़ावा देता है, जिससे लोगों की धारणाओं में धीरे–धीरे परिवर्तन देखा जा सकता है।

निष्कर्ष –

प्रस्तुत अध्ययन के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि लिव–इन रिलेशनशिप भारतीय समाज में उभरते सामाजिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण संकेतक है। यह प्रवृत्ति विशेष रूप से युवा पीढ़ी की बदलती मानसिकता, वैयक्तिक स्वतंत्रता की बढ़ती आकांक्षा तथा आधुनिक जीवनशैली की स्वीकृति को प्रतिबिंबित करती है। पारंपरिक वैवाहिक संस्था के समानांतर विकसित यह व्यवस्था सामाजिक संबंधों की बदलती प्रकृति को दर्शाती है।

अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि शिक्षा का प्रसार, शहरीकरण, आर्थिक आत्मनिर्भरता तथा वैश्विक सांस्कृतिक प्रभावों ने इस प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन कारकों ने व्यक्तियों को पारंपरिक सामाजिक बंधनों से परे जाकर वैकल्पिक संबंधों के प्रति विचार करने के लिए प्रेरित किया है।

यद्यपि लिव–इन रिलेशनशिप के प्रति समाज के कुछ वर्गों में स्वीकृति बढ़ी है, तथापि पारंपरिक सामाजिक मूल्यों, धार्मिक मान्यताओं और सांस्कृतिक परंपराओं के कारण इसकी व्यापक स्वीकृति अभी सीमित है। परिणामस्वरूप, समाज में इस विषय को लेकर वैचारिक विविधता और मतभेद की स्थिति विद्यमान है।

भविष्य की दृष्टि से यह संभावना व्यक्त की जा सकती है कि सामाजिक चेतना, शिक्षा के स्तर और आधुनिक मूल्यों के प्रसार के साथ समाज के दृष्टिकोण में क्रमिक परिवर्तन होगा। ऐसी स्थिति में लिव–इन रिलेशनशिप को सामाजिक संरचना के एक वैकल्पिक रूप के रूप में अधिक स्वीकार्यता मिल सकती है।

अतः समाज के लिए यह आवश्यक है कि वह परंपरागत सांस्कृतिक मूल्यों और आधुनिक जीवन दृष्टि के मध्य संतुलन स्थापित करे। सामाजिक स्थिरता, पारिवारिक व्यवस्था तथा सांस्कृतिक निरंतरता को बनाए रखते हुए व्यक्तियों की स्वतंत्रता, समानता और गरिमा का सम्मान किया जाना चाहिए। यही संतुलित दृष्टिकोण सामाजिक समरसता और प्रगतिशील परिवर्तन दोनों को सुनिश्चित कर सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Ahmady] K. (2020) House with Open Door: A Comprehensive Study on White Marriage in Iran- लंदन: Mehri Publication- पृ- 115-
2. Brooks] A- (2020)- Love and Intimacy in Contemporary Society: Love Beyond the Global City- न्यूयॉर्क Routledge- पृ. 89.
3. Ansari] A-] & Klinenberg] E- (2015)- Modern Romance- न्यूयॉर्क Penguin Press- पृ. 169.
4. Brake] E- (2016)- After Marriage: Rethinking Marital Relationships- ऑक्सफोड: Oxford University Press- पृ. 115.
5. अधार, एन. डी. (2012). Living In: The Story of Love] Marriage and Relationships- नई दिल्ली: रूपा पब्लिकेशंस. पृ. 62.
6. मुतरेजा, पी., एवं अन्य (2018). Courtly Love in Modern India: Transitions and Transformations- नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशंस. पृ. 140.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
DOI: ***10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

बाल भिक्षुकों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति : एक अवलोकन

डॉ. धर्मेन्द्र कुमार
नेट, पी–एच.डी., समाजशास्त्र
kashyapdk282@gmail.com

सारांश –

अक्सर हम देश एवं विदेश की पत्रिकाओं एवं समाचार पत्रों में बाल भिक्षावृत्ति के नग्न तस्वीरें का अवलोकन करते हैं। विदेशियों द्वारा प्रस्तुत किए गए बाल भिक्षुक के चित्र यद्यपि अतिरंजनापुर्ण हो सकते हैं। यद्यपि इस तत्व को नकारा नहीं जा सकता है कि मंदिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों, पवित्र नदियों के घाटों, अन्य पवित्र स्थानो, रेलवे स्टेशनों, बस स्टॉपों पर तिर्थ स्थलों तथा मेलो आदि में बाल भिक्षुको की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। आरंभिक काल से मानव प्राणियों के दुखों के प्रति सदैव दया एवं सहानुभूति प्रकट करता रहा है असहाय, निर्बल, पीड़ित, बेबस एवं लाचार व्यक्तियों एवं मनुष्यों में सदैव आध्यात्मिक एवं नीतिपरक मूल्यों को प्रस्फुटित करते रहें है। मनुष्यों में प्रस्फुटित आध्यात्मिक एवं नीतिपरक अतः प्रेरणाएँ दरिद्र समूहों की समस्याओं का निराकरण करने के लिए उन दिनों पर्याप्त थी जबकि दरिद्र समूहों की समस्याएँ थी तथा जबकि दान देने की क्रिया केवल दरिद्र असहाय बेबस लोगों से ही संबंधित थी किंतु आज इस चरण में भौतिकवादी युग में जबकि एक और शाश्वत आध्यात्मिक एवं नीतिपरक मूल्य का विघटन हो रहा है वहीं दूसरी ओर दरिद्र समूह की निरंतर बढ़ती हुई संख्याएं एवं समस्याएं मानवतावादी प्रवृत्तियों के लिए एक चुनौती स्वरूप है आज भिक्षा–वृत्ति एक लाभदायक व्यवसाय के रूप में मुखरित हो रही है भीख मांगने से पैसा आसानी से मिल जाता है और शाम को पैसा इतना मिल जाता है कि वह अपने परिवार के साथ भोजन कर सकते हैं बहुत से व्यक्तियों को मजदूरी करने पर भी इतना पैसा नहीं मिल पाता है और इसलिए लोग मेहनत के काम को करने से भीख मांगना अच्छा समझकर व्यवसाय को अपना लेते हैं कुछ पैसा लगाकर इस व्यवसाय में बड़ा लाभ उठाया जा सकता है बड़े–बड़े नगरों में ऐसे गिरोह हैं जो बालकों को इस व्यवसाय में घसीट कर बड़ा फायदा उठाते हैं जिससे बाल भिक्षओं की संख्या दिन–प्रति दिन बढ़ती जा रही है जिसके कारण इनकी सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति बहुत बुरी तरह प्रभावित हुई है।

मुख्य शब्द – भिक्षावृत्ति, बाल भिक्षुक, सामाजिक स्थिति, आर्थिक स्थिति।

शोध पत्र का उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययनों में बाल भिक्षुओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति के आकलन करने के उद्देश्य से इस शोध पत्र का निर्माण किया गया है इसके उद्देश्य निम्नलिखित हैं।

1. बाल भिक्षुओं के सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि का पता लगाना।

2. बाल भिक्षुकों के भिक्षुक बनने के संदर्भ में उन परिस्थितियों का पता लगाना जिससे बाध्य होकर बाल भिक्षुक अवैध सामाजिक तरीकों की अवहेलना करते हैं तथा जीवन के विपक्षगामी व आपराधिक उपसंस्कृत तरीके को अपना लेते हैं।
3. बाल भिक्षुक के सामुदायिक जीवन का अवलोकन करना।

प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक स्त्रोतो पर आधारित है।

परिचय – आदिकाल से ही विश्व की प्रत्येक समाज में भिक्षा अर्जन की प्रवृत्ति लोगों में किसी न किसी रूप में विद्यमान रही है इस संबंध में प्रारंभिक मानव–शास्त्रीयों, समाजशास्त्रियों एवं मिशनरियों का अनुमान था कि आदिम समाज में भिक्षा अर्जन की प्रवृत्ति नहीं पाई जाती थी क्योंकि उनके विश्व एवं व्यवहार भिक्षार्जन के वास्तविक स्वरूप साम्य नहीं रखते थे अनुसंधाता का दृढ़ विश्वास है की भिक्षा अर्जन संबंधित ऐसी घटनाएं आधार विहीन है। वास्तव में आदिम समाज से संबंधित साहित्य का सूचना अति सूक्ष्म एवं तार्किक विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि ऐसा कोई भी आदिम समाज एवं संस्कृति नहीं है जिसमें भीक्षर्जन की प्रवृत्ति एवं व्यवहार विद्यमान न हो भिक्षा मांगने का कार्य करती है यह लोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर आते जाते हैं जिससे कि पुलिस की पकड़ में ना आ सके अंधे लूले लंगड़े लोगों को दूसरे लोगों द्वारा सहायता दी जाती है प्रायः काल उन्हें भीख मांगने के स्थान पर छोड़ दिया जाता है और सांयकाल पुनः उन्हें वहां से अपने शरण स्थल पर पहुंचा दिया जाता है भीख मांगने के लिए भिखारी हाथ पांव एवं शरीर के अंगों को कृत्रिम तौर पर इस प्रकार से तैयार करते हैं कि टूटे–फूटे एवं अयोग्य एवं विकलांग दिखाई दे। कोड तथा कन्नूर में भिखारी ने अपनी यूनियन भी बनाई है उपयुक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि भारत में अब भिक्षावृत्ति एक व्यवसाय का रूप ग्रहण करते जा रहा है धर्म के आड़ में भी अब भिक्षा मांगने को एक पैसे का रूप दे दिया गया है यह स्थिति अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है और अभी तक ना तो हमारे देश के धार्मिक नेताओं, सामाजिक और राजनीतिक नेताओं ने भी इसके विरुद्ध आवाज उठाई है बात भिक्षावृत्ति की समस्या हो अथवा वयस्क भिक्षावृत्ति की समस्या हो दोनों ही समाज के लिए अभिशाप हैं इन दोनों समस्याओं के पीछे न केवल अपाराधियों के गिरोह है बल्कि से हित स्वार्थ भी हैं सामान्यतः बाल बाल–भिक्षओं के निम्नलिखित प्रकार हो सकते हैं।

1. प्रथम प्रकार के अंतर्गत उन बाल भिक्षुकों को समाविष्ट किया जा सकता है जो अपने माता–पिता के साथ भिक्षा मांगते हैं ऐसे परिवार में जितने भी स्थान मंदिरों, मस्जिदों, गिरजाघरो, गुरुद्वारों, मठों धर्मशालयों एवं अन्य धार्मिक स्थान पर ऐसे भिक्षुकों की भीड़ देखी जा सकती है।
2. द्वितीय प्रकार के अंतर्गत बाल भिक्षुकों को अन्तर्विष्ट किया जा सकता है जो अपने माता–पिता की सहायता करने के लिए भीख मांगते हैं।
3. तृतीय प्रकार के अंतर्गत उन बाल भिक्षुकों को सम्मिलित किया जा सकता है जो अपंग होते हैं तथा व्यावसायिक ठेकेदारों के लिए भीख मांगते हैं।
4. चतुर्थ प्रकार के अंतर्गत उन बाल भिक्षुकों को समाविष्ट किया जा सकता है जो किसी न किसी प्रकार के पारिवारिक व्यक्ति की स्थिति पारिवारिक तनाव एवं पारिवारिक भग्नता के परिणाम–स्वरुप अपने घर व परिवार का परित्याग कर अंतोगत्वा भिक्षावृत्ति अपना लेते हैं।
5. इस श्रेणी के अंतर्गत कुछ निर्धन या कंगाल माता–पिता गुप्त रूप से अपने बच्चों को संगठित गिरोह के मुखियाओं को कुछ रुपए में बेच देते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि इन अभाग्यशाली बाल भिक्षुकों की समस्या का सहानुभूति पूर्ण अध्ययन करने की माहिती आवश्यकता है ताकि उसके जीवन के बारे में सम्यक अबोध प्राप्त किया जा सके एवं इस राष्ट्रीय

समस्या का समाधान किया जा सके। बाल भिक्षा वृत्ति पर प्रतिबंध लगाना ही चाहिए और भी अच्छा होगा कि वयस्क भिक्षावृत्ति पर पूर्ण प्रतिबंध लगाया जाए यद्यपि भारत सरकार ने भिक्षावृत्ति उन्मूलन कानून पास कर दिया है यद्यपि यह उल्लेखनीय है कि कानून पूर्ण रूप से भिक्षावृत्ति की समस्याओं को सुलझा नहीं सकते केवल कानून बनाने अथवा शोरगुल मचाने से भिक्षुकों का कल्याण नहीं हो सकता इनमें कोई शंका नहीं है कि केवल दिखावे के कानून से ही लगभग 10 लाख मानवों की युगों पुरानी इस वृत्ति को दमन नहीं किया जा सकता इसलिए सारे मोर्चो पर आक्रमण करने वाला एक ठोस रचनात्मक कार्यक्रम बनाना होगा भागीरथ काम के लिए ऐसे समाज सेवकों को तैयार करना होगा जो उदत्त भावनाओं से प्रेरित एवं अनुक्रमाणित होकर भिक्षकों को पुनर्वासित करने में अपना योगदान दे सके। आज देश में लाखों लोग ऐसे हैं जो पीढ़ियों से भिक्षा मांगते हैं और भीख मांगना जिनका स्वभाव बन गया है कितने दुर्भाग्य की बात है कि इस भिक्षावृत्ति को लगभग हर धर्म से पोषण प्राप्त है तथा प्रत्येक धर्म में धार्मिक आयोजनों अथवा किसी अच्छे या पवित्र दिन में भिक्षा देना एक धार्मिक कर्तव्य समझा जाता है भिक्षावृत्ति के रोग पर जल्दी कोई राष्ट्रीय सहमति हो सकेगी इसकी संभावना बहुत कम है जब तक आर्थिक विकास के साथ भारतीय जनता का धार्मिक अभिमुखीकरण विद्यमान रहेगा तब तक भिक्षावृत्ति का निराकरण करना एक अत्यंत कठिन समस्या है लेकिन फिर भी आवश्यकता यह है कि समाज की जो व्यधकीय समस्याएं हैं उनका हम विरोध करें इस संदर्भ में यह भी आवश्यक है कि बाल भिक्षुकों के लिए हम स्वास्थ्य पुनर्वास व्यवस्था का निर्माण करें। भिक्षावृत्ति की समस्या का समाधान करने के लिए आज देश के सभी महानगरों एवं नगरों में बाल भिक्षुकों के लिए पुनर्वास की महती आवश्यकता है जो प्रशिक्षित कुशल एवं कर्मठ अधीक्षकों एवं सामाजिक कार्यकर्ताओं की देखरेख में कार्यरत हो। लेकिन यह तभी संभव है जबकि सरकार एक यथार्थवादी नीति का सूत्रपात करने में सफल हो यद्यपि हमारे देश में भिक्षावृत्ति की समस्या का समाधान करने के संदर्भ में अनेक भिक्षुक कार्य शाखाएं सरकार द्वारा स्थापित की गई हैं जहां सभी प्रकार के भिखारी को रखा जाता है तथापि यहां एक विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि बाल भिक्षकों को की समस्या के निवारण के संदर्भ में पृथक रूप से स्वतंत्र बाल भिक्षुक कार्यशालाओं की स्थापना अब तक नहीं की गई है देश के विभिन्न राज्यों में भिक्षावृत्ति अधिनियम के अंतर्गत जिन भिक्षुकों गृहों की स्थापना की गई है उनकी कार्यविधियों में निम्नलिखित कमियां पाई जाती हैं।

1. देश के समस्त भिक्षुक गृहों में सभी प्रकार के भिक्षुकों जैसे स्वास्थ्य भिक्षुक, विकलांग भिक्षुक, रोगग्रस्त भिक्षुक, मानसिक रोग से दुर्बल भिक्षुक एवं धार्मिक भिक्षुकों तथा बाल भिक्षुकों को एक साथ रखा जाता है क्योंकि सभी प्रकार के भिक्षुकों की समस्याएं भिन्न–भिन्न होती हैं बाल भिक्षुकों की वैयक्तिक रोग निर्णय पृथक्करण की सुविधाओं के अभाव में ठीक से नहीं हो पता है।
2. अधिकांश भिक्षुक गृह पुराने इमारत में बनाए जाते हैं जिससे भौतिक सुविधाओं के अभाव के कारण प्रत्येक भिक्षुक या बाल भिक्षुक की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर उसे प्रशिक्षित तथा उपचार की व्यवस्था नहीं हो पा रही है।
3. अधिकांश भिक्षुक गृहों में बुनाई, सिलाई, बढईगीरि के जो परंपरागत उद्यम संवासियों को सिखाए जाते हैं उनकी व्यावसायिक उपयोगिता कम है।
4. अधिकांश से भिक्षुक गृहों में न्यायालय द्वारा भेजे गए शिक्षकों का वैज्ञानिक वर्गीकरण इसलिए नहीं हो पाता क्योंकि परिविक्षा अधिकारियों एवं मनोवैज्ञानिक मनोचिकित्सकों शिक्षाविदों तथा दस्तकारी अध्यापकों की सेवाएं उचित मात्रा में उपलब्ध नहीं हो पाती हैं इस स्थिति में एक ग्रह केवल सुरक्षा गृहों की भांति ही काम करते हैं।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि विद्यमान भिक्षुक गृहों में सुधार लाने की आवश्यकता है तथा बाल भिक्षुक गृहों को स्थापित करने की महती आवश्यकता है इस दिशा में शारीरिक रूप से स्वस्थ बाल भिक्षुकों के कार्यगृह है तथा रोगी दुर्बल एवं शारीरिक वह मानसिक रूप से बाधित बाल भिक्षुकों के लिए विशेष प्रकार के सुविधा संपन्न गृहों की स्थापना करना राज्य सरकार का दायित्व होना चाहिए राज्य सरकार का यह उत्तरदायित्व है कि आर्थिक रूप से विपन्न ,बेबस, लाचार ,अनाथ ,विकलांग मानसिक रूप से अस्वस्थ एवं साधन रोग से पीड़ित लाखों बाल भिक्षुकों के कल्याणार्थ बाल भिक्षुक गृहों की स्थापना करें ,भले ही इस कार्य को करने में सरकार को अतिरिक्त आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़े।

प्रोफेसर मुखर्जी के शब्दों में यह गिरोह लोगों को प्रशिक्षण देते हैं कि कहां पर किस प्रकार भिक्षा मांगनी चाहिए बालकों को अंग भंग कर देते हैं जिससे कि गुजरने वाले लोग दया के वशीभूत होकर पैसा दे देते हैं संक्षेप में उन बालकों की देखभाल और कल्याण का ध्यान उसे गृह वाले ही रखते हैं भारत में भिक्षावृत्ति के संगठन शताब्दियों पुराने हैं जिनमें सरदार या पूंजीपति मध्यवर्ती और आलसी भीख मांगने वाले होते हैं इनका व्यापार दूर–दूर के कस्बों और गांव में फैला होता है इस संगठन के पूंजीपति और मध्यम वर्गी लोग भिखारी को रहने और मैले–फटे कपड़ों का प्रबंध करते हैं और दिनभर गली मोहल्ले में भीख मांग कर जब भिखारी अपने निवास स्थान पर लौटता है तो उसमें संगठन के सभी कार्यकर्ताओं का हिस्सा लगता है। **एस. बहादुर के अनुसार**, उप समितियां द्वारा किए गए एक अध्ययन से यह भयानक तथ्य सामने आया है यह देखा गया है कि भारत के सभी राज्यों में अपहरण करने वाले लोगों में व्यावसायिक दल विद्यमान पाए गए। ये बच्चों को उनके माता–पिता के पास से अपहरण कर लेते हैं या फुसला ले जाते हैं उसके बाद वे उनको अत्यंत अमानवीय रूप से अंग भंग करके उन्हें भिक्षावृत्ति मांगने पर मजबूर कर देते हैं।

शेखर तथा चार्ल्स न्यूटन ने अपने अध्ययन में भिखारी के संगठनों का उल्लेख किया है जो इनके लिए विवाह एवं अन्य उत्सवों का आयोजन करते हैं तथा वह भिक्षा को अनुचित नहीं समझते हैं। अश्वलायन **गृह सूत्र** ने भिक्षा के विषय में कहा है कि ब्रह्मचारी को ऐसे पुरुष या स्त्री से भिक्षा मांगनी चाहिए जो निषेध ना करें मांगते समय ब्रह्मचारी को कहना चाहिए महोदय भोजन दीजिए अन्य धर्म शास्त्रों में मैं भी इस संबंध में विस्तृत विवरण उपस्थित किया है।

साहित्य समीक्षा (Review of Literature) – बाल भिक्षावृत्ति की समस्या उतनी ही भयंकर है जितनी कि वयस्क भिक्षावृत्ति की समस्या। व्यस्क भिक्षावृत्ति की समस्या की भांति बाल भिक्षा वृत्ति की समस्या ने भी जनता का ध्यान आकर्षित किया है प्रत्येक दृष्टिकोण से बाल भिक्षावृत्ति एक समस्या है स्वयं की एक समस्या है इसके अंतर्गत बाल भिक्षुकों के जीवन की मालीनता एवं दरिद्रता उनकी आवश्यकता और बीमारी साथ ही उनकी अज्ञानता और शोषण सम्मिलित है यह तरक्की आश्रित है कि कुछ बाल भिक्षुक शिक्षा पूर्वक अपनी वृत्ति के रूप में भिक्षावृत्ति को अपना लेते हैं इसके बारे में अज्ञान के कारण उनके जीवन की दशा उनके लिए मानवीय होती जा रही है केवल जन सामान्य के लिए ही नहीं एक समस्या है बल्कि भिखारी के लिए भी यह एक समस्या है क्योंकि उनके बच्चे भी एक अनैतिक पर्यावरण में पढ़ते हैं यह ऐसा निष्कृष्ट कोटी का पर्यावरण होता है जिसमें में उनको शिक्षार्णन करने का सुखद पर्यावरण प्राप्त नहीं हो पता है इस पर्यावरण में केवल अकर्मव्यता, बुरी संगत, विपथागमनात्मक एवं बाल आपराधिक प्रवृत्तियों का संवर्धन एवं विकास होता है उपर्युक्त समीकरण में बाल भिक्षा–वृत्ति एक गंभीर एवं जटिल समस्या दृष्टिगोचर होती है जिसका अत्यंत सावधानीपूर्वक वैज्ञानिक अध्ययन करना अति आवश्यक प्रतीत होता है।

कुमार अप्पा द्वारा संपादित अपनी पुस्तक अवर बेगर प्रॉब्लम (Aur Beggar Problem) संभवत प्रथम पुस्तक है जो विषय पर विस्तृत रूप से प्रकाश डालते हैं उनके अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भिक्षुकों की समस्याओं की झलक तो इस पुस्तक में अवश्य मिलती है तथापि यह अनुभाविक अध्ययन पर आधारित न होकर भीख मांगने की अधिकांशतः वर्णनात्मक एवं प्रक्कल्पनात्मक वक्तव्यों पर आधारित है प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन उतरांत इस संदर्भ में कतिपय अनुभाविक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण अयंगर, गोरे, मूर्ति, जॉर्ज आदि द्वारा प्रतिपादित किए गए हैं जिसमें सामान्यतः वर्षों की जनसंख्या का आकलन विभिन्न श्रेणियां में उनका वर्गीकरण भीख मांगने के कारणों भिक्षुओं की आर्थिक स्थिति का मूल्यांकन भिक्षावृत्ति एवं पुनर्वास के प्रति उनकी अभिवृत्तियां और भीख मांगने को अंतर्विष्ट किया गया है।

माखन झा ने तीर्थ स्थानिक नगर भुवनेश्वर के भिखारी का अध्ययन करने का प्रयास किया है झा के अध्ययन में भिक्षावृत्ति की उत्पत्ति एवं विकास भिक्षुकों की सामान्य विशेषताएं एवं प्रकृति को प्रोत्साहित करने वाले सामाजिक कारक, भिक्षकों का आर्थिक जीवन, भिक्षकों के सामाजिक जीवन विशेषीकारण कोढ़ियों के संदर्भ में भिक्षुक एवं अन्य सामाजिक बुराइयां भिक्षुक एवं समाज आदि से संबंधित तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं किंतु विषय की गहराई में जाने का प्रयास नहीं किया गया है पुनः इस शोध में भिक्षाववृत्ति की उत्पत्ति एवं विकास पर भी सम्यक रूप से प्रकाश नहीं डाला गया है।

शेखर तथा चार्ल्स न्यूटन ने अपने अध्ययनों में भिखारीयों के संगठनों का उल्लेख किया है जो इनके लिए विवाह एवं अन्य उत्सवों का आयोजन करते हैं तथा वह भिक्षा को अनुचित नहीं समझते हैं।

उपर्युक्त शोध समीक्षा से स्पष्ट होता है कि अपने देश में बाल भिक्षुकों से सीधा संबंध रखने वाले अध्ययन का पूर्णतया अभाव है तथा इस समस्या के निराकरण हेतु सरकारी एवं गैर सरकारी प्रयासों की अती महती आवश्यकता प्रतीत होती है।

बाल भिक्षुकों की सामाजिक स्थिति–'बाल भिक्षुक' यानी भीख मांगने वाले बच्चों की सामाजिक स्थिति भारतीय समाज का एक अत्यंत संवेदनशील और चिंताजनक पहलू है। यह समस्या केवल गरीबी तक सीमित नहीं है, बल्कि यह बच्चों के अधिकारों के हनन और सामाजिक विफलता का एक गहरा संकेत है।

यहाँ बाल भिक्षुकों की सामाजिक स्थिति के प्रमुख पहलुओं का विश्लेषण दिया गया है।

1. सामाजिक बहिष्कार और पहचान का संकट

समाज अक्सर इन बच्चों को उपेक्षा या दया की दृष्टि से देखता है, लेकिन उन्हें 'मुख्यधारा' का हिस्सा नहीं मानता।

अदृश्य नागरिक–इनके पास अक्सर जन्म प्रमाण पत्र या आधार कार्ड जैसे दस्तावेज नहीं होते, जिससे सरकारी योजनाओं का लाभ उठाना इनके लिए असंभव हो जाता है।

कलंक (Stigma)–भीख मांगने के कारण इन बच्चों को 'चोर' या 'अवांछनीय' मान लिया जाता है, जिससे समाज में उनके प्रति सम्मान कम हो जाता है।

2. शिक्षा और भविष्य का अभाव

शिक्षा सामाजिक स्थिति सुधारने का सबसे बड़ा जरिया है, जिससे ये बच्चे पूरी तरह वंचित रहते हैं।

अशिक्षा का चक्र – स्कूल न जाने के कारण वे कौशल विकास नहीं कर पाते और वयस्क होने पर भी मजदूरी या अपराध की ओर धकेले जाते हैं।

बौद्धिक विकास में कमी–निरंतर असुरक्षा और भूख उनके मानसिक विकास को प्रभावित करती है।

3. शोषण और असुरक्षा

बाल भिक्षुकों की स्थिति असुरक्षित होने के कारण वे विभिन्न प्रकार के शोषण का शिकार होते हैं–

भिक्षावृत्ति माफिया–कई मामलों में बच्चे स्वतंत्र नहीं होते, बल्कि संगठित गिरोहों द्वारा संचालित होते हैं।

शारीरिक और यौन शोषण–सड़कों पर रहने के कारण वे हिंसा और दुर्व्यवहार के प्रति सबसे अधिक संवेदनशील होते हैं।

नशे की लत – अकेलेपन और भूख के अहसास को कम करने के लिए ये बच्चे अक्सर डेंड्राइट, थिनर या अन्य नशीले पदार्थों के जाल में फंस जाते हैं।

4. स्वास्थ्य की दयनीय स्थिति

गंदगी और कुपोषण इनके जीवन का स्थाई हिस्सा बन जाते हैं।

कुपोषण – संतुलित आहार न मिलने से इनका शारीरिक विकास रुक जाता है।

बीमारियां – सड़क के प्रदूषण और टीकाकरण के अभाव में वे गंभीर बीमारियों के घेरे में रहते हैं।

5. संवैधानिक स्थिति और कानून

भारतीय संविधान और कानून इनके संरक्षण की बात तो करते हैं, लेकिन धरातल पर क्रियान्वयन चुनौतीपूर्ण है–

अनुच्छेद 24–कारखानों या खतरनाक कामों में बाल श्रम पर रोक लगाता है।

बाल न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 – यह कानून इन बच्चों को "देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चों" के रूप में परिभाषित करता है।

बाल भिक्षुकों की आर्थिक स्थिति– बाल भिक्षुकों की आर्थिक स्थिति उनके जीवन का सबसे दुखद और जटिल पहलू है। यह केवल 'पैसे की कमी' नहीं है, बल्कि एक ऐसा चक्र है जिसमें बच्चा एक बार फंस जाए तो निकलना लगभग असंभव होता है।

यहाँ बाल भिक्षुकों की आर्थिक स्थिति के विभिन्न पहलुओं का विवरण दिया गया है–

1. आय का अस्थिर स्रोत

इन बच्चों की आय पूरी तरह से लोगों की दया और दान पर निर्भर करती है।

दैनिक अनिश्चितता–किसी दिन उन्हें 100–200 रुपये मिल जाते हैं, तो किसी दिन खाली पेट सोना पड़ता है। त्योहारों या विशेष अवसरों पर इनकी आय बढ़ जाती है, लेकिन यह कभी भी स्थाई नहीं होती।

आय का वितरण – अक्सर बच्चा जो कमाता है, वह उसके पास नहीं रहता। यह पैसा या तो उसके माता–पिता (जो अक्सर खुद बेरोजगार या नशे के आदी होते हैं) ले लेते हैं, या फिर उस 'गैंग लीडर' के पास जाता है जो उनसे भीख मंगवाता है।

2. ऋण और शोषण का दुष्चक्र

बाल भिक्षुक और उनके परिवार अक्सर गहरे कर्ज में डूबे होते हैं।

ब्याज का जाल – आपातकालीन स्थिति (जैसे बीमारी) में ये लोग स्थानीय साहूकारों से ऊंचे ब्याज पर पैसा लेते हैं। इस कर्ज को चुकाने के लिए बच्चों को भीख मांगने के काम में और तेजी से झोंक दिया जाता है।

आर्थिक दासता – कई मामलों में बच्चे 'बंधुआ' की तरह काम करते हैं, जहाँ उनकी कमाई का बड़ा हिस्सा पुराने कर्ज की भरपाई में चला जाता है।

3. भविष्य की पूंजी (Assets) का अभाव

आर्थिक मजबूती के लिए संपत्ति या बचत जरूरी है, जिसका इनके पास नामो–निशान नहीं होता।

बैंक खातों की अनुपस्थिति – पहचान पत्र न होने के कारण इनका कोई बैंक खाता नहीं होता। उनकी पूरी 'संपत्ति'वह फुटपाथ या झुग्गी होती है जहाँ वे रहते हैं।

मानव पूंजी (Human Capital) का शून्य मूल्य – अर्थशास्त्र में शिक्षा और स्वास्थ्य को 'मानव पूंजी' माना जाता है। चूंकि इन बच्चों के पास न शिक्षा है और न ही अच्छा स्वास्थ्य, भविष्य में उनकी आर्थिक उत्पादकता शून्य के बराबर रह जाती है।

4. संगठित भिक्षावृत्ति का अर्थशास्त्र

यह एक कड़वा सच है कि भिक्षावृत्ति एक बड़ा अवैध व्यापार बन चुका है।

कमीशन मॉडल – कई शहरों में 'भिखारी माफिया' सक्रिय हैं। वे बच्चों को विशिष्ट स्थानों (जैसे ट्रैफिक सिग्नल, मंदिर, पर्यटन स्थल) पर तैनात करते हैं और बदले में उनकी कमाई का 70–80% हिस्सा खुद रख लेते हैं।

निवेश और लागत– गिरोह इन बच्चों के रहने और खाने पर न्यूनतम खर्च करते हैं ताकि उनका लाभ (Profit) अधिकतम हो सके।

5. सरकारी वित्तीय सहायता तक पहुँच की कमी

गरीबों के लिए बनी योजनाएं (जैसे राशन कार्ड, सब्सिडी, या नकद हस्तांतरण) इन बच्चों तक नहीं पहुँच पातीं।

दस्तावेजों की बाधा– बिना पते के सबूत और जन्म प्रमाण पत्र के, ये बच्चे कागजी तौर पर 'अस्तित्वहीन' होते हैं, जिससे सरकारी खजाने का पैसा उन तक नहीं पहुँच पाता।

उपर्युक्त विश्लेषणों से यह स्पष्ट होता है कि समाज में भिक्षावृत्ति की समस्या बहुत तेजी से बढ़ रही है जो एक प्रमुख समस्या तौर पर दिखाई दे रही है जिसके परिणामस्वरूप देश के भविष्य भिक्षावृत्ति में लिप्त होते जा रहे है तथा देश के भविष्य अर्थात बाल भिक्षुकों की सामाजिक व आर्थिक स्थिति अति निम्न स्तर की पायी जा रही है।

निष्कर्ष– यद्यपि हमारे देश में भिक्षावृत्ति की समस्या के समाधान के लिए अब तक कई प्रयास किए गए हैं भारत सरकार ने विधानतः भीख मांगना एक अपराध माना है और भीख मांगने वालों के लिए दंड का विधान भी प्रस्तुत किया है परंतु केंद्रीय एवं राज्य सरकारों तथा कुछ स्थानीय निकायों ने भिक्षुकों के कल्याण एवं पुनर्वास हेतु कार्यगृहों, सुधारगृहों, स्वागतगृहों कार्य शिविरों एवं दरिद्र गृहों की स्थापना भी की है कई राज्यों में भिखारी के लिए कार्य शिविर (wark home) का भी आयोजन किया है जहां उन्हें 6 महीने कार्य करना होता है और उन्हें श्रम के द्वारा जीवन यापन करना बताया जाता है इस सब सुविधाओं के बावजूद भी विशेष रूप से बाल भिक्षुकों के कल्याण अर्थ व सुधार अर्थ केंद्रीय सरकार एवं राज्य सरकारों द्वारा तथा स्थानीय निकायों द्वारा कोई भी महत्वपूर्ण व्यवस्था नहीं की गई है यदि उनकी समुचित ढंग से देखभाल और उपचार किया जाए तो उनसे भिक्षावृत्ति छुड़ाने और उन्हें सम्मान पूर्वक जीवन बिताने का ढंग सीखना आसान होगा। भिक्षावृत्ति के नियंत्रण संबंधित समस्त विश्व व्यापी सफलता के मूल्यांकन से संबंधित शोध अध्ययनों से ज्ञात हुआ है की समस्या के निवारण के नियंत्रण के लिए जो प्रभाव उत्पादक योजनाएं क्रियान्वित की जा सकती हैं उनको चलाने के लिए बड़े आर्थिक साधनों, समय, लगन तथा परिश्रम की आवश्यकता है सही बात तो यह है कि आज तक हमारे पास पर्याप्त साधनों का भी अभाव है इसी तत्व को ध्यान में रखते हुए हम यह कह सकते हैं कि बाल भिक्षावृत्ति नियंत्रण के कार्यक्रमों के बारे में हमारा उसे समय तक कुछ सोचा ही व्यर्थ है जब तक हमें यह आभास ना हो जाए कि हमें पर्याप्त आर्थिक साधन उपलब्ध होंगे उचित संख्या में प्रशिक्षित

कार्य करता मिल जाएंगे जनता का अधिकतम सहयोग प्राप्त होगा तथा अपने कार्यक्रमों को चलाने के लिए हमें वह सभी सुविधाएं केंद्र सरकार राज्य सरकार और स्थानीय निकाय तथा समाज एवं समुदाय से प्राप्त हो सकेगी जिनकी आवश्यकता हमें समय–समय पर पड़ती रहेगी। अतः स्पष्ट होता है कि देश के समस्त समाजों में बाल भिक्षुकों को सामाजिक–आर्थिक स्थिति निम्न पायी जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

- Mukherjee R.K.1945, Causes of Beggary in Our Beggar Problems, p-20 Edited by j. m. Kumarappa
- Bahadur, S 1945, kidnapping of children for the purpose of Begging, in seminar on social Defence, p.53
- Vidyarathi Ramanarayan, Asvolayana Grhya sutra, 1/22/7-8, with the comm. of Gargyanarayana, Calcutta.
- Shekhar, 1968, Begging, A Profitable Preffession in social welfare, p.10.
- Charl Newton, 1960, Begger menace in Calcutta, in social welfare.
- Masani, R. P. 1956, Role of wealth in society, Bombay, the popular books dept.p.81
- Srivastava, Shankar, sahai, 1963, Juvenile Vagrancy, Ashia publishing House, Bombay.
- Underhill, M. N. 1921, The Hindu Religious year, oxford university press, London.
- Council for social development, New Delhi, estimates of cost benefit relation in beggar home's.1967

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

विरोध प्रदर्शन ,हिंसक संघर्ष और सत्ता परिवर्तन में सोशल मीडिया

कमला यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर- समाजशास्त्र विभाग
राजकीय महिला महाविद्यालय सलेमपुर देवरिया

सारांश
अभिव्यक्ति की आजादी और राजनैतिक चुनाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के साथ ही सोशल मीडिया ने दुनिया भर में युद्ध के मैदान और तख्ता पलट की प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। ट्यूनीशिया की जैस्मिन रेवोल्यूशन से आरम्भ हुई अरब स्प्रिंग जिसमें ट्यूनीशिया,मिस्र, लीबिया,यमन और सीरिया में तख्ता पलट ,रूस यूक्रेन युद्ध और इस्राइल और हमास के बीच हिंसक संघर्ष और राजनैतिक घटना क्रमों में सोशल मीडिया की प्रमुख भूमिका भूमिका रही है। टूयूनिसिया के राष्ट्रपति बेन अली के खिलाफ विरोध प्रदर्शन ,मिस्र के होसनी मुबारक के खिलाफ तहरीर स्क्वायर का विरोध प्रदर्शन तथा यमन मे विरोध प्रदर्शन मे खासतौर पर सोशल मीडिया की प्रमुख भूमिका रही। सोशल मीडिया के माध्यम से ही प्रदर्शन को संगठित किया गया। प्रस्तुत अध्ययन में विरोध प्रदर्शन, हिंसक संघर्ष और अंततः तख्ता पलट की प्रक्रियाओं में सोशल मीडिया की भूमिका का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया हैं।

मुख्य शब्द- तख्तापलट, आंदोलन, हिंसक संघर्ष, सोशल मीडिया, जनमत, संचार तकनीकी।

प्रस्तावना

नवीन तकनीकी हमेशा मौजूद व्यवस्था को चुनौती देती है उसे अस्थिर करती है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक सत्ता के लिए संघर्ष होता रहा है, किसी न किसी रूप में तकनीकी संघर्ष से दौरान निर्णायक भूमिका निभाती रही है। जिनके पास बेहतर तकनीकी थी, संघर्ष में हमेशा उनको निर्णायक बढ़त मिलती रही है, मंगोलों की घुड़सवारी और तीरंदाजी की बेहतर तकनीकी ने उनको अपने विरोधियों से ताकतवर बना दिया वे मध्य एशिया और यूरोप में विजेता बने, ब्रिटिश बंदूकों का सामना मुगल नहीं कर सके सत्ता गवांई। युद्ध, व्यापार और सत्ता संघर्ष में सूचना और संचार तकनीकी की अहम भूमिका रही है यह एक स्थापित तथ्य है सोशल मीडिया तकनीकी का ही ऐसा स्वरुप है जो जीवन के हर क्षेत्र चाहे वह राजनीति हो युद्ध का मैदान हो राजनैतिक चुनाव हों सभी को प्रभावित कर रही है। राजनैतिक गोलबंदी,धरना प्रदर्शन, विरोध प्रदर्शन में सोशल मीडिया प्रभावशाली प्लेटफार्म की तरह काम कर रहा हैं। 1988 से 1991तक मास्को में मौजूद रहे बाल्टीमोर सन (Baltimore Sun) समाचार पत्र के पत्रकार स्काट सेन (Scott Shane) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक Dismantling Utopia: How Information Ended the Soviet Union, में सूचनाओं की ताक़त के बारे में लिखा है कि सोवियत यूनियन का पतन का कारण बम या टैक नहीं थे बल्कि दशकों से दबी सूचनाओं के बाहर आने से निकले Fact and Opinion थे (Morozov 201164).

''युद्ध अब केवल युद्ध के मैदान में सिर्फ हथियारों से ही नहीं लड़ा जा रहा है बल्कि युद्ध का एक नया मैदान सामने आया है जिसे सोशल मीडिया कहते हैं। सोशल मीडिया युद्ध का एक ऐसा मैदान बन चुका है जहां युद्ध सूचनाओं वीडियो और तस्वीरों के माध्यम से लड़ा जा रहा है और वह अनेक अवसरों पर मैदान में लड़े जा रहे हथियारों के युद्ध से भी खतरनाक और प्रभावशाली साबित हो रहा जो अपने पक्ष मे जनमत तैयार कर लेता है उसे अपने विरोधी पर एक मनोवैज्ञानिक बढ़त मिल जाती है। अनेक मौके पर युद्ध के मैदान में सेनाओ के कमांडर और उनके प्रवक्ता झूठे दावे करते हैं और भ्रमित करने वाली सूचनाओं भी सोशल मीडिया और टेलीविजन के माध्यम से जानबूझकर के प्रसारित करते हैं ताकि अपने पक्ष में जनमत तैयार किया जा सके और विरोधियों पर मानसिक बढ़त बनाई जा सके, चाहे रूस यूक्रेन युद्ध हो या फिर फिलिस्तीन इजरायल युद्ध अनेक अवसरों पर सैनिक कमांडर झूठे दावे करते रहे हैं। , युद्ध या हिंसक संघर्ष मे प्रोपोगैंडा हमेशा एक महत्वपूर्ण हथियार के रूप मे इस्तेमाल किया जाता है जहा तक प्रोपोगैंडा फैलाने का प्रश्न है सोशल मीडिया से बेहतर साधन अब तक सामने नही आया है।

इंटरनेट कैमरा और सोशल मीडिया आधारित स्मार्ट फोन अपने आप मे टेलीविजन स्टूडियो बन गया है , स्मार्टफोन ने यूजर के रूप मे प्रत्येक व्यक्ति को पत्रकार/संवाददाता बना दिया है। युद्ध के मैदान से तस्वीरें आसानी से लोगों के पास पहुंच जाती है , युद्ध और हिंसा से जुड़ी तस्वीरों की सोशल मीडिया प्लेटफार्म पर तत्काल मौजूदगी उस घटना के पक्ष और विपक्ष में जनमत को निर्मित कर रहा है। और उस जनमत का दबाव संघर्षरत देशों,समूहों के अलावा उन देशों पर भी पड़ रहा है जो संघर्ष में प्रत्यक्ष रूप से शामिल नहीं है। इसके अनेक प्रत्यक्ष उदाहरण दुनिया भर में मौजूद हैं समाचार पत्रों और टेलीविजन से पहले सोशल मीडिया के माध्यम से खासकर फेसबुक और युटुब के माध्यम से युद्ध ,हिंसक संघर्ष और विरोध प्रदर्शन से जुड़ी तस्वीरें और वीडियोआम लोगों के पास पहुंच जा रहे हैं। इस मामले में सोशल मीडिया ने समाचार पत्रों और टेलीवीजन को बहुत पीछे छोड़ दिया है। युद्ध विरोध प्रदर्शन और संघर्ष के दौरान सोशल मीडिया के इस्तेमाल का एक दूसरा पहलू भी है ,जहां पर खुद विभिन्न देशों की सरकार अनेक मौके पर कुछ तस्वीरेंऔर वीडियो को आम लोगों तक फैलने या लोगों तक पहुंचने से रोकने का भी प्रयास करते हैं सोशल मीडिया पर भी सेंसरशिप के अनेक उदाहरण मौजूद हैं। इसके अलावा अनेक मौके पर अपने पक्ष में जनमत को तैयार करने के लिए सोशल मीडिया पर आभासी झूठे वीडियो और तस्वीरें भी पेश की जाती हैं। जिसकी सत्यता की जांच करना काफी कठिन होता है। अधिकांश अवसरों पर युद्ध या हिंसक संघर्ष के आरंभ से पहले सोशल मीडिया पर हिंसक संघर्ष या युद्ध की अनिवार्यता के पक्ष मे जनमत तैयार किया जाता है ,इसके अलावा सोशल मीडिया के माध्यम से ही विरोध प्रदर्शन के लिए संगठनात्मक ढांचा तैयार किया जाता है। अरब स्प्रिंग के बाद मिस्र मे पुनः तानाशाही ,लीबिया मे गृह युद्ध के अलावा यूक्रेन ,यमन सीरिया के राजनैतिक घटनाक्रमों से कुछ गंभीर सवाल सोशल मीडिया को लेकर उभर है कि " क्या सोशल मीडिया का इस्तेमाल सत्ता परिवर्तन या तख्त पलट के लिए किया गया ,जिसके मूल मे आर्थिक राजनैतिक उद्देश थे ,क्या इसके लिए पहले सोशल मीडिया पर जनमत तैयार किया गया और विरोध प्रदर्शन /आंदोलन खड़ा किया गया ताकि सैन्य हस्तक्षेप के बिना ही सत्ता परिवर्तित कर दिया जाए या आभासी जनमत के माध्यम से सैन्य हस्तक्षेप को उचित और आवश्यक ठहराया जा सके,क्या सोशल मीडिया का इस्तेमाल अस्थिरता पैदा करने के लिए किया गया,इन सभी प्रश्नों का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

अरब स्प्रिंग में सोशल मीडिया

जुलाई 2010 में चीन की सरकार का सबसे बेहतरीन शोध संस्थान Chinese Academy of Social Sciences ने इंटरनेट के राजनैतिक प्रभाव के बारे में अपनी विस्तृत रिपोर्ट में दावा किया था कि सोशल नेटवर्किंग साईट राज्य की सुरक्षा के दृष्टिकोण से एक बड़ा खतरा है, क्योंकि संयुक्ति राज्य अमेरिका और पश्चिमी देश सोशल नेटवर्किंग साइट का उपयोग करके अन्य देशों में अस्थिरता पैदा करने की कोशिश कर रहे हैं(Morozov,2011, 41)ट्यूनीशिया की जैस्मिन क्रांति से अरब स्प्रिंग की शुरुआत मानी जाती है जहां राष्ट्रपति अली बेन के खिलाफ प्रदर्शन हुए इसके बाद मिस्र में होस्नी मुबारक के खिलाफ तहरीर स्क्वायर में बृहद प्रदर्शन , लीबिया मे मुनऔवर गद्दाफ़ी

के खिलाफ हिंसक संघर्ष , बहरीन की राजधानी साना में राजशाही के खिलाफ प्रदर्शन तथा सीरिया में राष्ट्रपति बशर अल असद के खिलाफ प्रदर्शन हुए जिसे अरब स्प्रिंग कहा गया, ट्यूनीशिया के एक छोटे से कस्बे के एक सब्जी विक्रेता युवक के सब्जी के ठेले को पुलिस द्वारा जब्त किए जाने के कारण युवक ने आत्महत्या कर ली। आत्म हत्या की तस्वीरों को आम लोगों ने सोशल मीडिया पर डाला जिसकी सोशल मीडिया पर तीव्र प्रतिक्रिया हुई और एक आंदोलन की पृष्ठभूमि तैयार हो गई। अब सवाल उठता है कि यदि सोशल मीडिया नहीं होता तो क्या उस घटना पर इतनी तेज प्रतिक्रिया संभव थी। यदि सोशल मीडिया नहीं होता तो इस बात की प्रबल संभावना थी कि ट्यूनिशिया की सरकार खबर को छापने वाले समाचार पत्रों और टेलीविजन से उस घटना से जुड़ी तस्वीरों, विडियो और खबर को ही हटवा देती या सेंसर कर देती। जैसा कि बाद में कुछ अन्य देशो ने इस घटना से सीख लिया और सोशल मीडिया पर राज्य के खिलाफ होने वाले विरोध प्रदर्शन और लेख को सोशल मीडिया से हटवा देने में सफलता प्राप्त की ,उदाहरण के तौर पर चीन और इरान ने सरकार के खिलाफ लिखे जाने वाले लेख और वीडियो को सेंसर करने में सफलता प्राप्त की थी । लेकिन सोशल मीडिया के दौर में हर व्यक्ति पत्रकार की भूमिका में आ जाता है और ट्यूनिशिया की सरकार उस घटना की वीडियो और तस्वीरों को रोक नहीं पाई।,वही होसनी मुबारक ने तहरीर स्क्वायर मे प्रदर्शनकारियों के खिलाफ पुलिस बल का प्रयोग किया लेकिन सेना तटस्थ बनी रही। दूसरी तरफ प्रदर्शनकारी सोशल मीडिया के माध्यम से विरोध प्रदर्शन और पुलिस अत्याचार की तस्वीरों और वीडियो को सोशल मीडिया के माध्यम से पूरी दुनिया भर मे लोगों के पास पहुचाने और अपने पक्ष मे जनमत तैयार करने मे सफल रहे।

ट्यूनीशिया की जैस्मिन क्रांति और सोसल मीडिया

ट्यूनिशिया की जैस्मिन क्रांति जिससे अरब स्प्रिंग का आरंभ हुआ क्या यह स्वत स्फूर्त थी या पहले किसी अन्य देश द्वारा प्रायोजित थी दोनों पक्षों के विश्लेषण के अधार पर ही सोशल मीडिया की वास्तविक भूमिका का आकलन किया जा सकता हैं। 2010 में प्लेग की वजह से रूस में गेहूं के उत्पादन में कमी हुई इसका सबसे ज्यादा असर पश्चिमी अफ्रीका के देशों पर पड़ा पश्चिमी अफ्रीका के देश ट्यूनीशिया में ब्रेड की कीमतों में वृद्धि हुई जिसका आम लोगों मे असंतोष को पैदा किया (Prasad 2012,7-9).

17 दिसंबर 2010 को Mohamed Bouazizi, नामक सब्जी विक्रेता युवक ने उसके सब्जी के ठेले को पुलिस द्वारा जब्त कर लिए जाने से दुखी होकर युवक द्वारा सार्वजानिक रुप से आग लगाकर आत्मदाह की कोशिश गई बाद में जलने के कारण 4 जनवरी 2011 को उसकी मृत्यु हो गई। आत्मदाह की उसकी तस्वीरें और वीडियो आम लोगों द्वारा फेसबुक और सोशल मीडिया प्लेटफार्म पर पोस्ट कर दी गईं इस घटना ने असंतोष को विरोध प्रदर्शन मे बदल दिया लोग विरोध के लिए सड़क पर निकल आए। घटना के इस चरण तक पूर्व प्रयोजन के कोई साक्ष्य मौजूद नहीं है, तस्वीरों को किसी आम व्यक्ति द्वारा पोस्ट किया जाना और आम लोगों द्वारा उस प्रतिक्रिया देना पूरी तरह से स्वतः स्फूर्त दिखाई देता है जैसे ही यह घटनाक्रम आगे बढ़ता है उसमें अन्य देशों और समूहों के प्रवेश और हस्तक्षेप के साक्ष्य दिखाई देते हैं। राष्ट्रपति जेन अल अबीडीन बेन अली (Zein el-Abidine Ben Ali,) को अमेरिका समेत आई एम एफ (IMF) और विश्व बैंक जैसी संस्थाओं का समर्थन भी प्राप्त था क्योंकि उन्होंने IMF और अन्य संस्थाओं की नीतियों को देश में लागू भी किया था, लेकिन गेहूं की क़ीमत में वृद्धि से उपजी मंहगाई और प्रशासनिक और आर्थिक भ्रष्टाचार में राष्ट्रपति बेन अली के करीबियों के शामिल होने के कारण आम लोगों में असंतोष व्याप्त था . लेकिन 17 दिसंबर 2010, को 24 वर्षीय Mohamed Bouazizi की आत्मदाह की घटना ने पहले विरोध प्रदर्शन को जन्म दिया,24 दिसंबर को पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर गोली चलाई तथा दो लोग मारे गए इसी बीच 4 जनवरी 2011 कोMohamed Bouazizi की अस्पताल में मृत्यु हो गईं इसके बाद 8 से 12 जनवरी के तीव्र विरोध प्रदर्शन पर पुलिस द्वारा गोली चलाई गई और 22 लोग मारे गए 12 जनवरी को प्रदर्शनकारियों ने राष्ट्रपति के इस्तीफे के मांग की तथा 14 जनवरी 2011 को राष्ट्रपति Zein el-Abidine Ben Ali, देश छोड़कर चले गए सऊदी अरब के जेद्दा में शरण ली(Masri 2017,38).

आंदोलनकारियों की ट्यूनिशिया के सैन्य बलों के साथ झड़पे होने प्रदर्शन के हिंसक होने के बावजूद आंदोलन आगे बढ़ा, किसी भी आंदोलन या विरोध प्रदर्शन के लगातार टीके रहने के लिए संगठन और आर्थिक संसाधनों की जरूरत होती अब यहां यह सवाल उठता है कि वो कौन लोग थे जो विरोध प्रदर्शन और आंदोलन को संगठित कर रहे थे और आर्थिक रुप से मदद कर रहे थे और वे ऐसा क्यों कर रहे थे क्या इसके पीछे उनका कोई बड़ा उद्देश्य था ,क्योंकि अंततः तख्ता पलट हो गया। विरोध प्रदर्शन/आंदोलन के लगातार चलने के लिए जरूरी मूलभूत साधन और सुविधा जैसे लोगों के पीने के पानी, खाद्य सामग्री,शौचालय, आराम करने के लिए टेंट की जरूरत होती है जिसके लिए कुछ संगठित प्रतिबद्ध लोगों की जरूरत होती हैं इस दृष्टिकोण से देखे तो पूरे अरब स्प्रिंग जिसे नेतृत्व विहीन क्रान्ति कहा जाता है यह एक अधूरा सच है। वास्तव में विशेष हितों राजनैतिक हितों से प्रेरित लोग, गैर सरकारी संगठन मूलतः विरोध प्रदर्शन का पर्दे के पीछे से संगठन और नेतृत्व संभाल रहे थे, Ksiaa Ossema(2022,24) के अपने शोध Tunisia and Arab spring: The exception or The Norms के मुताबिक ट्यूनीशिया की जैस्मीन रिवॉल्यूशन में सिविल सोसाइटी ऑर्गेनाइजेशन और पश्चिम से जुड़े गैर सरकारी संगठनो की महत्वपूर्ण भूमिका थी इन्होंने ही आंदोलन को पोषित और संचालित किया, इन संगठनों के प्रयासों के बिना आम ट्यूनीशियन विरोध के इस हद तक नहीं जाते जिससे तख्ता पलट हो जाय। 23 साल से सत्ता में मौजूद राष्ट्रपति के द्वारा सिर्फ 28 दिनों के विरोध प्रदर्शन के पश्चात देश छोड़ देना इस बात का संकेत देता है कि सत्ता के केंद्रीय स्तर पर राष्ट्रपति के करीबियों में ही विवाद था और राष्ट्रपति खुद अपने आप को कमजोर महसूस कर रहे थे। राष्ट्रपति बेन अली के ट्यूनीशिया छोड़ देने के बाद इलेक्शन हुआ तथा दिसंबर 2011 मे हमादी जेबाली (Hamadi Jebali) प्रधानमंत्री तथा मोंसेफ़ मारजोकी (Moncef Marzouki) राष्ट्रपति बनाए गए लेकिन इसके बाद कुछ अप्रत्याशित घटनाए हुई एक प्रमुख विपक्षी वामपंथी पार्टी के प्रमुख नेता चोकरी विलेड (Chokri Belaid)की 6 फ़रवरी 2013 को हत्या कर दी गई इसके बाद 25जुलाई 2013 को Mouvement du peuple, के संस्थापक सोशलिस्ट नेता मोहम्मद ब्राहमी (Mohamed Brahmi) की भी हत्या कर दी गई (Masri 2017,38). विपक्षी नेताओ की हत्या दर्शाती हैं कि आंदोलन और विरोध प्रदर्शन लोकतंत्र के लिए नहीं बल्कि सत्ता परिवर्तन के लिए हुआ था जिसके लिए सोशल मीडिया पर विरोध प्रदर्शन को हवा दी गई।

होस्नी मुबारक का तख्ता पलट और सोशल मीडिया

मिस्र के शहर Cairo में स्थित तहरीर स्क्वायर पर सिर्फ 18 दिनों का विरोध प्रदर्शन(25जनवरी से 2011से फ़रवरी 2011)और राष्ट्रपति होस्नी मुबारक ने प्रदर्शनकारियों के सामने समर्पण कर दिया 11 फ़रवरी को इस्तीफा दे दिया(Lynch 2016,66-68). मिस्र के पास अफ्रीकी अरब देशों में सबसे मजबूत सेना थी और है। मुबारक ने प्रदर्शनकारियों के खिलाफ सेना का इस्तेमाल नहीं किया बशर्ते दंगा नियंत्रक पुलिस ने गोलियां चलाई(Lynch 2016,87,88).और इसी बीच मुबारक ने राजधानी को छोड़ दिया अगर उन्होंने प्रदर्शनकारियों के सामने सेना का इस्तेमाल नहीं किया तो फिर क्रूर तानाशाह कैसे थे जैसा कि सोशल मीडिया और पश्चिम के समाचार चैनलों पर दिखाया गया। प्रदर्शन के दौरान राष्ट्रपति हुस्नी मुबारक को एक तानाशाह बताया गया। (Lynch 2016) के मुताबिक अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने अपने आधिकारिक बयान में कहा कि होस्नी मुबारक को प्रदर्शनकारियो के खिलाफ बल प्रयोग नहीं करना चाहिए, फ्रांस समेत यूरोप के अनेक देश भी इसी पक्ष में थे। मुबारक के सत्ता छोड़ने के बाद चुनाव हुए और मुस्लिम ब्रदरहुड के मोहम्मद मुर्सी राष्ट्रपति चुने गए लेकिन इसके बाद सेना के जनरल फतह अलसीसी ने मोहम्मद मुर्सी का तख्ता पलट कर दिया और हजारों पत्रकारों को जेल में डाल दिया जो एक खुद तानाशाह है। फतेह अलसीसी अब राष्ट्रपति बन चुके और इन्होंने अपने खिलाफ होने वाले विरोध प्रदर्शन को पूरी तरह से कुचल दिया है, अब इनको यूरोप और अमेरिका दोनों का समर्थन प्राप्त है विरोध प्रदर्शन का खत्म हो जाना और फतह अल सीसी को मान्यता दे देना इस बात का संकेत करता है पश्चिम और यूरोपीय देश सत्ता परिवर्तन चाहते थे। सोशल मीडिया के

माध्यम से आंदोलन को खड़ा किया गया और मुबारक को हटने के लिए मजबूर किया गया क्योंकि मुबारक के खिलाफ हो रहे प्रदर्शनों में सेना तटस्थ बनी रही और बाद में सेना के ही जनरल फतह अल सीसी ने सत्ता पर कब्जा कर लिया।

Tufekei(2017,145) के मुताबिक मिस्र मे मुबारक की सत्ता के खिलाफ विरोध प्रदर्शन मे इंटरनेट ट्वीटर और फेसबूक की महत्वपूर्ण भूमिका थी लेकिन क्रांति मे सोशल मीडिया तकनीकी और लोगों दोनों की अहम भूमिका थी ,आग जलाने के लिए जलने योग्य सामग्री ,ऑक्सीजन और माचिस या आग तीनों की जरूरत है ,किसी भी एक की अनुपस्थिति मे आग नहीं जल सकती, लोगों का संगठित प्रयास भी उतना ही महत्वपूर्ण था जितना कि सोशल मीडिया। ,खालिद सईद की मिस्र की पुलिस द्वारा पिटाई और हत्या और "We All are Khalid Said" नाम से फेसबूक पेज के माध्यम से प्रदर्शन कारियों ने व्यापक वैश्विक समर्थन प्राप्त किया (Tufekei.2017 167)। होसनी मुबारक के खिलाफ प्रदर्शनकारियों ने पूरे आंदोलन को संचालित करने के लिए सोशल मीडिया प्लेटफार्म खासकर फेसबुक को एक मंच की तरह इस्तेमाल किया , आज हालात यह है कि भूतपूर्व जनरल और राष्ट्रपति फतेह अलसी ने मिस्र में मीडिया को लगभग कुचल दिया है दुनिया भर में सबसे अधिक पत्रकारों को मिस्र ने ही जेल में डाल रखा है।

लीबिया के मुनव्वर गद्दाफी का तख्ता पलट और सोशल मीडिया

लीबिया के कर्नल मुनव्वर गद्दाफी के तख्ता पलट के माध्यम से ही सत्ता में आए थे उन्होंने पश्चिम समर्थित किंग इदरीस का तख्ता पलट किया था जब इदरीश तुर्की के अस्पताल में इलाज कर रहे थे तो गद्दाफी हिंसक बलप्रयोग के माध्यम से 1969 मे सत्ता पर कब्जा कर लिया(prasad 2012 ,67)। उन्होंने तेल जैसे संसाधन को सरकारी नियंत्रण मे कर लिया था विदेशी तेल कंपनियों से वसूली जाने वाली रायल्टी मे बृद्धि कर दिया था(prasad 2012 ,700) .लीबिया. में मुनौआर गद्दाफ़ी के खिलाफ अरब स्प्रिंग की हवा से उपजे उपजे विरोध प्रदर्शन और हिंसक संघर्ष को सोशल मीडिया,और कतर के प्रसिद्ध अंतर्राष्ट्रीय टीवी चैनल द्वारा खूब दिखाया गया गद्दाफ़ी द्वारा विद्रोहियों के दमन जो खुद हथियार बंद समूह था की आलोचना की गईं तथा गद्दाफी के द्वारा विद्रोहियो के खिलाफ कार्यवाही को सोशल मीडिया और अल जजीरा चैनल ने खूब बढ़ा चढ़ा कर दिखाया गया विद्रोहियों के पक्ष मे टीवी और सोशल मीडिया पर जनमत तैयार किया गया विद्रोहियों के पक्ष मे नाटो के हस्तक्षेप की वकालत की इस दौरान अनेक लोग जैसे लीबिया द्वारा चाड के खिलाफ लीबिया की सेना का नेतृत्व करने वाले गद्दाफी के सैनिक जनरल खलीफा हफ्तार ने खुद गद्दाफी का साथ छोड़ दिया। संयुक्त राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र द्वारा रेजोल्यूशन के माध्यम से नाटो ने लीबिया में हस्तक्षेप किया। नाटो सेनाओ ने लीबिया के अनेक शहरों पर बम गिराये, गद्दाफी विद्रोहियों के हाथों मारे गए और आज लीबिया गृह युद्ध से जूझ रहा है। भूमध्य सागर के किनारे की स्थिति और अच्छी गुणवत्ता के कारण लीबिया के खनिज तेल की यूरोप के लिए बहुत अहमियत थी (prasad 2012,70) और लीबिया के खनिज तेल की अंतरराष्ट्रीय राजनीति ने गद्दाफी को खत्म किया।

यमन का हिंसक संघर्ष और सोशल मीडिया

यमन में पहले सोशल मीडिया पर उस समय सत्ताधारी सरकार के खिलाफ अभियान चलाया गया फिर जमीन पर राजधानी "साना" में विरोध प्रदर्शन हुए सत्ता में परिवर्तन हो गया विरोध प्रदर्शन और सत्ता परिवर्तन में प्रमुख भूमिका निभाने वाली एक नेता Tawakkol Karman को 2012 में शांति के लिए नोबेल पुरस्कार दिया गया (Lynch 2016,70),सत्ता परिवर्तन के बाद से आज भी यमन गृह युद्ध से जूझ रहा है प्रदर्शनकारी अब कही नही हैं Tawakkol Karman को शांति के लिए नोबेल पुरस्कार के लिए चुना जाना अपने आप में सत्ता परिवर्तन में पश्चिमी देशों की भूमिका की धारणा को मजबूती प्रदान करता है और इसके लिए सोशल मीडिया का इस्तेमाल आंदोलन खड़ा करने के लिए पश्चिमी देशों द्वारा किया गया ये आंदोलन सोशल मीडिया का स्वतः स्फूर्त आंदोलन न होकर पूर्व प्रायोजित था।

रूस यूक्रेन हिंसक संघर्ष और सोशल मीडिया

21सदी में राजनीति को सोशल मीडिया से अलग करके नहीं देखा जा सकता, युद्ध और राजनीति में हमेशा से घनिष्ठ संबंध रहे है युद्ध और हिंसक संघर्ष पर विस्तार से लिखने वाले जर्मन विद्वान Carl von Clauswitz ने अपनी प्रसिद्ध कृति On War में कहा था कि "युद्ध राजनीतिक होता हैं तथा हिंसक संघर्ष के केंद्र मे हमेशा राजनीति होती हैं" (Singer & Booking 2018,22).

यूक्रेन द्वारा नाटो में शामिल होने और यूरोप के साथ घनिष्ठ संबंध स्थापित करने का प्रयास और रूस द्वारा इसका विरोध के पीछे की राजनीति ने दोनों देशों को हिंसक संघर्ष में झोंक दिया लेकिन युद्ध वस्तुतः युद्ध भूमि में लड़े जाने से पहले टेलीविजन और सोशल मीडिया पर लड़ा गया ,जहा एक तरफ सैन्य हस्तक्षेप की पहल रूस की तरफ से की गई लेकिन सोशल मीडिया पर लड़ाई की पहल यूक्रेन द्वारा की गई। नवंबर 2013 मे सबसे पहले यूक्रेन के राष्ट्रपति विक्टर यानुकोविच (Victor Yanukovych) के खिलाफ सड़क पर विरोध प्रदर्शन आरंभ हुआ ,राष्ट्रपति यानुकोविच यूक्रेन और युरोपियन यूनियन के साथ व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर नहीं करना चाहते थे जबकि प्रदर्शनकारी समझौता चाहते थे, फरवरी 2014 मे राष्ट्रपति विक्टर यानुकोविच देश छोड़कर रूस भाग गए (Patrikarkos 2017,11)। यह विरोध प्रदर्शन यूरोमैदान रेवलूशन नाम से जाना जाता है देश छोड़ते ही यूक्रेन मे गृह युद्ध आरंभ हो गया सरकार के पक्ष और विपक्ष दोनों ओर से प्रदर्शन होने लगे। रूस ने स्थिति का फायदा उठाया और मार्च 2014 मे सैन्य कार्यवाही के माध्यम से क्रिमिया पर कब्जा कर लिया इससे उत्साहित होकर पूर्वी यूक्रेन मे अलगाव वादियों ने रूसी सेना के सहयोग से पूर्वी यूक्रेन के डोनेतस्क और अनेक शहरों पर कब्जा कर लिया(Patrikarkos 2017,12)। दोनों पक्ष पूर्वी यूक्रेन मे लोगों का सहयोह चाहते थे ,अतः सोशल मीडिया पर अपने पक्ष मे जनमत तैयार करने के लिए प्रोपोगैंडा फैलाया गया। यह फिर एक गंभीर प्रश्न यह था कि यूरोमैदान के प्रदर्शनकारियों को कैन समर्थन दे रहा था ,विक्टर यानुकोविच कोई तानाशाह नहीं थे उन पर क्रेमलिन के नजदीकी होने के आरोप थे ,यानुकोविच को हटाने के लिए सोशल मीडिया पर आंदोलन खड़ा किया गया इसके बाद जमीन पर विरोध प्रदर्शन हुए और एक तरह का तख्त पलट किया गया।

सोशल मीडिया पर दोनों तरफ से विरोधी को दोषी ठहराया गया,यूक्रेन का पक्ष था कि वह अपनी नीति तय करने के लिए स्वतंत्र है जबकि रूस का आरोप था कि यूक्रेन नाटो सेनाओ को रुस की किसीमा पर तैनात करना चाहता है। सोसल मिडिया पर रूस की तरफ से इस बात को बढा चढा कर प्रस्तुत किया गया कि युक्रेन डोनेस्क और क्रिमिया में रूसी भाषा बोलने वाले रूसी मूलके लोगो पर अत्याचार कर रहा है। युद्ध के मैदान मे इंटरनेट और मोबाईल फोन के इस्तेमाल का सबसे हैरान कर देने वाला उदाहरण रूस यूक्रेन युद्ध मे सामने आया जब रूसी मिलिट्री इंटेलिजेंस ने सीमा पर मौजूद यूक्रेन के सैनिकों के मोबाईल फोन के सिग्नल से उनकी सटीक स्थिति (location)का पता लगाकर हमले लिए(Singer &Brooking 2018.) ,इसके अलावा युद्ध के दौरान 17 जुलाई 2014 को नीदरलैंड से मलेसिया जा रहे बोइंग 777 का यात्री विमान की फ्लाइट MH17 जिसमे 298 लोग सवार थे फ्लाइट के दौरान पूर्वी यूक्रेन मे उसे मिसाइल से मार गिराया गया,रूस और यूक्रेन दोनों देशों ने इनकार किया लेंकिन नीदरलैंड के वायु दुर्घटना जांच कर्ताओ ने उस इलाके मे मौजूद मोबाईल फोन से जुड़े सोशल मीडिया अकाउंट और इंटेनेट की गहन जांच पड़ताल के बाद सटीक तौर पर उन 20 रूसी सैनिकों की यूनिट की पहचान करने मे कामयाब रहे जिन्होंने मिसाइल फायर किया था((Singer &Brooking 2018. 74)। हालाकि रूस ने इस आरोप को खारिज कर दिया।

निष्कर्ष

अरब स्प्रिंग मे ट्यूनिसिया की जैस्मिन रेवलूशन ,मिस्र के होसनी मुबारक के खिलाफ तहरीर स्कावायर का विरोध प्रदर्शन और तख्ता पलट ,यूक्रेन मे विक्टर यानुकोविच के खिलाफ विरोध प्रदर्शन और तख्ता पलट के बाद रूस यूक्रेन युद्ध तथा लीबिया मे गद्दाफ़ी की हत्या बाद गृह युद्ध और अराजकता की स्थिति इन सभी घटनाओ मे वर्तमान सत्ताधारी के खिलाफ पहले सोशल मीडिया पर कहानियों, वीडियो ,तस्वीरों के माध्यम जनमत तैयार किया गया। फिर जमीन पर आंदोलन खड़ा किया गया सभी आंदोलन मे

आंदोलन कारी लोकतंत्र की स्थापना के दावे कर रहे थे लेकिन और सत्ता मे परिवर्तन के बाद सभी आंदोलन खत्म हो गए। मिस्र में एक तानाशाही सरकार आ गई सेना के जनरल फतह अल सीसी ने सत्ता पर कब्जा कर लिया जो खुद एक तानाशाह है। जबकि लीबिया मे गद्दाफ़ी के समय स्थिरता थी उनके बाद आज भी लीबिया मे गृह युद्ध चल रहा है। यूक्रेन रूस मे युद्ध जारी है यूक्रेन बर्बाद हो चुका है लाखों लोग अब तक मारे जा चुके हैं, सभी जगह सत्ता परिवर्तन के बाद अचानक अंदोलन और अंदोलनकारी गायब हो गए यह एक तथ्य है। इस तथ्य से से इस विचार को बल मिलता हैं कि सत्ता परिवर्तन के उद्देश्य से अंदोलनकारियों की मदद की गई ,आंदोलन को हवा दी गई और सत्ता परिवर्तन होते ही आंदोलन को मदद बंद कर दी गई आंदोलन खत्म कर दिया गया। जब अंदोलनकारी मिस्र के होसनी मुबारक से छुटकारा पाना चाहते तो उन्होंने फिर उन्होंने एक दूसरे तानाशाह सैनिक जनरल फतह अल सीसी के विरुद्ध आंदोलन को जारी क्यों नहीं रखा। यूक्रेन मे भी लोग मारे जा रहे हैं लेकिन कोई अन्दोलन नहीं है। ,यमन मे भी गृह युद्ध जारी है अब वहा लोक तंत्र का नाम लेने वाला कोई नहीं हैं।

जहा एक तरफ यमन मे प्रदर्शनकारियों को सोशल मीडिया और बड़े टीवी चैनल ,समाचार पत्रों का समर्थन मिला और सता परिवर्तन हो गया दूसरी तरफ बहरीन में राजशाही के खिलाफ हो रहे विरोध प्रदर्शन को बहरीन सरकार द्वारा हिंसक दमन किए जाने का प्रसारण Aljazira न्यूज ने नहीं किया (Lynch 2016 87) बहरीन में राजशाही के खिलाफ प्रदर्शन कर रहे लोगों को सोशल मीडिया में लोकप्रियता क्यों नहीं मिली उनको पर्याप्त समर्थन क्यों नहीं मिला इस सवाल का जवाब जटिल नहीं है, बहरीन की राजशाही को पश्चिमी देशों खास कर अमेरिका का मजबूत समर्थन प्राप्त था बहरीन की जमीन पर अमेरिका के सैन्य अड्डे हैं बहरीन में अमेरिकी हस्तक्षेप की मौजूदगी है। वहां अमेरिका सत्ता में बदलाव नहीं चाहता था बल्कि राजशाही को बनाए रखना चाह रहा था यही कारण है कि सोशल मीडिया पर बहरीन सरकार के खिलाफ आरंभ में ही उठने वाली आवाजों को दबा दिया गया। इन घटनाओ से से यही निष्कर्ष निकलता है कि सत्ता मे परिवर्तन मुख्य उद्देश्य था। सोशल मीडिया पर पहले एक मुद्दा खोजा जाता है या बनाया जाता है फिर उसके पक्ष या विपक्ष मे कहानियो ,वीडियो को निर्मित किया जाता है। साक्षात्कार किए जाते है और एक आभासी जनमत तैयार किया जाता है, और फिर जमीन पर आंदोलन को खड़ा किया जाता है उसको आर्थिक मदद दी जाती है और जरूरत पड़ने पर सैन्य हस्तक्षेप भी किया जाता है ताकि सत्ता मे परिवर्तन लाया जा सके। 21 सदी मे सोशल मीडिया सत्ता परिवर्तन के लिए इस्तेमाल की जाने वाले एक महावपूर्ण ताकतवर तकनीकी के रूप मे सामने आई है।

References-

1. Lynch M(2016)The New Arab Wars: Uprising and Anarchy in the Middle East
2. Patrikarakos D(2017):War in 140 characters : how social media is reshaping conflict in the twenty-first century .Basic Books, New York :
3. Tufekei.Z(2017) Twitter and Tear Gas: The power and fragility of networked protest Yale University Press
4. Singer.P.W.&Booking.E.T.(2018) Like war: Weaponization of social media An Eamon Dolan Books Bostan New York
5. Morozov E. (2011) The Net Delusion: Dark side of internet Freedom Public Affair Books New York
6. Fosshagen.K.(2014) *Arab Spring: Uprisings, Powers, Interventions,* Berghahn Books New York
7. Prasad,V.(2012):*Arab Spring ,Libyan Winter* ,Ak press Publishing Distribution Baltimore, Edinburg

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.11, N. 23, December 2025
*DOI: **10.13140/RG.2.2.27586.44488***
www.jsecrjournal.in

शिक्षक–शिक्षा क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) का उपयोग एवं चुनौतियाँ

डॉ. सरोज कुमार राही
असि. प्रोफेसर– बी.एड्
डॉ .राजेश्वर सेवाश्रम महाविद्यालय ढिंढुई , प्रतापगढ़।
संबद्ध–प्रो.राजेंद्र सिंह रज्जू भैया विश्वविद्यालय प्रयागराज (उ. प्र.)

सारांश –

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence – AI) आधुनिक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की अत्यंत महत्वपूर्ण उपलब्धि है, जिसने मानव जीवन के विविध क्षेत्रों में व्यापक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। शिक्षा क्षेत्र, विशेषकर शिक्षक–शिक्षा, AI के प्रभाव से तीव्र रूप से परिवर्तित हो रहा है। शिक्षक–शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग शिक्षण प्रक्रियाओं को अधिक प्रभावशाली, वैयक्तिकृत, लचीला तथा डेटा–आधारित बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

AI–आधारित उपकरण शिक्षकों को पाठ योजनाएँ तैयार करने, विद्यार्थियों की शैक्षणिक प्रगति का विश्लेषण करने, व्यक्तिगत अधिगम आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षण सामग्री उपलब्ध कराने तथा मूल्यांकन प्रक्रिया को अधिक सरल एवं सटीक बनाने में सहायता प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, प्रशासनिक कार्यों के स्वचालन से शिक्षकों के समय और श्रम की बचत होती है, जिससे वे शिक्षण की गुणवत्ता सुधारने पर अधिक ध्यान केंद्रित कर सकते हैं। यद्यपि कृत्रिम बुद्धिमत्ता अनेक शैक्षणिक लाभ प्रदान करती है, तथापि इसके उपयोग से संबंधित कई चुनौतियाँ भी विद्यमान हैं। तकनीकी अवसंरचना की कमी, डिजिटल विभाजन, डेटा गोपनीयता एवं सुरक्षा संबंधी जोखिम, नैतिक चिंताएँ, शिक्षकों में तकनीकी दक्षता का अभाव तथा शिक्षण प्रक्रिया में मानवीय संवेदनशीलता के संभावित ह्रास जैसे कारक इसके प्रभावी कार्यान्वयन में बाधाएँ उत्पन्न करते हैं।

यह शोध–पत्र शिक्षक–शिक्षा के संदर्भ में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के विविध उपयोगों, उससे प्राप्त होने वाले शैक्षणिक लाभों, व्यावहारिक अनुप्रयोगों, सीमाओं, नैतिक आयामों तथा भविष्य की संभावनाओं का समग्र एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

कुंजीभूत शब्द– कृत्रिम बुद्धिमत्ता, शिक्षक–शिक्षा, शैक्षिक प्रौद्योगिकी, वैयक्तिकृत अधिगम, डिजिटल शिक्षा, स्मार्ट शिक्षण प्रणाली, मशीन अधिगम, स्वचालित मूल्यांकन, ई–शिक्षा, आभासी शिक्षण वातावरण।

21वीं सदी को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के तीव्र विकास का काल माना जाता है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विस्तार ने शिक्षा प्रणाली की संरचना और कार्यप्रणाली में व्यापक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। पारंपरिक शिक्षण विधियाँ अब धीरे–धीरे डिजिटल माध्यमों पर आधारित आधुनिक शिक्षण पद्धतियों में परिवर्तित हो रही हैं। इस परिवर्तनशील परिदृश्य में कृत्रिम बुद्धिमत्ता एक महत्वपूर्ण प्रेरक शक्ति के रूप में उभरकर सामने आई है, जो शिक्षा के स्वरूप और गुणवत्ता दोनों को प्रभावित कर रही है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता ऐसी उन्नत तकनीक है जिसके माध्यम से यंत्रों और कंप्यूटर प्रणालियों को इस प्रकार विकसित किया जाता है कि वे मानवीय बुद्धि के समान चिंतन, विश्लेषण, समस्या–समाधान तथा निर्णय लेने में सक्षम हो सकें। शिक्षा के क्षेत्र में इसका उपयोग शिक्षण प्रक्रिया को अधिक प्रभावी, सहभागितापूर्ण तथा आकर्षक बनाने के उद्देश्य से किया जा रहा है। साथ ही, यह शिक्षकों के प्रशासनिक और मूल्यांकन संबंधी कार्यों को सरल बनाकर उनके कार्यभार को कम करने में भी सहायक सिद्ध हो रही है।

शिक्षक–शिक्षा एक संगठित प्रशिक्षण प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य भावी शिक्षकों को प्रभावी शिक्षण के लिए आवश्यक ज्ञान, कौशल एवं व्यावसायिक दक्षताओं से सुसज्जित करना है। इसके अंतर्गत शिक्षण–कौशल, विषय–विशेषज्ञता, नैतिक मूल्यों, तकनीकी दक्षता तथा कक्षा–प्रबंधन संबंधी क्षमताओं का विकास किया जाता है। वर्तमान समय में शिक्षक–शिक्षा संस्थानों में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का समावेश शिक्षकों को डिजिटल युग की शैक्षिक आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार करने में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रहा है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का अर्थ–

कृत्रिम बुद्धिमत्ता कंप्यूटर विज्ञान का एक उन्नत एवं बहुआयामी क्षेत्र है, जिसका उद्देश्य ऐसी बुद्धिमान मशीनों और सॉफ्टवेयर प्रणालियों का विकास करना है जो मानवीय बुद्धि के समान कार्य करने में सक्षम हों। यह तकनीक कंप्यूटर प्रणालियों को सीखने, अनुभव से ज्ञान अर्जित करने, तर्क करने, समस्याओं का समाधान खोजने तथा परिस्थितियों के अनुरूप निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करती है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता के अंतर्गत मशीनों को इस प्रकार प्रोग्राम किया जाता है कि वे जटिल सूचनाओं का विश्लेषण कर सकें, पैटर्न पहचान सकें तथा उपलब्ध डेटा के आधार पर तार्किक निष्कर्ष निकाल सकें। इसके अतिरिक्त, यह तकनीक मानव भाषा को समझने, संवाद स्थापित करने तथा दृश्य सूचनाओं को पहचानने में भी सक्षम बनाती है। इस प्रकार कृत्रिम बुद्धिमत्ता मानव और मशीन के मध्य अंतःक्रिया को अधिक प्रभावी और स्वाभाविक बनाती है।

सरल शब्दों में कहा जाए तो कृत्रिम बुद्धिमत्ता वह तकनीकी प्रणाली है जो मशीनों को मानव की तरह सोचने, समझने, सीखने और निर्णय लेने योग्य बनाती है, जिससे वे जटिल कार्यों को स्वतः संपन्न कर सकें।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के प्रमुख घटक–

कृत्रिम बुद्धिमत्ता विभिन्न तकनीकों और उपक्षेत्रों का समन्वित स्वरूप है। इसके प्रमुख घटक निम्नलिखित हैं:

1. मशीन अधिगम – यह कृत्रिम बुद्धिमत्ता का महत्वपूर्ण भाग है, जिसके अंतर्गत कंप्यूटर प्रणालियाँ बिना स्पष्ट निर्देशों के डेटा से स्वयं सीखने की क्षमता विकसित करती हैं। मशीन अधिगम एल्गोरिदम पिछले अनुभवों और पैटर्न के आधार पर भविष्यवाणियाँ करने में सक्षम होते हैं।

2 –गहन अधिगम – यह मशीन अधिगम की उन्नत शाखा है, जिसमें कृत्रिम तंत्रिका जाल (।तजपपिबपंस छमनतंस छमजूवतो) का उपयोग किया जाता है। गहन अधिगम जटिल डेटा संरचनाओं को समझने, छवियों की पहचान करने, भाषण को समझने तथा उन्नत विश्लेषण करने में अत्यंत प्रभावी होता है।

3– प्राकृतिक भाषा संसाधन – इस तकनीक के माध्यम से कंप्यूटर मानव भाषा को समझने, विश्लेषित करने और संवाद स्थापित करने में सक्षम होते हैं। यह भाषण पहचान, अनुवाद, पाठ विश्लेषण तथा चौटबॉट जैसे अनुप्रयोगों में उपयोगी है।

4– कंप्यूटर दृष्टि – कंप्यूटर दृष्टि तकनीक मशीनों को दृश्य सूचनाओं जैसे चित्रों और वीडियो को पहचानने, विश्लेषित करने तथा उनसे अर्थ निकालने में सक्षम बनाती है। इसका उपयोग चेहरे की पहचान, चिकित्सा निदान तथा सुरक्षा प्रणालियों में किया जाता है।

5. विशेषज्ञ प्रणाली – विशेषज्ञ प्रणाली ऐसी बुद्धिमान कंप्यूटर प्रणालियाँ होती हैं जो किसी विशेष क्षेत्र के मानव विशेषज्ञ की निर्णय क्षमता का अनुकरण करती हैं। ये प्रणालियाँ जटिल समस्याओं के समाधान हेतु ज्ञान–आधारित डेटाबेस का उपयोग करती हैं।

6. रोबोटिक्स– रोबोटिक्स के अंतर्गत बुद्धिमान मशीनों का निर्माण किया जाता है जो स्वचालित रूप से कार्य करने में सक्षम होती हैं। इन रोबोटों में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग उन्हें वातावरण को समझने, निर्णय लेने और कार्यों को कुशलतापूर्वक संपन्न करने योग्य बनाता है

शिक्षक–शिक्षा का अर्थ–

शिक्षक–शिक्षा एक सुव्यवस्थित एवं योजनाबद्ध प्रशिक्षण प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य शिक्षकों को प्रभावी एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षण के लिए आवश्यक ज्ञान, कौशल और व्यावसायिक दक्षताओं से सुसज्जित करना है। यह प्रक्रिया शिक्षकों को केवल विषय–वस्तु का ज्ञान ही नहीं प्रदान करती, बल्कि उन्हें शिक्षण की उपयुक्त विधियों, छात्र–व्यवहार की समझ, शिक्षण–सामग्री के प्रभावी उपयोग तथा कक्षा–परिस्थितियों के सफल प्रबंधन के लिए भी तैयार करती है।

शिक्षक–शिक्षा के अंतर्गत भावी शिक्षकों के व्यक्तित्व का समग्र विकास किया जाता है, जिससे वे शिक्षण कार्य को अधिक प्रभावशाली, व्यवस्थित और छात्र–केंद्रित बना सकें। यह शिक्षकों को बदलते शैक्षिक परिवेश, नई शिक्षण तकनीकों तथा आधुनिक शैक्षिक आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को ढालने में सक्षम बनाती है।

शिक्षक–शिक्षा के उद्देश्य–

शिक्षक–शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य शिक्षकों को शिक्षण कार्य के विभिन्न आयामों में दक्ष बनाना है। इसके प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैंरू

1. शिक्षण कौशल का विकास – शिक्षकों को प्रभावी शिक्षण विधियों, प्रस्तुतीकरण कौशल, संवाद शैली तथा विद्यार्थियों की सहभागिता बढ़ाने की तकनीकों में दक्ष बनाना।

2. विषय–ज्ञान की वृद्धि– शिक्षकों को उनके संबंधित विषयों में गहन एवं अद्यतन ज्ञान प्रदान करना, ताकि वे विद्यार्थियों को स्पष्ट, सटीक और व्यवस्थित जानकारी दे सकें।

3. कक्षा–प्रबंधन दक्षता का विकास– शिक्षकों को कक्षा में अनुशासन बनाए रखने, समय का उचित प्रबंधन करने तथा सकारात्मक शिक्षण वातावरण निर्मित करने के लिए प्रशिक्षित करना।

4. विद्यार्थियों की मनोवैज्ञानिक समझ विकसित करना– शिक्षकों को विद्यार्थियों की आयु, रुचि, क्षमता, आवश्यकताओं और व्यवहारिक विविधताओं को समझने योग्य बनाना, जिससे वे छात्र–केंद्रित शिक्षण अपना सकें।

5. नैतिक एवं व्यावसायिक मूल्यों का विकास– शिक्षकों में उत्तरदायित्व, अनुशासन, निष्पक्षता, सहानुभूति तथा समर्पण जैसे गुणों का विकास करना, जिससे वे आदर्श शिक्षक की भूमिका निभा सकें।

6. तकनीकी दक्षता का विकास – शिक्षकों को आधुनिक शैक्षिक तकनीकों, डिजिटल उपकरणों तथा ई–लर्निंग संसाधनों के प्रभावी उपयोग के लिए सक्षम बनाना।

शिक्षक–शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता की आवश्यकता–

आधुनिक शिक्षा प्रणाली निरंतर परिवर्तनशील होती जा रही है, जिसमें विविधता, जटिलता तथा प्रतिस्पर्धा का स्तर निरंतर बढ़ रहा है। वर्तमान शैक्षिक परिवेश में विद्यार्थियों की सीखने की गति, बौद्धिक क्षमता, रुचियाँ, सामाजिक पृष्ठभूमि तथा अधिगम आवश्यकताएँ एक–दूसरे से भिन्न होती हैं। ऐसी स्थिति में पारंपरिक शिक्षण पद्धतियाँ सभी विद्यार्थियों की आवश्यकताओं को समान रूप से पूरा करने में पूर्णतः सक्षम नहीं हो पातीं। परिणामस्वरूप शिक्षण प्रक्रिया की प्रभावशीलता प्रभावित होती है।

इसी संदर्भ में कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षक–शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण सहायक तकनीक के रूप में उभरकर सामने आई है। यह शिक्षण और प्रशिक्षण प्रक्रियाओं को अधिक व्यवस्थित, प्रभावी तथा छात्र–केंद्रित बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता के समावेश से शिक्षकों को आधुनिक शिक्षण आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार किया जा सकता है।

शिक्षक–शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से विशेष रूप से अनुभव की जा रही हैरू

1. वैयक्तिकृत अधिगम की सुविधा– कृत्रिम बुद्धिमत्ता विद्यार्थियों की व्यक्तिगत सीखने की गति, क्षमता और रुचि के अनुसार शिक्षण सामग्री उपलब्ध कराने में सहायक होती है। इससे शिक्षण प्रक्रिया अधिक प्रभावी और छात्र–केंद्रित बनती है।

2. शिक्षकों के कार्यभार में कमी – AI आधारित उपकरण मूल्यांकन, उपस्थिति प्रबंधन, अभिलेख संधारण तथा अन्य प्रशासनिक कार्यों को स्वचालित बनाते हैं, जिससे शिक्षकों को शिक्षण कार्य पर अधिक ध्यान देने का अवसर मिलता है।

3. डेटा–आधारित शिक्षण रणनीतियों का निर्माण– कृत्रिम बुद्धिमत्ता विद्यार्थियों के प्रदर्शन, प्रगति और अधिगम पैटर्न का विश्लेषण करके शिक्षकों को प्रभावी शिक्षण योजनाएँ बनाने में सहायता प्रदान करती है।

4. ऑनलाइन एवं दूरस्थ शिक्षा की प्रभावशीलता– AI तकनीक वर्चुअल कक्षाओं, डिजिटल प्लेटफॉर्म और ई–लर्निंग प्रणालियों को अधिक इंटरैक्टिव, सुलभ और परिणामोन्मुख बनाती है।

5. शिक्षण में नवीनता और रोचकता का समावेश– कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित उपकरण शिक्षण को अधिक आकर्षक, संवादात्मक और तकनीक–सम्मत बनाते हैं, जिससे विद्यार्थियों की सीखने में रुचि बढ़ती है।

शिक्षक–शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग़

1 वैयक्तिकृत अधिगम – कृत्रिम बुद्धिमत्ता विद्यार्थियों की व्यक्तिगत सीखने की गति, बौद्धिक स्तर, रुचियों तथा आवश्यकताओं का विश्लेषण करके उनके अनुरूप शिक्षण सामग्री उपलब्ध कराने में सक्षम होती है। इससे शिक्षण प्रक्रिया अधिक छात्र–केंद्रित बनती है। शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भावी शिक्षकों को यह सिखाया जाता है कि वे विभिन्न क्षमताओं वाले विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त शिक्षण विधियों का चयन और प्रयोग कैसे करें।

2 स्मार्ट शिक्षण–सामग्री का निर्माण– कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधुनिक डिजिटल शिक्षण सामग्री तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके माध्यम से डिजिटल पुस्तकें, संवादात्मक नोट्स, ऑडियो–वीडियो व्याख्यान, एनीमेशन तथा सिमुलेशन जैसी सामग्री विकसित की जा सकती है। शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों में प्रशिक्षुओं को तकनीक–सम्मत एवं आकर्षक शिक्षण सामग्री निर्माण की विधियाँ सिखाई जाती हैं।

3 स्वचालित मूल्यांकन प्रणाली– कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित सॉफ्टवेयर परीक्षा उत्तर–पुस्तिकाओं का मूल्यांकन, वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की जाँच तथा विद्यार्थियों की शैक्षणिक प्रगति का विश्लेषण करने में सक्षम होते हैं। इससे मूल्यांकन प्रक्रिया अधिक त्वरित, निष्पक्ष और सटीक बनती है। परिणामस्वरूप शिक्षकों के समय और श्रम की बचत होती है।

4 आभासी शिक्षण सहायक– कृत्रिम बुद्धिमत्ता से संचालित आभासी सहायक या चौटबॉट विद्यार्थियों के प्रश्नों का समाधान करने, पाठ्यवस्तु को स्पष्ट करने तथा अतिरिक्त मार्गदर्शन प्रदान करने में सहायक होते हैं। ये प्रणालियाँ शिक्षकों की अनुपस्थिति में भी विद्यार्थियों को शैक्षणिक सहायता उपलब्ध कराती हैं। शिक्षक–शिक्षा कार्यक्रमों में इन उपकरणों के प्रभावी उपयोग का प्रशिक्षण दिया जाता है।

5– पाठ योजना निर्माण में सहयोग –कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षकों को पाठ योजनाएँ तैयार करने में सहायता प्रदान करती है। यह विषय–वस्तु के अनुसार शिक्षण उद्देश्यों, उपयुक्त शिक्षण विधियों, गतिविधि–आधारित अधिगम प्रक्रियाओं तथा मूल्यांकन तकनीकों के सुझाव प्रदान करती है। इससे शिक्षण अधिक व्यवस्थित और उद्देश्यपूर्ण बनता है।

6 कक्षा–प्रबंधन में सहायक– कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित प्रणालियाँ कक्षा में विद्यार्थियों की उपस्थिति, सहभागिता स्तर तथा व्यवहार संबंधी पैटर्न का विश्लेषण कर सकती हैं। इससे शिक्षकों को कक्षा अनुशासन बनाए रखने तथा शिक्षण वातावरण को अधिक प्रभावी बनाने में सहायता मिलती है।

7 विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए समर्थन– कृत्रिम बुद्धिमत्ता विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होती है। दृष्टिबाधित, श्रवणबाधित अथवा अधिगम कठिनाइयों से जूझ रहे विद्यार्थियों के लिए विशेष सॉफ्टवेयर, वॉइस असिस्टेंट, टेक्स्ट–टू–स्पीच प्रणाली तथा सहायक उपकरण विकसित किए गए हैं, जो उनके अधिगम को सुगम बनाते हैं।

8 शिक्षक प्रदर्शन विश्लेषण– कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षकों के शिक्षण कौशल, प्रस्तुतीकरण शैली, समय प्रबंधन, विद्यार्थियों की सहभागिता तथा शिक्षण प्रभावशीलता का विश्लेषण करने में सक्षम है। इसके माध्यम से शिक्षकों को उनकी कमियों एवं सुधार की संभावनाओं से अवगत कराया जा सकता है, जिससे शिक्षण गुणवत्ता में निरंतर सुधार संभव होता है।

शिक्षक–शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के लाभ–

1 समय की बचत – कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित प्रणालियाँ अनेक शैक्षणिक एवं प्रशासनिक कार्यों को स्वचालित कर देती हैं। उपस्थिति अंकन, परीक्षा परिणाम तैयार करना, अभिलेख प्रबंधन तथा रिपोर्ट निर्माण जैसे कार्य कम समय में संपन्न हो जाते हैं। इससे शिक्षकों को अतिरिक्त समय प्राप्त होता है, जिसे वे शिक्षण की गुणवत्ता सुधारने में लगा सकते हैं।

2 शिक्षण की गुणवत्ता में सुधार – कृत्रिम बुद्धिमत्ता डेटा विश्लेषण की सहायता से विद्यार्थियों के अधिगम स्तर, प्रगति तथा कठिनाइयों का आकलन करती है। इन विश्लेषणों के आधार पर शिक्षण विधियों में आवश्यक सुधार किए जा सकते हैं। परिणामस्वरूप शिक्षण प्रक्रिया अधिक प्रभावी, व्यवस्थित और परिणामोन्मुख बनती है।

3 वैयक्तिकृत प्रशिक्षण की सुविधा– कृत्रिम बुद्धिमत्ता प्रत्येक प्रशिक्षु शिक्षक की क्षमता, सीखने की गति और आवश्यकताओं का विश्लेषण कर उसके अनुरूप प्रशिक्षण प्रदान करने में सहायक होती है। इससे प्रशिक्षण प्रक्रिया अधिक व्यक्तिगत और प्रभावी बनती है तथा सभी प्रशिक्षुओं को समान रूप से सीखने का अवसर मिलता है।

4 त्वरित प्रतिपुष्टि (फीडबैक) की उपलब्धता– कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षण एवं प्रशिक्षण के दौरान की गई त्रुटियों का शीघ्र विश्लेषण कर तुरंत सुधार संबंधी सुझाव प्रदान करती है। इससे प्रशिक्षु शिक्षकों को अपनी कमियों को समझने और उन्हें दूर करने का अवसर मिलता है, जिससे उनके कौशल में निरंतर सुधार होता है।

5 डिजिटल दक्षता में वृद्धि – कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग से शिक्षक आधुनिक डिजिटल उपकरणों, ई–लर्निंग प्लेटफॉर्म तथा तकनीक–सम्मत शिक्षण विधियों से परिचित होते हैं। इससे उनकी तकनीकी समझ विकसित होती है और वे डिजिटल युग की शैक्षिक आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को ढाल पाते हैं।

6 दूरस्थ शिक्षा में सहयोग – कृत्रिम बुद्धिमत्ता ऑनलाइन एवं दूरस्थ शिक्षा को अधिक प्रभावी और सुलभ बनाती है। वर्चुअल कक्षाओं, डिजिटल शिक्षण प्लेटफॉर्म तथा स्वचालित मूल्यांकन प्रणालियों के माध्यम से प्रशिक्षण कार्यक्रमों का संचालन सरल हो जाता है। इससे भौगोलिक सीमाओं के बावजूद शिक्षकों को गुणवत्तापूर्ण प्रशिक्षण प्राप्त हो सकता है।

7 नवाचार को बढ़ावा – कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षा क्षेत्र में नवीन प्रयोगों और रचनात्मक शिक्षण विधियों को प्रोत्साहित करती है। इसके माध्यम से स्मार्ट कक्षाएँ, आभासी प्रयोगशालाएँ, सिमुलेशन आधारित शिक्षण तथा इंटरैक्टिव अधिगम तकनीकों का विकास संभव होता है। इससे शिक्षक–शिक्षा अधिक आधुनिक, आकर्षक और प्रभावी बनती है।

शिक्षक–शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता की चुनौतियाँ –

कृत्रिम बुद्धिमत्ता जहाँ शिक्षक–शिक्षा के क्षेत्र में अनेक संभावनाएँ प्रस्तुत करती है, वहीं इसके प्रभावी कार्यान्वयन में विभिन्न प्रकार की व्यावहारिक, तकनीकी, सामाजिक एवं नैतिक चुनौतियाँ भी सामने आती हैं। इन चुनौतियों का समाधान किए बिना कृत्रिम बुद्धिमत्ता का व्यापक और संतुलित उपयोग संभव नहीं है। प्रमुख चुनौतियाँ निम्नलिखित हैंरू

1 तकनीकी अवसंरचना की कमी– कृत्रिम बुद्धिमत्ता के सफल उपयोग के लिए सुदृढ़ तकनीकी अवसंरचना आवश्यक होती है। अनेक ग्रामीण तथा पिछड़े क्षेत्रों में उच्च गति इंटरनेट, आधुनिक कंप्यूटर, स्मार्ट उपकरण तथा डिजिटल संसाधनों का अभाव पाया जाता है। ऐसी परिस्थितियों में ।प् आधारित शिक्षण एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों का प्रभावी संचालन कठिन हो जाता है।

2 डिजिटल विभाजन – समाज के सभी वर्गों को समान रूप से डिजिटल सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं। कुछ शिक्षकों और विद्यार्थियों के पास आधुनिक तकनीकी संसाधन उपलब्ध होते हैं, जबकि अन्य इनके अभाव में रहते हैं। यह असमानता शैक्षिक अवसरों में अंतर उत्पन्न करती है, जिससे कृत्रिम बुद्धिमत्ता का लाभ सभी तक समान रूप से नहीं पहुँच पाता।

3 प्रशिक्षण का अभाव – कई शिक्षक कृत्रिम बुद्धिमत्ता से संबंधित तकनीकों और डिजिटल उपकरणों के उपयोग में पूर्णतः दक्ष नहीं होते। पर्याप्त प्रशिक्षण और मार्गदर्शन के अभाव में वे ।प् आधारित प्रणालियों का प्रभावी उपयोग नहीं कर पाते, जिससे इन तकनीकों की उपयोगिता सीमित हो जाती है।

4 डेटा गोपनीयता एवं सुरक्षा संबंधी जोखिम – कृत्रिम बुद्धिमत्ता प्रणालियाँ बड़े पैमाने पर डेटा पर निर्भर करती हैं, जिनमें विद्यार्थियों और शिक्षकों की व्यक्तिगत जानकारी भी शामिल होती है। यदि इन सूचनाओं की सुरक्षा के पर्याप्त उपाय न किए जाएँ, तो डेटा के दुरुपयोग, अनधिकृत पहुँच तथा गोपनीयता भंग होने का खतरा बढ़ सकता है।

5 नैतिक चुनौतियाँ – कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग से कई नैतिक प्रश्न भी उत्पन्न होते हैं।

- शिक्षण प्रक्रिया में मानवीय संवेदनशीलता और भावनात्मक जुड़ाव में कमी आने की आशंका रहती है।
- मशीनों पर अत्यधिक निर्भरता शिक्षकों की स्वायत्तता और निर्णय क्षमता को प्रभावित कर सकती है।
- कुछ AI एल्गोरिदम पक्षपातपूर्ण हो सकते हैं, जिससे निष्पक्षता प्रभावित होती है।

6 रोजगार संबंधी चिंता – कृत्रिम बुद्धिमत्ता के बढ़ते उपयोग से यह आशंका व्यक्त की जाती है कि पारंपरिक शिक्षण भूमिकाओं की आवश्यकता कम हो सकती है। स्वचालित प्रणालियों के कारण कुछ शैक्षणिक कार्यों में मानव संसाधन की भूमिका सीमित होने का भय बना रहता है।

7 उच्च लागत – कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित सॉफ्टवेयर, डिजिटल उपकरण, तकनीकी रखरखाव तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों पर पर्याप्त व्यय करना पड़ता है। सभी शैक्षणिक संस्थानों के लिए इन तकनीकों को अपनाना आर्थिक दृष्टि से संभव नहीं होता।

8 भाषा एवं सांस्कृतिक बाधाएँ – कई कृत्रिम बुद्धिमत्ता उपकरण वैश्विक भाषाओं और सामान्यीकृत शैक्षणिक परिवेश को ध्यान में रखकर विकसित किए जाते हैं। परिणामस्वरूप वे सभी स्थानीय भाषाओं, सांस्कृतिक विविधताओं तथा क्षेत्रीय शैक्षणिक आवश्यकताओं के अनुरूप समान रूप से प्रभावी नहीं हो पाते।

नैतिक एवं सामाजिक प्रभाव –

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का शिक्षा तथा शिक्षक–शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ता उपयोग केवल तकनीकी परिवर्तन तक सीमित नहीं है, बल्कि इसके व्यापक नैतिक और सामाजिक प्रभाव भी देखने को मिलते हैं। यह तकनीक जहाँ शिक्षण प्रक्रिया को आधुनिक और प्रभावी बनाती है, वहीं इससे जुड़े कुछ संवेदनशील प्रश्न भी उभरकर सामने आते हैं। इन प्रभावों को समझना और उनका संतुलित समाधान करना अत्यंत आवश्यक है।

1. मानवीय मूल्यों के ह्रास की आशंका – शिक्षा केवल ज्ञान प्रदान करने की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह मानवीय संवेदनाओं, नैतिक मूल्यों और सामाजिक व्यवहार के विकास से भी जुड़ी होती है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित प्रणालियाँ यद्यपि सूचनाओं का तीव्र विश्लेषण और प्रसंस्करण कर सकती हैं, किन्तु वे मानवीय भावनाओं, सहानुभूति, संवेदनशीलता और सामाजिक संबंधों की गहराई को पूर्णतः समझने में सक्षम नहीं होतीं। अत्यधिक तकनीकी निर्भरता से शिक्षक और विद्यार्थी के बीच मानवीय संवाद में कमी आने की संभावना बनी रहती है।

2. निर्णय प्रक्रिया में पारदर्शिता की कमी – कृत्रिम बुद्धिमत्ता जटिल एल्गोरिदम और डेटा–आधारित प्रक्रियाओं पर कार्य करती है। कई बार इन प्रणालियों द्वारा लिए गए निर्णयों के आधार को स्पष्ट रूप से समझ पाना कठिन होता है। इस पारदर्शिता की कमी के कारण यह जानना चुनौतीपूर्ण हो जाता है कि किसी विशेष परिणाम या सुझाव के पीछे कौन–से कारक उत्तरदायी हैं। शिक्षा जैसे संवेदनशील क्षेत्र में निर्णयों की स्पष्टता और विश्वसनीयता अत्यंत महत्वपूर्ण होती है।

3. उत्तरदायित्व का प्रश्न – कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग से एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि यदि किसी प्रणाली में त्रुटि हो जाए या गलत निर्णय लिया जाए, तो उसके लिए उत्तरदायी कौन होगा। तकनीक विकसित करने वाले, उसका उपयोग करने वाले शिक्षक, अथवा संबंधित संस्थाकृइन सभी की जिम्मेदारियों का निर्धारण करना जटिल हो सकता है। इसलिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग में स्पष्ट उत्तरदायित्व व्यवस्था और नियामक दिशानिर्देशों की आवश्यकता होती है।

शिक्षक–शिक्षा में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के प्रभावी कार्यान्वयन हेतु सुझाव–

शिक्षक–शिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के सफल एवं संतुलित उपयोग के लिए सुनियोजित रणनीतियों और व्यावहारिक उपायों की आवश्यकता होती है। यदि उपयुक्त नीतियों, संसाधनों और प्रशिक्षण व्यवस्थाओं का विकास किया जाए, तो कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षण और प्रशिक्षण की गुणवत्ता को उल्लेखनीय रूप से बढ़ा सकती है। इसके प्रभावी कार्यान्वयन हेतु निम्नलिखित सुझाव महत्वपूर्ण हैंरू

1. **तकनीकी अवसंरचना का सुदृढ़ विकास –**

कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित प्रणालियों के सफल संचालन के लिए उच्च गति इंटरनेट, आधुनिक कंप्यूटर, स्मार्ट उपकरण तथा विश्वसनीय डिजिटल नेटवर्क की उपलब्धता आवश्यक है। विशेष रूप से ग्रामीण एवं दूरस्थ क्षेत्रों में तकनीकी संसाधनों का विस्तार किया जाना चाहिए, ताकि सभी शिक्षण संस्थान समान रूप से इन सुविधाओं का लाभ उठा सकें।

2. **शिक्षकों का नियमित प्रशिक्षण –**

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के प्रभावी उपयोग के लिए शिक्षकों को नवीनतम तकनीकों, डिजिटल उपकरणों तथा AI आधारित शिक्षण प्रणालियों का व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाना आवश्यक है। समय–समय पर कार्यशालाओं, प्रशिक्षण कार्यक्रमों तथा उन्नयन पाठ्यक्रमों का आयोजन शिक्षकों की तकनीकी दक्षता को सुदृढ़ बनाता है।

3. **डेटा सुरक्षा एवं गोपनीयता नियमों का पालन –**

कृत्रिम बुद्धिमत्ता प्रणालियाँ बड़े स्तर पर डेटा का संग्रह और विश्लेषण करती हैं। इसलिए विद्यार्थियों और शिक्षकों की व्यक्तिगत सूचनाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करना अत्यंत आवश्यक है। इसके लिए सुदृढ़ डेटा सुरक्षा नीतियों, गोपनीयता कानूनों तथा सुरक्षित डिजिटल प्रणालियों का पालन किया जाना चाहिए।

4. **नैतिक मानकों का निर्धारण –**

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के उपयोग में पारदर्शिता, निष्पक्षता और उत्तरदायित्व सुनिश्चित करने हेतु स्पष्ट नैतिक दिशानिर्देश बनाए जाने चाहिए। यह आवश्यक है कि तकनीक का उपयोग मानवीय मूल्यों, शैक्षिक उद्देश्यों और सामाजिक हितों के अनुरूप किया जाए।

5. स्थानीय भाषाओं में AI उपकरणों का विकास–

विभिन्न भाषाई और सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों वाले विद्यार्थियों के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित उपकरणों को स्थानीय भाषाओं में विकसित किया जाना चाहिए। इससे शिक्षण प्रक्रिया अधिक सहज, प्रभावी और समावेशी बन सकेगी।

6. सरकार एवं निजी संस्थानों के मध्य सहयोग –

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के व्यापक प्रसार के लिए सरकारी संस्थाओं और निजी संगठनों के बीच समन्वय आवश्यक है। संयुक्त प्रयासों से तकनीकी संसाधनों का विकास, वित्तीय सहायता तथा अनुसंधान को बढ़ावा दिया जा सकता है।

7. डिजिटल साक्षरता कार्यक्रमों का संचालन –

शिक्षकों और विद्यार्थियों दोनों के लिए डिजिटल साक्षरता कार्यक्रमों का आयोजन किया जाना चाहिए, जिससे वे आधुनिक तकनीकों के उपयोग में दक्ष हो सकें। डिजिटल जागरूकता कृत्रिम बुद्धिमत्ता के प्रभावी उपयोग की आधारशिला है।

8. मानव एवं मशीन के संतुलित उपयोग पर बल–

कृत्रिम बुद्धिमत्ता को शिक्षकों का विकल्प न मानकर सहायक उपकरण के रूप में उपयोग किया जाना चाहिए। शिक्षण प्रक्रिया में मानवीय संवेदनशीलता, नैतिकता और संवाद का महत्व बनाए रखते हुए तकनीक और मानव प्रयासों के बीच संतुलन स्थापित करना आवश्यक है।

भविष्य की संभावनाएँ–

कृत्रिम बुद्धिमत्ता निरंतर विकसित होती हुई तकनीक है, जिसके कारण शिक्षक–शिक्षा के क्षेत्र में भविष्य में व्यापक और सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिल सकते हैं। उन्नत डिजिटल संसाधनों तथा नवाचारों के माध्यम से शिक्षण और प्रशिक्षण प्रक्रियाएँ अधिक प्रभावी, संवादात्मक और तकनीक–सम्मत बनेंगी। कृत्रिम बुद्धिमत्ता के विकास से शिक्षक–शिक्षा प्रणाली अधिक आधुनिक, सुलभ और परिणामोन्मुख बनने की संभावना है।

भविष्य में शिक्षक–शिक्षा के क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के निम्नलिखित संभावित प्रभाव देखे जा सकते हैंरू

1. आभासी वास्तविकता आधारित प्रशिक्षण –

आभासी वास्तविकता तकनीक के समावेश से शिक्षक प्रशिक्षण अधिक व्यावहारिक और अनुभवात्मक बनाया जा सकेगा। प्रशिक्षु शिक्षक आभासी कक्षाओं में वास्तविक परिस्थितियों का अनुभव प्राप्त कर सकेंगे, जिससे उनके शिक्षण कौशल और कक्षा–प्रबंधन क्षमता का प्रभावी विकास होगा।

2. भावनात्मक बुद्धिमत्ता युक्त कृत्रिम बुद्धिमत्ता प्रणाली–

भविष्य में ऐसी AI प्रणालियाँ विकसित होने की संभावना है जो विद्यार्थियों की भावनाओं, प्रतिक्रियाओं और व्यवहारिक संकेतों को समझने में सक्षम होंगी। इससे शिक्षण प्रक्रिया अधिक संवेदनशील और छात्र–केंद्रित बन सकेगी।

3. **पूर्णतः स्वचालित मूल्यांकन प्रणाली –**

कृत्रिम बुद्धिमत्ता मूल्यांकन प्रक्रिया को पूर्णतः स्वचालित, त्वरित और निष्पक्ष बनाने में सक्षम होगी। परीक्षाओं के मूल्यांकन, प्रदर्शन विश्लेषण तथा प्रगति रिपोर्ट तैयार करने की प्रक्रिया अधिक सटीक और समयबद्ध हो सकेगी।

4. **शिक्षकों के लिए वैश्विक सहयोग मंच –**

कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित डिजिटल प्लेटफॉर्म विश्वभर के शिक्षकों को एक साझा मंच प्रदान कर सकते हैं, जहाँ वे अपने अनुभव, शिक्षण विधियाँ, संसाधन और नवाचार साझा कर सकेंगे। इससे ज्ञान के आदान–प्रदान को बढ़ावा मिलेगा और शिक्षण गुणवत्ता में सुधार होगा।

5. बहुभाषीय स्मार्ट शिक्षण प्रणाली –

भविष्य में कृत्रिम बुद्धिमत्ता विभिन्न भाषाओं में शिक्षण सामग्री तैयार करने और अनुवाद करने में अधिक सक्षम होगी। इससे विविध भाषाई पृष्ठभूमि वाले विद्यार्थियों के लिए शिक्षा अधिक सुलभ और समावेशी बन सकेगी।

अंततः यह स्पष्ट है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षकों का स्थान लेने के बजाय उनकी कार्यक्षमता, दक्षता और प्रभावशीलता को बढ़ाने का कार्य करेगी। यह तकनीक शिक्षकों के लिए एक सहयोगी उपकरण के रूप में कार्य करेगी, जिससे शिक्षण प्रक्रिया अधिक सशक्त और परिणामकारी बन सकेगी।

निष्कर्ष –

सम्पूर्ण अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षक–शिक्षा के क्षेत्र में एक सशक्त परिवर्तनकारी साधन के रूप में उभर रही है। इसके माध्यम से शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्रक्रियाएँ अधिक प्रभावी, आकर्षक, सुलभ तथा शिक्षार्थी–केंद्रित बन रही हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रमों को अधिक व्यवस्थित एवं परिणामोन्मुख बनाने में सहायक सिद्ध हो रही है। पाठ योजना निर्माण, शिक्षण–सामग्री विकास, अधिगम स्तर के विश्लेषण, मूल्यांकन प्रक्रिया तथा प्रशासनिक कार्यों के स्वचालन में इसकी भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इससे शिक्षकों के कार्यभार में कमी आती है और वे शिक्षण की गुणवत्ता सुधारने हेतु अधिक समय दे पाते हैं।

इसके अतिरिक्त, कृत्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षण प्रणाली में नवाचार, तकनीकी दक्षता तथा वैयक्तिकृत अधिगम को प्रोत्साहित करती है, जिससे शिक्षक–शिक्षा अधिक आधुनिक और प्रभावशाली बनती है।

हालाँकि, इसके प्रभावी क्रियान्वयन में अनेक चुनौतियाँ भी विद्यमान हैं। तकनीकी अवसंरचना की अपर्याप्तता, डिजिटल असमानता, डेटा गोपनीयता संबंधी जोखिम, नैतिक दुविधाएँ, आर्थिक सीमाएँ तथा शिक्षकों के तकनीकी प्रशिक्षण का अभाव प्रमुख बाधाएँ हैं। साथ ही, शिक्षा के मानवीय पक्ष को देखते हुए यह भी आवश्यक है कि तकनीक पर अत्यधिक निर्भरता से मानवीय संवेदनाओं, नैतिक मूल्यों और सामाजिक सहभागिता पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

अतः कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग संतुलित, उत्तरदायी तथा मानव–केंद्रित दृष्टिकोण के साथ किया जाना चाहिए। यदि सुदृढ़ नीतियाँ बनाई जाएँ, शिक्षकों को समुचित प्रशिक्षण दिया जाए, आवश्यक तकनीकी संसाधन उपलब्ध कराए जाएँ तथा स्पष्ट नैतिक मानक निर्धारित किए जाएँ, तो –त्रिम बुद्धिमत्ता शिक्षक–शिक्षा प्रणाली को अधिक सुदृढ़, समावेशी और भविष्य उन्मुख बनाते हुए इसे नई प्रगति की दिशा में अग्रसर कर सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. Russell, Stuart & Norvig, Peter (2010)- Artificial Intelligence: A Modern Approach- New Delhi: Pearson Education-
2. Rich, Elaine & Knight, Kevin (2018)- Artificial Intelligence- New Delhi: McGraw&Hill Education-
3. Kumar, K. L. (2015). शैक्षिक प्रौद्योगिकी के सिद्धांत. मेरठरू आर. लाल बुक डिपो.
4. Monga, S- K- (2010). शैक्षिक प्रौद्योगिकी एवं प्रबंधन. नई दिल्लीरू ए.पी.एच. पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन.
5. Shrivastava, D- N- (2012). शिक्षक शिक्षारू सिद्धांत एवं व्यवहार. आगरारू विनोद पुस्तक मंदिर.
6. Mishra, R- C- (2014). शिक्षा में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी. नई दिल्लीरू ए.पी.एच. पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन.
7. Sharma, R- A- (2016). शैक्षिक प्रौद्योगिकी एवं शिक्षण विधियाँ. मेरठरू आर. लाल बुक डिपो.
8. UNESCO (2019). Artificial Intelligence in Education: Policy Guidance- Paris: UNESCO Publishing
9. NCERT (2022). शिक्षा में डिजिटल प्रौद्योगिकी का एकीकरणरू शिक्षक शिक्षा के संदर्भ में अध्ययन. नई दिल्लीरू एनसीईआरटी.
10. UGC (2021). उच्च शिक्षा में ई–लर्निंग और कृत्रिम बुद्धिमत्ता का प्रभाव. नई दिल्लीरू विश्वविद्यालय अनुदान आयोग.